

पत्रकारिता का काला अध्याय



मनीष ठाकुर

पत्रकारिता
का काला
अध्याय

पत्रकारिता का काला अध्याय

मनीष ठाकुर

KAPOT

First published in India 2021

ISBN: 978-81-929016-5-7

Editorial Legal: Tetra Legal LLP, Delhi
Printed and Bound by Gopsons Papers Ltd., Noida
Operations Management by Saatvik Facility Management Pvt.Ltd.
Typeset by Kapot Media Network LLP
Technical Support Services by RS Media Labs

Published by

क
KAPOT

Kapot Media Network LLP
Digital News, Publication and Content Business
Uttam Nagar, New Delhi
www.kapot.in
Email: contact@kapot.in
8826291284

Printed in India

अनुसूची

आभार

यह पुस्तक उस दौर में लिखी गई जब मैं पत्रकारिता के जीवन में हर दिन संघर्ष कर रहा था। ये वो साल थे जब मुझे आगे-पीछे कुछ दिख नहीं रहा था। नौकरी थी नहीं। स्वतंत्र पत्रकारिता की कमाई से परिवार चलाना मुश्किल था। लेकिन, कहीं-न-कहीं दिमाग में यह था कि यह वक्त भी गुजर जाएगा। यह सब इसलिए, क्योंकि संघर्ष के ये समय पहली बार आए थे, ऐसा नहीं था। हां! यह समय थोड़ा लंबा और बढ़ते पारिवारिक बोझ वाला था। पत्रकारिता के लगातार गिरते स्तर और साख के पेशे से छीजती आत्मा मुझे बेचैन कर रही थी। मुझे लगा, यही सही वक्त है जब पत्रकारिता पर ही अपने उद्गार व्यक्त किए जाएं। इसके लिए लंबा रिसर्च का दौर चला। लेकिन, किताब लिखते वक्त यह ध्यान में आते कंपन होने लगती थी कि इस करम से परिवार कैसे चलेगा! फिर यह सोचते कि यह वक्त भी गुजर जाएगा। दिन-रात एक कर लग गया। श्री अय्यर की किताब 'NDTV फ्राड' और लगभग डेढ़ दशक की पत्रकारिता के संघर्ष के साथी संदीप देव की पहली पुस्तक *'निशाने पर नरेंद्र मोदी: साजिश की कहानी, तथ्यों की जुबानी'* ने इस किताब को लिखने में बड़ी भूमिका निभाई। दोनों दस्तावेज़ी किताब हैं, जिससे बड़ी मदद मिली।

वैसे भी किताब लिखने की प्रेरणा के साथी रहे संदीप देव। तब जब मैंने यह सोचा कि किताब लिखी जाए, संदीप *कहानी कॉम्युनिस्टों की* व *राजयोगी आदित्यनाथ* समेत सात किताब लिख कर बेस्ट सेलर और हिंदी में लाख के आंकड़े को पार करने वाले पहले लेखक बन चुके थे। संदीप के लेखक बनने के संघर्ष के साथी होने के कारण अपने जीवन के सबसे संघर्षपूर्ण दौर में मुझे मौलिक पुस्तक लिखने की प्रेरणा मिली। हां! इतना तय है कि संघर्ष के उस बुरे दौर में भी मैंने यह तय किया कि मेरी पहली पुस्तक *पत्रकारिता का काला अध्याय* के अलावा

कुछ नहीं होगा। इस दौरान कुछ जीवनी लिखने का अवसर मिला, लेकिन अंतरात्मा ने स्वीकार नहीं किया।

आत्मसम्मान के लिए लड़ने का अक्खड़पन के कारण नौकरी में कभी किसी ब्रॉस से बहुत बेहतर संबंध नहीं रहे। टीवी की पहली नौकरी बस इसलिए झण भर में छोड़ दी, क्योंकि संपादक के कुछ शब्दों ने चोटिल किया। नई-नई शादी हुई थी, फिर भी परवाह नहीं की। लेकिन, तब तक अपना प्रोफेशनल करियर सुकून दे रहा था। नई-नई शादी के आनंद के वक्त थे, लेकिन नौकरी में पहली बार लात मारने का जोखिम ले चुका था। फिर संघर्ष के इस दौर में अर्धांगिनी ऋचा ठाकुर के पल-पल का साथ कल्पना से परे था। तब भी जब कठिन संघर्ष के दौर में कुछ दिख नहीं रहा था, फ्रीलांसिंग से जिंदगी धिसट रही थी। 'ई टीवी' में बेहतरीन नौकरी मिली, वह भी जब छोड़ने का दबाव मिला इस शर्त पर कि YOU TUBE छोड़ना होगा। मेरी धर्मपत्नी ने यह सुनते ही एक मिनट भी नहीं लगाया, कहा- छोड़ दीजिए। बदले दौर में आप जैसे लोग इस प्लेटफार्म पर बेहतर कर सकते हैं। तब एक उम्मीद के अलावा कुछ नहीं था, लेकिन उसके इन शब्दों ने इतनी ताकत दी कि मैं फिर रुका ही नहीं। इस किताब की प्रेरणा में उसकी भूमिका अमूल्य है। यदि उसने कह दिया होता कि नौकरी के बिना घर कैसे चलेगा, तो न किताब लिख पाता, न YOU TUBE चैनल के सफर पर निकल पड़ता। अपना YOU TUBE चैनल THE MANISH THAKUR SHOW ने साल भर में जो दिया उसका पासंग भी 19 साल के पत्रकारीय जीवन में नहीं मिला।

संघर्ष के उन दिनों में मेरे पिता हमेशा के लिए मेरे संबल रहे। वही मेरे असली ताकत, मेरे आदर्श और भगवान हैं। वे साक्षी हैं, मैंने उनसे कभी कुछ नहीं मांगा, लेकिन हजार किलोमीटर दूर वे मेरी पीड़ा हमेशा भांप जाते थे। अद्भुत तरंग रहा है, उनके -मेरे बीच। मेरे स्वाभिमान की असली ऊर्जा और प्रेरक मेरे इंजीनियर पिता श्री प्रेमचंद्र ठाकुर ही हैं। पिता हर किसी के अनमोल होते हैं। मेरे भी कुछ अलग नहीं हैं, लेकिन इंसानी तौर पर मैंने खुली आंखों से ऐसा कर्मयोगी, निष्ठावान जुझारू, वचन का एकदम पक्का नहीं देखा। जो बोल दिया, किसी को वचन दे दिया तो शरीर बेचने तक जाकर निभाने वाले इंसान हैं वे। मेरे जीवन की ताकत और हर परिस्थितियों से लड़ने की प्रेरणा वही हैं। मां वैदेही ठाकुर कभी कुछ नहीं बोलतीं। पापा का प्रभाव इतना रहा कि कई बार एक शिकायत उन से रही कि आप मां को

बोलने ही नहीं देते। लेकिन, वह अपने परिवार में ईमानदारी की प्रतीक रहीं। एक बार जो मन से उतर गया, उसे जीवन से निकाल देने की उनकी आदत मेरे स्वभाव का हिस्सा बन गया। मां को तो पता नहीं कितना नुकसान हुआ, पर उनका ठसक वाला यह व्यवहार मेरे करियर में बाधक रहा। मेरे बेहद नजदीकी साथी उपेंद्र चौधरी और बचपन के मित्र आलोक का कहना था कि यही तुम्हें इन दूसरों से अलग करता है। छल-कपट की दुनिया में तुम्हारी ईमानदारी का प्रतीक है कि तुममें बनावटीपन बिलकुल नहीं। काम निकालने के लिए जीवन में कोई रिश्ता नहीं बनाया। यह शायद मातृ गुण था। मां जानती है कि बेटा बहुत अक्खड़ है। मैं जानता था वह मेरे इस स्वभाव की बाधा को मारने के लिए हमेशा तब पूजा पर होती थीं, जब मैं कोई परीक्षा या इंटरव्यू दे रहा होता था, ईश्वर को मेरी भी कुछ सुनने की विनती करती थीं। मां की बात ईश्वर कैसे न माने भला! विपदा के दौर में मेरे स्वाभिमान को सबलता देने, मुझे औरों से अलग बताने के लिए संस्कृत के श्लोकों से ऊर्जावान बनाने में मेरे विद्वान एकमात्र बहनोई शरदेंदु झा की भूमिका हर पल अनमोल है। निराशा के दौर में उनके शब्द आशा की किरण होते हैं। पुत्र भव्य शायद इन संघर्षों को देख उम्र से पहले बड़ा हो गया। बड़ी-बड़ी बातें करने लगा। उसे लगता था पापा किताब लिखकर लेखक बन जाएंगे। मैं कहूंगा कि मेरे पापा पत्रकार भी हैं, लेखक भी। मैं जानता था कि वह यह सब क्यों बोलता है।

इस किताब को लिखने में मेरे पहले टीवी संपादक की भूमिका भी मानता हूं। मेरे खुशहाल पत्रकारीय जीवन को संघर्षमय बनाने और पत्रकारीय संपादकीय चरित्र को समझने का आधार मुझे उन्हीं से मिला। जीवन में हर किसी का असर आपके व्यवहार और फैसले पर होता है। सोशल मीडिया का हर वह साथी, जिसने मुझे प्रेरित किया उन सब का आभार! किताब की प्रूफ रीडिंग और संवारने की जिम्मेदारी बचपन के मेरे सबसे खास मित्र डॉ. विभुमौली कुमार ने ली। जेएनयू. से पीएचडी कर हिंदी की सेवा कर रहे विभु पहली कक्षा से ही टॉपर रहे। जेएनयू में भी टॉप करने की उसकी आदत नहीं गई। इस किताब को लिखने के प्रेरक मेरे खास मित्र पत्रकार, लेखक अब प्रकाशक संदीप देव और उनके कपोत प्रकाशन का बहुत बहुत आभार! अंत भला तो सब भला! वंदे मातरम!

—मनीष ठाकुर

प्रस्तावना

21वीं सदी की शुरुआत भारत में टीवी पत्रकारिता के 24 धंटे की धमक के साथ हुई। शुरुआत में 24 घंटे के न्यूज चैनल को यह कह कर खारिज किया जाने लगा कि न्यूज में भला चौबीसों घंटे क्या दिखाया जाएगा! पूरे दिन की खबर को कुछ मिनटों में अखबारों पर सरसरी निगाह दौराने के बाद अपनी दिनचर्या में व्यस्त होने वाले आमजन को आधे घंटे के बुलेटिन में दिनभर की खबरें देखने की आदत तो लग चुकी थी, लेकिन चौबीसों घंटे खबर! न्यूज चैनल आखिरकार, खबरों में ऐसा क्या दिखाएंगे जो आम लोगों को जोड़ कर रख सके! लेकिन टीवी संपादकों ने क्राइम, "सेक्स" और क्रिकेट का ऐसा पैकेज तैयार करना शुरू कर दिया जिससे आम भारतीयों को मनोरंजन की खुराक भी न्यूज चैनलों से ही मिलनी शुरू हो गई। यह दौर 1988 में प्रणय राय द्वारा दूरदर्शन पर अपने प्रोडक्शन हाउस के द्वारा समाचार को नए कलेवर देने के शानदार प्रयोग से एकदम अलग था। अब किसी चीज के लिए कोई वक्त नहीं था। स्वयं प्रणय राय का एनडीटीवी भी बहुत बदल रहा था, 24 घंटे के रफ्तार को पकड़े रखने के लिए।

टेलीविजन पत्रकारिता की बाल्यावस्था में अखबारों की दुनिया से आए ऊर्जावान संपादक नित्य नए प्रयोगों में तल्लीन थे। उन्हें बहुत कुछ सीखना और सीखते ही नवीन पीढ़ी का गुरुवर भी बनना था। भारतीय टेलीविजन मीडिया बहुत जल्दबाजी में था। टेलीविजन पत्रकारिता की रफ्तार को देखकर प्रिंट के ज्यादातर मंझे हुए पत्रकार हांफने लगे। लिहाजा, पत्रकारिता के ठोस अनुभवी काबिल पत्रकार ने उस दौर से ख़ुद को दूर कर लिया। परिणाम स्वरूप भारतीय टेलीविजन पत्रकारिता पर कम अनुभवी, लेकिन ऊर्जावान और बाजार से प्रभावित नई पीढ़ी का कब्जा हो गया। अखबार की दुनिया से पत्रकारिता की ट्रेनिंग लेकर आए

पत्रकार टेलीविजन में यकायक निर्णायक भूमिका में आ गए। उनके अनुभव ने यह तय किया कि टेलीविजन के 21 इंच के पर्दे पर आम भारतीयों को सेक्स, क्राइम और क्रिकेट (टेलीविजन की भाषा में ट्रिपल C) देखना ही पसंद है। फिर टीवी के पर्दे पर खबरों के बदले यही ट्रिपल C बिकने लगा। खबर को बिकाऊ बनाने की रेस में 2004 तक टीवी मीडिया पर क्राइम रिपोर्टरों का बोलबाला हो गया। क्राइम की खबरों में सेक्स का तड़का, खबरों को मसालेदार बनाने लगा। बलात्कार व अपराध की कई खबरों को मसालेदार और बिकाऊ बनाने के चक्कर में टीवी पत्रकारिता ने कई निर्दोष जिंदगियां तबाह कर दीं।

2006 में भारतीय टीवी मीडिया के सबसे चर्चित क्राइम शो, जिसका मैं खुद महत्वपूर्ण हिस्सा था, वहां हमारे एक बेहद करीबी साथी रिपोर्टर की रिपोर्ट से परेशान होकर एक व्यक्ति ने आत्महत्या कर ली। रिपोर्ट देखकर अपनी जान गंवाने वाले अधेड़ पर अपनी ही भतीजी (साढ़ू की बेटी) के साथ बलात्कार का आरोप लगाया गया था। खबर प्रसारित होने के बाद अभियुक्त ने आत्महत्या कर ली। माना गया कि खबर बदले के भाव से तैयार करवाई गई थी। इस हादसे ने हमारे साथी पत्रकार की नींद छीन ली। उसके अंदर पत्रकारिता का मानवीय पहलू जिंदा था, इसलिए वह बैचेन रहने लगा। उसे अपनी गलती का एहसास हुआ। लेकिन, ऐसी खबरें अकेले नहीं बनतीं। उसमें मसाला डालने के लिए एक टीम काम करती है, जो अक्सर इंसानी संवेदनाओं को ताक पर रखकर पूरी व्यावसायिक हो जाती हैं। बदलते दौर में टीवी पर क्राइम की खबरें पीछे जाने लगीं। जिस एनडीटीवी ने सबसे पहले आधे घंटे का अपना 'क्राइम शो' शुरू किया था उसी ने सबसे पहले 'क्राइम' शो बंद कर दिया। कई क्राइम रिपोर्टरों पर अंडरवर्ल्ड से ताल्लुकात के आरोप भी सामने आए। अंडरवर्ल्ड के डॉन दाऊद इब्राहिम की शारजाह क्रिकेट स्टेडियम में मौजूदगी के एक शॉट के अलावा जिस दाऊद की दूसरी तस्वीर आज तक तलाशी नहीं गई, उसके नाम पर तीन दशक तक न जाने कितनी खबरें बेच ली गईं। मुंबई दंगे के बाद जिस दाऊद का दुनिया की किसी एजेंसी को कभी पता नहीं चला मानो वह दाऊद चुनिंदा भारतीय क्राइम रिपोर्टरों के पास हाजिरी लगाता था। फिर वह भारतीय टेलीविजन मीडिया के माध्यम से सीधे ड्राईंग रूम में घर -घर तक पहुंच जाता था। लेकिन, खुफिया एजेंसियों को इसकी कभी कोई भनक तक नहीं लगती थी!

इससे आम जन में मीडिया का रुतबा बढ़ने लगा। टेलीविजन पर दिखना बड़ा पत्रकार होने का पैमाना बनने लगा। फिर राजनेताओं के अंदर भी अखबार में नाम छपने के बदले टीवी पर दिखने का लालच अंगड़ाई लेने लगी। दूसरी ओर सत्ता के शिखर पर बैठे लोगों से अंतरंगता बढ़ने के सामाजिक रुतबे में बढ़ोतरी के फायदे ने पत्रकारों को भ्रष्ट बनाना शुरू कर दिया। इसी क्रम में भारतीय टीवी पत्रकारिता को शानदार कलेवर देने वाले प्रणय राय और उनके एनडीटीवी पर कई आरोप लगे। आरोप दूरदर्शन से महंगे सामान अपने प्रोडक्शन हाउस में चोरी-छिपे ले जाने से लेकर सत्ता में अपनी पहुंच के आधार पर शेल कंपनियों के माध्यम से निजी बैंकों को चूना लगाने तक के लगे। 5 जून, 2017 को सीबीआई ने उनके ठिकानों पर छापा मार कर उनके खिलाफ जब प्राथमिकता दर्ज की तो पूरी पत्रकारिता और राजनीतिक बिरादरी दो खेमों में बंट गई। यह पत्रकारिता में और सत्ता में किसी पत्रकार की बादशाहत का भी पैमाना माना जा सकता है। उनके दिल्ली और देहरादून समेत अन्य ठिकानों पर सीबीआई की छापेमारी का, जहां विपक्षी पार्टियों ने विरोध किया, वहीं सत्ता में जुड़े दलों ने कहा कि कानून से ऊपर कोई नहीं हो सकता। एडिटर्स गिल्ड ने भी यही बात कही, लेकिन साथ ही यह भी जोड़ा कि किसी भी हाल में पत्रकारिता पर हमला बर्दाश्त नहीं किया जा सकता। प्रणय राय निश्चित रूप से भारतीय टेलीविजन पत्रकारिता के शिखर पुरुष हैं। टीवी पत्रकारिता में ज्यादतर बड़े नाम उन्हीं के शिष्य हैं। ऐसे में प्रणय राय पर लगे आरोप पत्रकारिता में शुचिता और ईमादारी पर बड़ा सवाल है। सवाल यह है कि क्या पत्रकारिता के नाम पर सत्ता से सांठगांठ कर पत्रकारों ने साख के पेशे को व्यापार बना दिया है?

क्या पत्रकारिता सत्ता के फायदे और उसके इशारे पर होने लगी? और इसके एवज़ में पत्रकारिता के सम्राट अपना आर्थिक और राजनीतिक साम्राज्य स्थापित करने लगे जहां किसी प्रकार का कोई भय नहीं रहा? क्या ऐसे दौर में पत्रकारिता महज मजाक का पेशा और पत्रकार विदूषक बन गए? धीरे-धीरे खबरों को जाति और मजहब के मसाले का तड़का लगाकर बेचने की पत्रकारिता के शातिराना खेल ने कई पत्रकारों को तो बड़ा बना दिया लेकिन पत्रकारिता छोटी होती चली गई।

साख के इस पेशे का नाता न वेदना से रही, न संवेदना से। सच से तो मानो उसका सरोकार ही खत्म होने लगा। संवेदना और सामाजिक सरोकार से टूटते नातों के कारण साख का पेशा एजेंडा का पेशा बनता चला गया।

अखबार में लिखे और टीवी न्यूज चैनलों में दिखाई गई, खबरों को अंतिम सत्य मानना, हमारे स्वभाव का हिस्सा रहा है। अपने तर्क को मजबूती देने के लिए आमजन अक्सर अखबार में छपी खबर का हवाला देकर खुद को सही साबित करते रहे हैं। लेकिन, बीते वर्षों में मीडिया हाउस ने अपने-अपने तर्क और अपने-अपने दर्शक तैयार कर लिए। 2001 के बाद जब से 24 घंटे की टीवी पत्रकारिता वजूद में आई, पत्रकारिता ने अपना नया स्वरूप गढ़ लिया 'एजेंडा पत्रकारिता' के रूप में। चौबीस घंटे के चैनल के दौर ने एजेंडा पत्रकारिता को नए पंख दे दिए। फिर अखबार भी उस रेस में दौड़ने लगा। जनता के मूड को बदल कर सत्ता पर काबिज होने के गुमान ने कब पत्रकारिता को सत्ता का चाकर बना दिया, उसे पता ही नहीं चला। सत्ता की चाकरी ने पत्रकारिता को उस सुपर पावर का एहसास दिया जिसने पत्रकार को 'सरकार' होने के भ्रम के बियाबान में ढकेल दिया।

झूठ, फरेब और एजेंडा, पत्रकारिता के हथियार बनते गए। यहां तक तो ठीक था। अपने राजनीतिक आका के विरोधियों को टारगेट करने के लिए पत्रकारों ने स्टिंग ऑपरेशन के नाम पर क़ॉलगर्ल सप्लाई का धंधा भी शुरू कर दिया। टेलीविजन पर स्टिंग ऑपरेशन के शुरुआती दौर में, जब भारत में टीवी पत्रकारिता भी बाल्यावस्था में था, तब यह सब रोमांच पैदा कर रहा था। लेकिन, पत्रकारिता के उस रोमांच का सच के साथ सामना होने के बाद यही पता चला कि कैसे अपने विरोधियों को टारगेट करने के लिए पत्रकारिता के नाम पर 'कॉल गर्ल्स' सप्लाई कर तहलका मचाने का धंधा किया गया? तहलका मचाने वाले कई धंधेबाज, बाद में वसूली और रेप के आरोप में जेल भेज दिए गए।

तरुण तेजपाल, इस मामले में बदकिस्मत थे। बदलते दौर में एजेंडा पत्रकारिता का ठेका लेकर अपने आका के दुश्मन की साख खराब करने लिए राजनीतिक स्टिंग ऑपरेशन की ऐसी विधा ईजाद की गई जिसमें कॉलगर्ल्स सप्लाई, पत्रकारिता की नई विधा बन गई। स्टिंग ऑपरेशन की सौदेबाजी के भी कई मामले सामने आए, जिसमें पता चला कि जिनके खिलाफ स्टिंग किया गया उनसे सौदेबाजी कर खबर दबा ली गई। ऐसे मामले दिल्ली से लेकर कस्बाई पत्रकारिता में भी सामने आए। धीरे-धीरे पत्रकारिता में ग्लैमर का स्वरूप बना 'स्टिंग ऑपरेशन' विश्वसनीयता खोता चला गया और बदलते दौर में टीवी पत्रकारिता से धीरे-धीरे गायब भी हो गया।

गोवा में 'तहलका' के एक व्यावसायिक कार्यक्रम के दौरान अपनी सहकर्मी और बेटी की सहेली के साथ शारीरिक शोषण और बलात्कार के आरोप में स्टिंग ऑपरेशन के सबसे बड़े स्टार गिरफ्तार हो गए। उसके बाद उनके आर्थिक साम्राज्य का पता चला।

साधारण कुर्ता-पायजामा में जमीनी दिखने वाले पत्रकार, एजेंडा पत्रकारिता के सहारे करोड़ों की संपत्ति हासिल करने के धंधे में लिप्त रहे। यह सब तब तक पर्दे के पीछे होता है, जब तक आपका हर गैरकानूनी काम, कानून के शिकंजे में नहीं आता। एक बार कानून की चपेट में आने के बाद हर कलई खुलने लगती है। अब देखिए न अब तक जो कानून के शिकंजे में नहीं आए, उनकी तो चांदी है, लेकिन एक बार बलात्कार के आरोप में जेल जाने के बाद पत्रकारिता के उच्च आदर्श का पैमाना बने तेजपाल के करोड़ों के साम्राज्य से पर्दा उठने लगा। सामने आया यह सच कि दक्षिण दिल्ली से लेकर नैनीताल और गोवा तक करोड़ों की संपत्ति हासिल कर, साख के पेशे में उन्होंने अपना दबदबा बनाया। 'तहलका' में कांग्रेस के कद्दावर नेता कपिल सिब्बल के पूंजी निवेश से जहां उन्हें आर्थिक ताकत मिली, वहीं राजनीतिक सत्ता की ताकत का भी गुमान था।

24 घंटे की टीवी पत्रकारिता के दौर में तेजपाल एकमात्र पत्रकार नहीं थे, जो तहलका मचाते हुए पत्रकारिता कर रहे थे और राजनीतिक सत्ता में जिनकी ऊंची पहुंच थी। सच यह है कि कानून के शिकंजे में आने के बाद जिनके खिलाफ साक्ष्य सामने हैं, उस पर तो हम चर्चा कर सकते हैं; लेकिन जो कानून के शिकंजे में नहीं आए उनके काले कारनामों से पर्दा उठना बाकी रह गया। अहम सवाल तो यह है कि पत्रकारिता लाभ का वह कौन-सा धंधा है जो एक पत्रकार को कुछ ही वर्षों में करोड़ों का मालिक बना देता है? जबकि जोश और जूनून से पत्रकारिता करने वालों के लिए दो जून की रोटी जुटाना भी मुश्किल होता है।

तरुण तेजपाल तो अपने कर्मों से जेल चले गए, लेकिन जिन्हें वे स्टिंग ऑपरेशन का गुर सिखा गए, वे 'गुलेल डॉट कॉम' और 'कोबरा पोस्ट' के नाम से स्टिंग ऑपरेशन की पत्रकारीय विधा को अंजाम देते रहे। राजनीतिक स्टिंग पत्रकारिता के ज्यादातर मामले हाईकोर्ट से लेकर सुप्रीम कोर्ट तक अर्थहीन और संदिग्ध साबित होते रहे, लेकिन पत्रकारिता के नाम पर दुश्मन को टारगेट करने का वह दौर शुरू हुआ, जिसने पेशे की साख को तबाह कर रख दिया।

गुजरात दंगे के दौरान तो जैसे टीवी चैनलों ने जाति और समुदाय को रेखांकित करने वाली खबरें तैयार कर पत्रकारिता का एक नया मानक तैयार कर लिया। 'सेव द टाइगर' नामक एक सरकारी एड एनडीटीवी के मालिकान में केंद्रीय सत्ता की ठसक पैदा कर रहा था। आर्थिक शक्ति भी। गुजरात में गोधरा ट्रेन नरसंहार के बाद के दंगे और गुजरात पुलिस द्वारा सरकारी रिपोर्ट में नामजद दो कुख्यात आतंकी इशरत जहां और सोहराबुद्दीन के एनकाउंटर की चीर-फाड़ की रिपोर्टिंग ही 'एनडीटीवी' का मानो एजेंडा बन गया। कुछ टीवी मीडिया ने ऐसा माहौल बनाया, मानो भारत में इससे पहले किसी सरकार के कार्यकाल में न कभी कोई दंगा हुआ, न किसी बदमाश का कोई एनकाउंटर ही हुआ, सबसे अहम यह कि आतंकियों के प्रति हमदर्दी का मानवीय लेप चढ़ाकर इसे रोजाना पेश किया जाने लगा। मजहब और जाति के नाम पर पीड़ित और अपराधी की पहचान कर पत्रकारिता के मूलभूत सिद्धांत को खंडित करने का दौर भी शुरू हुआ, जो अब रुकने का नाम नहीं ले रहा। गुजरात दंगा के दौरान मरने वाले और मारने वाले के मजहब को उजागर कर खबरों में सनसनी पैदा करने का नया प्रयोग टीवी मीडिया ने किया। 'स्टार न्यूज' के बैनर तले काम करने वाले 'एनडीटीवी' के तत्कालीन पत्रकार राजदीप सरदेसाई ने वरिष्ठ पत्रकार मधु त्रेहान के शो 'न्यूज लॉन्ड्री' को दिए एक इंटरव्यू में खुद स्वीकार किया कि उन्होंने इस परंपरा की शुरुआत की, जो जरूरी था। अब तक पत्रकारिता में इस तरह, खबर पेश करना अनैतिक और आपराधिक माना जाता था। लेकिन, जब खबरों के साथ एजेंडा हो तो नैतिकता के मायने नहीं रहते। गुजरात में मजहब के नाम पर खबरों का अनैतिक धंधा करने का बीजारोपण करने वाली मीडिया बीतते वक्त में दलित और मुस्लिम एंगल पर खबरों संग खेलने लगी। देश में रोज घटित होते हजारों आपराधिक मामलों में यदि किसी मामले में पीड़ित अनुसूचित जाति के रूप में पहचाना गया तो पूरी खबर में अपराध को दलित के खिलाफ अत्याचार के रूप में परोसा जाने लगा। ट्रेन में सीट को लेकर हुए आपसी झगड़े में एक युवक की मौत को भारतीय मीडिया ने मजहबी रंग दे दिया। जब अदालत में मामले की सुनवाई हुई तो शुरुआती दौर में ही अदालत ने साफ कर दिया कि यह मामला सिर्फ सीट के लिए आपसी मारपीट का था जो हत्या के अंजाम तक पहुंच गया। हमारे समाज में सार्वजनिक परिवहन में फसाद और रोडरेज का हर अपराध गुस्से पर नियंत्रण न रख पाने का ही मामला होता है। बस मीडिया की नजर में उसमें

से पीड़ित के मजहब या जाति की पहचान दलित या मुसलमान के रूप में होने पर खबर में एजेंडा शामिल हो जाता है। मीडिया के इस अनैतिक रुख पर पंकज मेशराम ने बॉम्बे हाईकोर्ट की नागपुर बैंच के सामने एक जनहित याचिका दाखिल कर सरकार के सभी दस्तावेजों व संचार माध्यमों से दलित शब्द हटाने की मांग की। हाईकोर्ट ने जनहित याचिका पर सुनवाई करते हुए सरकार को निर्देश दिया कि वह अपने दस्तावेजों से दलित शब्द हटाकर अनुसूचित जाति शब्द का प्रयोग करे। साथ ही प्रेस काउंसिल ऑफ इंडिया को भी सलाह दिया कि वह खबरों में 'दलित' शब्द का प्रयोग न करे। सामाजिक न्याय मंत्रालय ने 15 मार्च, 2018 को केंद्र सरकार और सभी राज्य सरकार को निर्देश जारी कर हाईकोर्ट के आदेश का पालन करने का सर्कुलर जारी कर दिया। उम्मीद की जानी चाहिए कि मीडिया भी इसे गंभीरता से लेगा।

अदालतें भी कई बार 'पीक एंड चूज' के तहत सख्ती करती हैं। अप्रैल 2018 में कठुआ रेप केस में पीड़िता की पहचान बताने के लिए 12 मीडिया हाउस को दस-दस लाख रुपये का जुर्माना कर दिया, लेकिन ऐसे ही अनेक मामलों में चुप्पी साध ली। यही कारण है कि गुजरात-दंगा हो या अखलाक, जुनैद या रोहित बेमुला मामला, मीडिया ने खबरों को मजहब और जाति के रंग से बेचने का धंधा बना लिया। बीते वक्त में मीडिया ने जिसे अघोषित नैतिक पैमाने की लक्ष्मण-रेखा बना रखा था, उसे अपने एजेंडे के तहत लांघ दिया।

सत्ता में मजबूत पकड़ रखने वाले प्रणय राय के एनडीटीवी की साख, तमाम मीडिया हाउस में सबसे बेहतर रही। हर टीवी पत्रकार के लिए एनडीटीवी सपनों की मंजिल बनता रहा, लेकिन उस बैनर तले हवाला और मनीलांड्रिंग का मामला भी सामने आया। पत्रकारिता की ओट में लाभ का यह धंधा ही पत्रकारिता का असली धंधा है। यह आम पत्रकार समझ ही नहीं पाए। यदि समझे भी तो दूसरों की खबर देने वालों ने अपनी खबर पर चुप्पी साध ली। मालिकों के बीच एक दूसरे मीडिया हाउस के काले धंधे पर चुप्पी साधने का एक अघोषित समझौता रहा, जिसका पालन करना नौकरी करने वाले पत्रकारों की मजबूरी रही।

आम पत्रकार नैतिकता का जाप करता रहा, दूसरी ओर एजेंडा पत्रकार भारत सरकार में मंत्री बनाए जाने का सौदा करता रहा। 'राडिया टेप' ने इस पूरी परत को खोल कर रख दिया। अन्ना आंदोलन में जहां एक तरफ आम पत्रकार व्यवस्था से

दुखी होकर विद्रोह का हिस्सेदार बन गए, एजेंडा पत्रकार उसके सौदेबाज! भारतीय लोकतांत्रिक व्यवस्था में सेना की सर्वोच्च ताकत संसद या सुप्रीम कोर्ट के सामने क्या है, यह जानते हुए भी इंडियन एक्सप्रेस के तत्कालीन संपादक शेखर गुप्ता ने फ्रंट पेज फ्लायर खबर प्लांट कर दी कि भारतीय सेना संसद पर कब्जा करने का प्लान बना चुकी थी, इसके लिए राजपथ पर फ्लैग मार्च भी हुआ। यह आम भारतीय भी जानता है कि भारत में तीनों सेना के प्रमुख राष्ट्रपति होते हैं और वो तीनों सेना रक्षा मंत्रालय के मातहत काम करती है। फिर भी इस तरह की खबर तब तैयार की गई, जब देश भ्रष्टाचार के खिलाफ अन्ना आंदोलन में आंदोलित था। यदि इस खबर को सच मान लिया जाता तो आजादी के बाद सरकार के खिलाफ दूसरे सबसे बड़े आंदोलन की रीढ़ टूट सकती थी। देश में विद्रोह हो सकता था। इतनी बड़ी यह खबर बेबुनियाद साबित हुई। लेकिन, इस पर मीडिया के अंदर सवाल नहीं किया गया।

यह वह दौर था, जब सोशल मीडिया ने अपना पैर फैला लिया था। 2007 में कॉलेज में साथियों के बीच मार्क जुकरबर्ग का प्रयोगात्मक फेसबुक 2010-11 तक आम भारतीयों के जीवन का हिस्सा बन चुका था। पढ़े-लिखे लोगों के बीच ट्विटर ने भी अपनी पैठ बना ली थी। सोशल मीडिया के इस फैलाव ने आम भारतीय को अभिव्यक्ति की आजादी का वह मंच दे दिया जो खास लोगों के पास था। यह मीडिया में दरअसल आम आदमी की इंट्री थी जिसे लोकतंत्र के चौथे स्तंभ को वक्त रहते एहसास ही नहीं हुआ। अब तक मीडिया एकतरफा संवाद का जरिया था। सोशल मीडिया ने इसे दोतरफा संवाद का जरिया बना दिया। अब तक मीडिया सिर्फ सवाल पूछने की कुर्सी पर बैठा था, अब सोशल मीडिया के दौर में उससे भी सवाल पूछा जाने लगा। मीडिया के कुछ महारथी 'पब्लिक फिगर' बन चुके थे, यह एहसास उन्हें सोशल मीडिया ने ही दिलाया। जब आप आम से खास हो जाते हैं तो सवालों के दायरे में भी आते हैं। 'पब्लिक फिगर' बन चुके मीडिया मठाधीशों को यही स्वीकार्य नहीं था। वे सिर्फ सवाल करना चाहते थे। लेकिन, एजेंडे पर उनसे कोई सवाल करे यह स्वीकार्य नहीं। अब सोशल मीडिया उसके एजेंडा पत्रकरिता, और झूठी खबरों पर सवाल किया जाने लगा, वह भी सबूतों संग। इससे मेन स्ट्रीम मीडिया की बेचैनी बढ़ने लगी। सोशल मीडिया के इस दौर में यह भी एहसास हुआ कि आम आदमी के अंदर भी संवाद करने और विचार रखने की वह छटपटाहट है जो किसी व्यक्ति को पत्रकार होने की योग्यता देता है।

अभिव्यक्ति की जिस आजादी की बात पत्रकार करते थे संविधान के मुताबिक उसी आजादी के तहत आम जन, जब उनसे सवाल करने लगे तो मीडिया के पांच नामचीन पत्रकार गृहमंत्री से मिलकर सोशल मीडिया पर लगाम लगाने का दबाव रखने लगे। लेकिन, सरकार और उसके मंत्री को पता था कि सोशल मीडिया की ताकत क्या हो चुकी है। 2013 में दिल्ली में आम आदमी की बनाई नई नवेली पार्टी की सरकार बनाकर, फिर 2014 में केंद्र में पहली गैर कांग्रेसी पूर्ण बहुमत की सरकार बनाने में अहम भूमिका अदा करने वाली सोशल मीडिया ने साबित कर दिया कि न्यूज रूम में तैयार एग्जिट पोल से एजेंडा के तहत पत्रकारिता अब बीते दौर की बात हो गई।

ऐसा नहीं कि झूठ, फरेब और एजेंडा सोशल मीडिया पर नहीं चलाए जाते, लेकिन सोशल मीडिया पर फोटोशॉप और झूठ का खेल कुछ घंटों में ही भरभरा कर गिर जाता है, जबकि मेनस्ट्रीम मीडिया ने जब भी झूठ तैयार किया उस पर कभी सफाई नहीं दी। आम आदमी को कभी पता ही नहीं चला कि उसके लिए जो खबर परोसी गई थी, वह झूठी थी। सोशल मीडिया के दौर से पहले एजेंडा के तहत की गई पत्रकारिता अब आमजन के बीच चर्चा का विषय बनने लगी। यही साख के पेशे के लिए सबसे बड़ी परेशानी का कारण बनती चली गई। आज मेनस्ट्रीम मीडिया के लिए यही सबसे बड़ी चुनौती है। 2001 से लेकर 2020 तक कितना बदला मीडिया! आम आदमी से उसका सरोकार कितना रहा, कितना सरोकार सत्ता संग रहा इस पर अब बहस जरुरी है। सत्ता के खिलाफ पत्रकारिता का दंभ भरने वालों ने क्या अब तक सत्ता के खिलाफ पत्रकारिता की? इसका विश्लेषण जरूरी है। जरूरी है कि अब हम अपने गिरेबां में झांक कर देखें कि क्या हमने पत्रकारीय जिम्मेदारी निभाई है? ये वो दौर है जिसमें हम अपनी जिम्मेदारी से भाग ही नहीं सकते। सोशल मीडिया के इस दौर में अनगिनत वॉच डॉगों की नजर चौथे स्तंभ के ऊपर भी है। अब तक जिसकी जिम्मेदारी 'वॉच डॉग' की थी उस पर भी अब बड़ी संख्या में नजर है। ऐसे में उसे हमलावर भीड़ कहकर जिम्मेदारी से भागना चौथे स्तंभ के वजूद को नष्ट करना होगा। अक्सर हम दूसरों के चेहरों को अपनी आंखों से तो पढ़ते हैं, खुद को पढ़ने के लिए आईने की जरूरत होती है। भारतीय लोकतंत्र के चौथे स्तंभ को अब समझना होगा कि उसके ऊपर भी असंख्य कैमरों की नजर है। ऐसे में उसकी जिम्मेदारी लगातार बढ़ती जा रही है।

लेकिन दुखद यह है कि वह खेमे में बंट कर, मेरी पत्रकारिता, तेरी पत्रकारिता के व्यवसाय में तल्लीन हो चुकी है।

यह किताब सन 2001 के दौर में चौबीस घंटे के चैनलों की शुरुआत के बाद इक्कीसवीं सदी में भारतीय पत्रकारिता के बदलते स्वरूप को समझने का एक प्रयास है। लोकतंत्र में चौथे स्तंभ की जिम्मेदारी क्या रही है और एजेंडा के तहत पत्रकारिता के जुनून में क्या जिम्मेदारी निभाई गई है, यह किताब उसी पर एक तथ्यात्मक रिपोर्ट है। सोशल मीडिया के दौर में मेनस्ट्रीम मीडिया कहां है और चुनौती क्या है उसके सामने; इस पर चर्चा जरूरी है। पत्रकारिता के छात्र के लिए भी यह जानना भी जरूरी है कि पत्रकारिता के इतिहास को समझकर उसके वर्तमान हालात से आंख नहीं मूंदी जा सकती है।

—मनीष ठाकुर

11 मार्च, 2021

पहला अध्याय

क्रोनी कैप्टलिज़्म और लुटियन मीडिया

देश में भ्रष्टाचार के खिलाफ जबरदस्त आक्रोश था। कॉमनवेल्थ घोटाले के बाद 2जी, फिर कोयला घोटाला, एक से बढ़कर एक घोटालों से घिरी केंद्र की यूपीए सरकार की साख दांव पर थी। केंद्र सरकार को लगातार सुप्रीम कोर्ट से फटकार मिल रही थी। दूसरी ओर मई 2011 के अन्ना आंदोलन के बाद जनता सड़क पर थी। देश पूर्णतः भ्रष्टाचार मुक्त हो, भ्रष्ट और आपराधिक छवि वाले नेता के खिलाफ कार्रवाई हो, जनता अब बस यही चाह रही थी। आम जनता की चाह थी कि सुप्रीम कोर्ट के आदेश का पालन हो ! भ्रष्टाचार के खिलाफ देश के मिजाज के मुताबिक सुप्रीम कोर्ट की ओर से सज़ायाफ़्ता नेताओं के चुनाव लड़ने पर रोक लगा दी गई थी। लेकिन केंद्र की यूपीए सरकार ने एक अध्यादेश लाकर, सुप्रीम कोर्ट के उस आदेश के कुछ ही महीने बाद, उस पर रोक लगाने की तैयारी कर ली। यूपीए सरकार ने यह फैसला आरजेडी सुप्रीमो लालू यादव समेत आपराधिक मामले में सलाखों के पीछे जाने की राह देख रहे अपने सहयोगी दल के नेताओं के दबाव में लिया था। दूसरी ओर शाहबानो कांड की तरह सुप्रीम कोर्ट के आदेश को दबाने लिए अध्यादेश तैयार करने के यूपीए सरकार के फैसले के खिलाफ, मुख्य विपक्षी दल भाजपा ने विरोध शुरू कर दिया। भ्रष्टाचार के खिलाफ उबलती जनता के मिजाज के खिलाफ अपने सहयोगी दलों को खुश करने के लिए यूपीए सरकार के लिए अध्यादेश लाना आसान नहीं था। चुनाव मैदान में जाने से पहले

भ्रष्टाचार के मामले में जेल जाने की बेला का इंतजार कर रहे लालू प्रसाद यादव के आरजेडी जैसे प्रमुख सहयोगी दलों का साथ गंवाना सरकार के लिए चुनौती थी।

असमंजस में फंसी यूपीए सरकार अपने फैसले पर मुहर लगाने की जानकारी देश से साझा करने के लिए 27 सितंबर, 2013 को नई दिल्ली स्थित के प्रेस क्लब ऑफ इंडिया में प्रेस कांफ्रेंस का आयोजन किया। कांग्रेस पार्टी के मीडिया सेल के अध्यक्ष अजय माकन, मीडिया को बता रहे थे कि हमारी नेता सोनिया जी, पीएम मनमोहन सिंह जी और राहुल जी का एक सपना है! माकन प्रेस को संबोधित करते हुए कह रहे थे 'सरकार ने कानून के तहत फैसला लिया कि दागी नेताओं के लिए अध्यादेश लाया जाए। माकन ने तत्कालीन गृहमंत्री चिदंबरम के हवाले से कहा कि उन्होंने साफ कर दिया था कि सभी राजनीतिक दल इस अध्यादेश के साथ हैं। यह अब कैबिनेट का फैसला है, जिसे सर्वदलीय मीटिंग में माना गया। मैं कुछ भी छुपा कर नहीं कह रहा, यह अध्यादेश कानून के तहत बनाया गया है और इसमें कुछ भी गलत नहीं हैं।' माकन अध्यादेश लाने के अपने फैसले के पक्ष में दलील देते हुए कह रहे थे कि शुरू में भाजपा भी इस अध्यादेश के पक्ष में थी, लेकिन अब विरोध कर रही है।

अजय माकन अभी प्रेस कांफ्रेंस कर ही रहे थे कि उनके फोन की घंटी बजी। मैं खुद उस वक्त, उस प्रेस कांफ्रेंस में था। माकन, सीट से उठते हुए बोले "आई हैव सम इम्पोर्टेंट कॉल"। ऐसा कहकर अजय माकन वहीं प्रेस क्लब के लॉन में टहलते हुए किसी से बात करने लगे। घबराए से माकन ने कुछ ही मिनटों में कहा- "राहुल जी आ रहे हैं। वे भी आप लोगों से बात करेंगे"। प्रेस क्लब ऑफ इंडिया को एक ऐतिहासिक घटना के गवाह होने का इंतजार था। कुछ ही देर में कांग्रेस पार्टी के तत्कालीन उपाध्यक्ष राहुल गांधी वहां आ गए। प्रेस क्लब के एक वरिष्ठ पत्रकार, जो मंच का संचालन कर रहे थे, ने बताया -" यह ऐतिहासिक क्षण है। इतिहास खुद को दोहराता है। एक वक्त राजीव गांधी भी यहां आए थे। अब बारी राहुल गांधी की है। मंच संचालक की भूमिका खत्म होते ही राहुल गांधी और अजय माकन के बीच थोड़ी गुफ्तगू हुई, फिर राहुल गांधी ने चिरपरिचित अंदाज में कुर्ते की आस्तीन को समेटते हुए माइक थाम लिया। राहुल गांधी ने माइक संभालते ही कहा..."मैंने माकन जी से बात की। पूछा क्या हो रहा है? उन्होंने कहा कि प्रेस से बात कर रहा हूं अध्यादेश पर। फिर मुझे लगा कि मुझे भी आना चाहिए"। थोड़ी गहरी सांस

लेते हुए, राहुल एकदम सन्नाटे के माहौल में बोलने लगे....' यह अध्यादेश पूर्णतः मूर्खतापूर्ण है। मेरा मानना है कि इसे फाड़कर फेंक देना चाहिए। मैं दुबारा बोल रहा हूं, इसे फाड़कर फेंक देना चाहिए"। राहुल ने आगे कहा-'माकन जी ने मुझे राजनीतिक लाइन दी है। सभी पार्टी की अपनी लाइन है। कांग्रेस, भाजपा, सपा, जनता दल सब की। लेकिन, अब ये मूर्खतापूर्ण हरकत बंद होनी चाहिए। भ्रष्टाचार से कोई समझौता नहीं हो सकता। जनता अब भ्रष्टाचार से लड़ना चाहती है। मेरी चिंता है कि सरकार ने अध्यादेश पर जो फैसला लिया है, वह पूर्णतः गलत है।"

राहुल जब प्रेस के सामने अपनी ही पार्टी की अगुआई वाली केंद्र सरकार के कैबिनेट के फैसले की धज्जियां उड़ा रहे थे, उधर प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह कैबिनेट के उस फैसले पर मुहर लगा कर, सरकारी दौरे पर अमेरिका में थे। वहीं से प्रधानमंत्री का बयान आया- 'राहुल जी की चिंता वाजिब है। मैं वापस लौटकर कैबिनेट में चर्चा करूंगा।' इधर देश में संसदीय कार्यमंत्री राजीव शुक्ला, संसद भवन में पत्रकारों से बात करते हुए कह रहे थे- "राहुल जी की लाइन ही पार्टी की लाइन है।" मनमोहन सरकार तो कांग्रेस के नेतृत्व में चल रही थी, जिसकी सुप्रीमो सोनिया गांधी थीं, पार्टी की लाइन मतलब, सरकार की लाइन। सरकार की उसी लाइन को कांग्रेस पार्टी का एक सांसद कूड़ेदान में फेंक दिया, जिस पर यूपीए सरकार की पूरी कैबिनेट की मुहर लगी थी। यह पहला अवसर था, जब सार्वजनिक मंच पर राहुल गांधी को देश के प्रधानमंत्री और कैबिनेट से बड़ा कर दिया गया।

सवाल यह है कि कौन था जो कांग्रेस पार्टी के महज एक सांसद और पार्टी के उपाध्यक्ष को गठबंधन सरकार के प्रधानमंत्री और उसकी कैबिनेट से बड़ा बना रहा था? उस दौर में राहुल गांधी की मां सोनिया गांधी, 'राष्ट्रीय सलाहकार परिषद' की अध्यक्ष की कुर्सी तैयार कर, लगभग एक दशक तक उस पर काबिज़ थीं, जिसकी सलाह पर मनमोहन सरकार चल रही थी। राहुल भारत सरकार के कैबिनेट के फैसले को फाड़कर फेंकने की हैसियत कहां से पाए थे, समझा जा सकता है।

अटल बिहारी वाजपेयी के नेतृत्व वाली एनडीए सरकार की हार के बाद 2004 में कांग्रेस के नेतृत्व में यूपीए, सरकार बनाने का दावा पेश कर रही थी। कांग्रेस सुप्रीमो, सोनिया गांधी को पार्टी ने संसदीय दल का नेता चुन लिया, दूसरी ओर मुख्य विपक्ष भाजपा के साथ-साथ कांग्रेस पार्टी से बगावत कर बाहर हुए शरद पवार व पीए संगमा जैसे कद्दावर नेता के विद्रोह की आवाज बुलंद थी। इन

नेताओं ने आंदोलन चला रखा था कि किसी विदेशी को भारत का प्रधानमंत्री नहीं बनने देंगे। सुषमा स्वराज ने तो धमकी दे रखी थी कि सोनिया यदि प्रधानमंत्री बन गईं तो वह सिर मुंडन करा कर राजनीति से संन्यास ले लेंगी। सोनिया ने विपक्ष के इस विद्रोह को देखते हुए फैसला लिया कि वह प्रधानमंत्री नहीं बनेंगी। यह उनका अपना एकतरफा फैसला था, जिससे स्वदेशी के आंदोलन के तहत, आजादी दिलाने वाली देश की सबसे पुरानी पार्टी आहत थी। सोनिया ने सबका मुंह बंद करते हुए, ईमानदार साख वाले, रिजर्व बैंक के पूर्व गवर्नर और देश के पूर्व वित्त मंत्री होने के बावजूद, एक गैर राजनीतिक व्यक्ति, मनमोहन सिंह को आगे किया। सोनिया के उस फैसले पर सब ने मुहर लगा दिया।

उदारीकरण के पुरोधा, नरसिंहराव सरकार में वित्तमंत्री रहे मनमोहन सिंह की पूंजी उनकी ईमानदारी और वित्तीय मामलों में उनकी सूझबूझ थी। इस बार मनमोहन सिंह का कद तो बहुत बड़ा था, लेकिन लगातार दस साल तक सत्ता में शिखर पर रहते हुए वे खुद तो ईमानदार कहलाते रहे, लेकिन उनकी सरकार आजाद भारत की सबसे भ्रष्ट सरकार साबित हुई।

ईमानदार छवि वाले बेदाग प्रधानमंत्री, भ्रष्टाचारियों के पक्ष के खड़ा होकर सुप्रीम कोर्ट के आदेश को निरस्त करते हुए, आपराधियों को जीवनदान देने के पक्ष में खड़े दिख रहे थे। दूसरी ओर मनमोहन सिंह के विदेश में रहते, राहुल गांधी द्वारा दागी नेताओं पर सुप्रीम कोर्ट के फैसले कि विरुद्ध कैबिनेट द्वारा लाए गए अध्यादेश को फाड़ कर फेंकना, जनता के बदलते मिजाज को भांपते हुए, राहुल की इमेज बिल्डिंग की जमीन तैयार करने का निर्णायक फैसला था। यह साबित करता है मनमोहन सिंह नाममात्र के प्रधानमंत्री थे, सभी फैसले कहीं और से प्रभावित हो रहे थे। साफ है, मनमोहन सरकार का पूरा दस साल क्रोनी कैप्टलिज्म के सहारे चलता रहा।

इस दौरान यूपीए एक और यूपीए दो में, एक से बढ़कर एक भ्रष्टाचार के रिकॉर्ड टूटते रहे, औद्योगिक घराने, राजनेता और मीडिया, सत्ता से लाभान्वित होते रहे, लेकिन मनमोहन सिंह इससे पूरी तरह अनभिज्ञ रहे। भ्रष्टाचार के आरोप में उनके सरकार के एक मंत्री ए. राजा जेल चले गए। वित्तमंत्री पी. चिदंबरम पर लगातार अपने बेटे कार्ति चिदंबरम की कंपनी के लिए भ्रष्टाचार को अंजाम देने के आरोप लगते रहे। मार्च 2018 में पूर्व वित्तमंत्री के पुत्र कार्ति चिदंबरम भ्रष्टाचार

के एक आरोप में जेल भी चले गए। सत्ता में वित्तमंत्री की ताकत का फायदा उनके पुत्र, अपने व्यावसायिक ताकत बढ़ाने के लिए इस्तेमाल करते रहे। अपने पिता की ताकत से वे व्यावसायिक घराने को अवैध तरीके से लाभ पहुंचाते रहे। उन पर लगे आरोप के पक्ष में आईटी और प्रवर्तन निदेशालय की तरफ से दस्तावेज अदालत में पेश किए जाते रहे। लेकिन, कार्ति अपनी गिरफ्तारी पर रोक के लिए सुप्रीम कोर्ट से स्टे लेने में सफल होते रहे। कार्ति चिदंबरम पर आरोप है कि उन्होंने 2007 में आइएनएक्स मीडिया ग्रुप से दस लाख रुपये अपने पिता की तरफ से लिए, ताकि गैरकानूनी तरीके से विदेशी चंदा 305 करोड़ रुपये आईएनएक्स मीडिया को मिल सके। बिना वित्त मंत्री के सहयोग से यह संभव नहीं था। आईएनएक्स ग्रुप की मालकिन इंद्राणी मुखर्जी व उनके पति पीटर मुखर्जी ने यह बात सीबीआई के सामने तब स्वीकार की जब वे अपनी बेटी शीना बोहरा हत्याकांड में गिरफ्तार की गईं। पूर्व केंद्रीय मंत्री पिता चिदंबरम के वरिष्ठ वकील होने और कानून के गलियारे में ऊंची पहुंच होने के कारण इस मामले में उनके बेटे तक की गिरफ्तारी में सालों से राहत मिलती रही है। चिदंबरम गिरफ्तार होंगे, यह कोरी कल्पना थी। भारत में विपक्षी नेता की गिरफ्तारी से सहानुभूति के भय से सत्ता इससे डरती रही। लेकिन दौर बदल रहा था। देश के गृहमंत्री अब अमित शाह थे जिन्होंने 5 अगस्त, 2019 को कश्मीर को धारा 370 व 34ए से मुक्त कर बड़ा संदेश दे दिया था। चिदंबरम पर आरोप गंभीर थे, लेकिन सालों तक वे मीडिया के प्रिय रहे। चिदंबरम पर हाथ डालने की हिम्मत कहां थी किसी की। आरोप यह भी लगा कि 2जी घोटाले में संचार मंत्री ए. राजा को तो गिरफ्तार किया गया, लेकिन वित्त मंत्री से पूछताछ भी नहीं हुई, इसीलिए 2जी केस अदालत में साबित नहीं हो पाया। दिल्ली की पटियाला हाउस कोर्ट ने 21 दिसंबर, 2017 को बहुचर्चित 2जी घोटाले में ए. राजा समेत सभी आरोपी को बरी कर दिया। चिदंबरम को 2जी में तो राहत मिली, लेकिन बार-बार के कर्मों से यह राहत कब तक रहती!

'आईएनएक्स' मीडिया मामले में 'सीबीआई' उन्हें तलाश रही थी, लेकिन अदातल से झटका खाए चिदंबरम आंख मिचौली खेल रहे थे। फिर यकायक फिल्मी स्टाइल में 21 अगस्त, 2019 को आयोजित कांग्रेस की प्रेस कांफ्रेंस में रात आठ बजे पेश हुए। अपनी बात रखी और यूथ कांग्रेस की सुरक्षा घेरे में भाग गए। सीबीआई घात लगाए बैठी थी। लेकिन इन्हें पार्टी ऑफिस में गिरफ्तार कर

कोई खतरा मोल नहीं लेना चाहती थी। चिदंबरम नई दिल्ली के अपने जोर बाग स्थित घर पार्टी के कद्दावर वकील नेता अभिषेक मनु सिंघवी के साथ सलाह-मशविरा कर रहे थे कि सैकड़ों की संख्या में यूथ कांग्रेस नेता और मीडिया के सामने सीबीआई दीवार फांदकर चिदंबरम के घर में घुस गई। फिर दबोच कर उसी सीबीआई मुख्यालय ले गई जिसका उद्घाटन कभी गृहमंत्री रहते चिदंबरम ने किया था। फिर अदालत में पेश किए गए और देश के पहले गृहमंत्री को तिहाड़ी कहलाने का कलंक लगा गए। इक्यासी दिन तिहाड़ में रहने के दौरान सोनिया गांधी के पुत्र राहुल, पुत्री प्रियंका और राजनीतिक सलाहकार अहमद पटेल बारी-बारी से मुलाकाती बन तिहाड़ यात्रा क्यों करते रहे, यह रहस्य बना रहा।

श्री अय्यर फरवरी 2017 में प्रकाशित अपनी दस्तावेजी चर्चित किताब 'एनडीटीवी फ्रॉड' में आयकर विभाग, प्रवर्तन निदेशालय और सेबी के दस्तावेजों के हवाले से लिखते हैं- पिता, देश के वित्त मंत्री पी. चिदंबरम के कारण, कार्ति की पहुंच भारत सरकार में बहुत अंदर तक थी। अय्यर के मुताबिक यही कारण है कि कार्ति की वजह से ही 'एनडीटीवी' जैसी मीडिया संस्थान में भ्रष्टाचार के धन मनी लॉड्रिंग और हवाला के तहत आते रहे। इसी पैसे ने मीडिया के एक बड़े वर्ग को भ्रष्टाचार के खिलाफ आवाज उठाने के बदले उसे ढंकने को विवश किया। आगे इस मामले में आप विस्तारपूर्वक पढ़ेंगे कि कैसे 'क्रोनी कैप्टलिज्म' के सहारे सत्ता का दुरुपयोग कर देश की अर्थव्यस्था को तबाह किया गया। यह सब होता रहा, लेकिन प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह को इसकी कोई खबर नहीं रही ! अपनी सरकार के आकंठ भ्रष्टाचार में डूबे रहने को लेकर अनभिज्ञ प्रधानमंत्री के इसी मौन पर आगे चलकर प्रधानमंत्री बने नरेंद्र मोदी ने 2017 में संसद में दिए एक भाषण में कहा 'डॉ मनमोहन सिंह ही वह शख़्स हैं जो बाथरुम में रेनकोट पहन कर नहाने की कला जानते हैं।" प्रधानमंत्री मोदी के इस बयान पर संसद में और संसद के बाहर खूब हंगामा हुआ था। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का यह बयान इस ओर इशारा था कि मनमोहन सिंह की सरकार कैसे उनकी जानकारी के बिना चलती थी। वे खुद तो ईमानदार बने रहे, लेकिन उनके मातहत चलने वाली सत्ता के दुरुपयोग से नेता, मंत्री, बाबू, औद्योगिक घराना और मीडिया एक-दूसरे के सहारे सत्ता और धनबल की ताकत पाते रहे। 2014 के लोक सभा चुनाव से पहले भाजपा और आम आदमी पार्टी ने कांग्रेस की यूपीए सरकार को आपसी सौदेबाजी की सरकार बताते

हुए क्रोनी कैप्टलिज्म के सहारे चलने वाली सरकार की संज्ञा दी। ऐसी सरकार जिसका उपयोग, जनता के हित के बदले व्यावसायिक घराने, मीडिया घराने और सत्ता के बिचौलियों के हित में क्रोनी कैप्टलिज्म के सहारे चलती रही हो।

सन 2017 के आखिर में हीरा व्यापारी नीरव मोदी और मेहुल चौकसी के द्वारा कानून को ठेंगा दिखाते हुए, पंजाब नेशनल बैंक से 12 हजार करोड़ रुपये का लोन लेकर, देश छोड़ कर गायब होने जाने का मामला सामने आया। इस मामले से यह साबित हुआ कि भारतीय सत्ता में धनकुबेर, उसी बैंक से हजारों करोड़ लोन बिना सबूत के हासिल कर लेते है। फंसने की आशंका में आसानी से देश छोड़ कर गायब हो जाते हैं। सत्ता के सहारे धनकुबेर हजारों करोड़ की लूट का यह खेल उसी बैंक के साथ खेलते हैं, जिस बैंक से एक आम किसान को खेती के लिए लाख रुपये का लोन हासिल करना भी भारी पड़ता है। हासिल कर लेने के बाद बैंक को चुकाने में असमर्थ होने पर फंदे का सहारा लेना पड़ता है। यही क्रोनी कैप्टलिज्म है। क्रोनी कैप्टलिज्म भ्रष्टाचार का वह टिकाऊ धरातल है जिसके सहारे आपसी सहयोग से भारत की सत्ता सालों से चल रही है, जिसमें दागियों और भ्रष्टाचारियों का बोलबाला रहा है।

क्रोनी का शाब्दिक अर्थ, ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी के मुताबिक होता है- 'अ क्लोज फ्रेंड ऑर कंपैनियन' (करीबी दोस्त या सखा)। इसकी उत्पत्ति 17वीं शताब्दी के मध्य की बताई जाती है। यह ग्रीक भाषा के शब्द ख्रोनियोज से बना है जिसका अर्थ होता है लंबे समय तक टिकने वाला। क्रोनी कैप्टलिज्म शब्द का धड़ल्ले से इस्तेमाल 19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में शुरू हुआ, जब पूंजीवाद की कमजोरियां मुद्दा बनने लगीं। क्रोनी कैप्टलिज्म का मतलब अमूमन ऐसी अर्थव्यवस्था से होता है जिसमें बिजनेस की कामयाबी सत्ता में बैठे लोगों से करीबी रिश्तों पर निर्भर करती है। आप आगे पढ़ेंगे कि देश की अब तक की सबसे भ्रष्ट मानी जाने वाली यूपीए सरकार में सत्ता की ताकत कैसे सरकार से जुड़े लोगों के सहारे पूंजीवाद के तहत व्यावसायिक घराने और मीडिया ने अर्जित कर ली।

आदर्श स्थिति यह बताई जाती है कि किसी बिजनेस की सफलता मुक्त बाजार की स्वस्थ प्रतियोगिता से तय हो। हालांकि पूंजीवाद से असहमति रखने वाली वैचारिक धाराओं के विद्वान इस व्याख्या को ठुकराते हुए कहते हैं कि जिसे क्रोनी कैप्टलिज्म कहा जाता है वह दरअसल किसी भी कैप्टलिज्म का निश्चित

परिणाम होता है। नोम चॉम्स्की की दलील है कि चूंकि बिजनेस से पैसा बनता है और पैसों से राजनीतिक ताकत हासिल होती है, इसलिए बिजनेस पक्के तौर पर अपनी इस ताकत का इस्तेमाल सरकार को प्रभावित करने के लिए करेगा।

बहरहाल, अपने देश में 2014 के लोकसभा चुनाव से इस शब्द का इस्तेमाल सबसे ज्यादा हो रहा है। तीनों प्रमुख पार्टियां इस शब्द का इस्तेमाल करती रहीं। बीजेपी और आम आदमी पार्टी, कांग्रेस के यूपीए सरकार पर क्रोनी कैप्टलिज्म को बढ़ावा देने का आरोप यह कहते हुए लगाती रही कि टू जी घोटाला, कोयला घोटाला आदि के जरिये यूपीए नेताओं के करीबी कारोबारियों को अनुचित फायदा पहुंचाया गया। हम आगे इस पर विस्तार से चर्चा करेंगे कि कैसे मीडिया क्रोनी कैप्टलिज्म के इस सिद्धांत का फायदा उठाते हुए लोकतंत्र के चौकीदार की भूमिका छोड़कर सत्ता के भ्रष्टाचार का हिस्सेदार हो गई।

सत्ता और मीडिया: किसने कितनी निभाई जिम्मेदारी

दस साल की यूपीए कार्यकाल और सोनिया की जवाबदेही

चुनाव प्रचार के दौरान बर्ष 1991 के मई महीने में लिट्टे के आतंकियों द्वारा राजीव गांधी की हत्या के बाद कांग्रेस अनाथ-सी हो गई थी। पार्टी के लिए हताशा का यह दौर, 1984 में प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी की हत्या के बाद कांग्रेस और देश की कमान गांधी परिवार के वारिस राजीव गांधी के संभालने से बिल्कुल अलग था। राजीव गांधी की हत्या की सहानुभूति का असर दक्षिण भारत में हुआ, क्योंकि उनकी हत्या से पहले उत्तर भारत के ज्यादातर हिस्से में चुनाव हो चुके थे। कांग्रेस चुनाव जीत कर किसी तरह से सरकार बनाने की हालत में थी। नेहरू गांधी परिवार की छाया की आदी रही कांग्रेस की कमान राजीव गांधी के बच्चे संभाल सकें, इतने बालिग नहीं थे वे। उधर सोनिया गांधी ने खुद को राजनीति से दूर रखने का फैसला कर लिया था।

इस दौरान पांच साल तक नरसिंह राव की कांग्रेस सरकार पहली बार गांधी नेहरू परिवार के साये से एकदम दूर रही। फिर, 1996 का लोकसभा चुनाव कांग्रेस पार्टी हार गई। नरसिंह राव ने पार्टी अध्यक्ष पद से भी इस्तीफा दे दिया। जगजीवन राम के बाद पहली बार गैर सवर्ण किसी नेता को पार्टी की कमान सौंपी गई। सालों तक पार्टी के कोषाध्यक्ष रहे, निष्ठावान नेता सीताराम केसरी को पार्टी अध्यक्ष

बनाया गया। कांग्रेस चुनाव हार गई। अटल बिहारी वाजपेयी के नेतृत्व में एनडीए की सरकार बनी, लेकिन वह सदन में बहुमत साबित न कर पाने के कारण 13 दिन के अंदर ही गिर गई। अब कांग्रेस ने भाजपा को रोकने के लिए संयुक्त मोर्चा सरकार को बाहर से समर्थन देकर सत्ता पर अपना दबदबा बनाने का प्रयास जारी रखा। दबदबा इस कदर कि कुछ ही महीने में बिना किसी कारण के कांग्रेस ने देवेगौड़ा सरकार से समर्थन वापस ले लिया। फिर गैर राजनैतिक व्यक्ति इंद्रकुमार गुजराल को प्रधानमंत्री बनाया गया। कांग्रेस ने कुछ ही महीने में डीएमके के तीन मंत्री को सरकार से हटाने की मांग करते हुए गुजराल सरकार को भी गिरा दिया। सत्ता से दूर रहना कांग्रेस के लिए आसान नहीं था सत्ता के बिना देश की सबसे बड़ी पार्टी के उतावनेपन के इस रुख के कारण देश में मध्यावधि चुनाव की नौबत आ गई।

1998 के इस मध्यावधि चुनाव में राजनीति से दूर जा चुकी सोनिया गांधी ने भी सीताराम केसरी संग जमकर चुनाव प्रचार किया। बावजूद इसके कांग्रेस बुरी तरह से चुनाव हार गई। दिलचस्प यह है कि अबकी बार, हार का पूरा ठीकरा सीताराम केसरी पर फोड़ दिया गया। पूर्व राष्ट्रपति प्रणब मुखर्जी अपनी किताब 'the coalition years' में लिखते हैं - "5 मार्च, 1998 को सीताराम केसरी ने बतौर कांग्रेस अध्यक्ष कार्य समिति की बैठक बुलाई थी। इस बैठक में जितेंद्र प्रसाद, शरद पवार और गुलाम नबी आजाद ने सोनिया गांधी को पार्टी अध्यक्ष बनाने की पहल की थी। केसरी ने उनके सुझाव को खारिज कर दिया।" दरअसल सोनिया मैदान में आ चुकी थीं, ऐसे में गांधी नेहरू परिवार के बाहर के किसी नेता का पार्टी अध्यक्ष रहना कांग्रेसियों को स्वीकार्य नहीं था। लेकिन, चाचा केसरी पार्टी अध्यक्ष के बाद प्रधानमंत्री का सपना पाले बैठे थे, उन्हें अब यह स्वीकार्य नहीं था कि कोई उनका हक मार ले।

उस समय के बड़े पत्रकार और कांग्रेस की राजनीति पर गहरी पकड़ रखने वाले राशिद किदवई अपनी किताब 'ए शार्ट स्टोरी ऑफ द पीपल बिहाइंड फॉल एंड राइज ऑफ द कांग्रेस' में लिखते हैं.... 'दिल्ली के 24 अकबर रोड स्थित कांग्रेस मुख्यालय में वह हुआ जो सवा सौ साल की पार्टी के इतिहास में कभी नहीं हुआ। सीताराम केसरी को 14 मार्च, 1998 को बेइज्जत कर पार्टी कार्यालय से निकाल दिया गया। पार्टी अध्यक्ष के रूप में कांग्रेस कार्यालय से रोते हुए निकले केसरी दुबारा कभी पार्टी कार्यालय नहीं लौटे। अपनों से अपमानित होने

के कारण उन्होंने राजनीति से संन्यास ले लिया। वर्ष 2000 में जब राज्यसभा का उनका कार्यकाल समाप्त हुआ, उन्होंने उच्च सदन की सदस्यता लेने से इंकार कर दिया।" भारत में उदारीकरण के प्रणेता नरसिंह राव जैसे नेता सत्ता से बाहर होते ही गुमनामी की भेंट चढ़ गए। मीडिया को कभी उनकी कोई सुध नहीं रही। ठीक वैसे ही, देश की सबसे बड़ी पार्टी के अध्यक्ष सीताराम केसरी रोते हुए 24 अकबर रोड से निकलकर किधर गए, इसकी सुध भारतीय मीडिया को कभी रही ही नहीं। ऐसा क्या कारण हो सकता है?

दरअसल, पार्टी कार्यालय से, पार्टी अध्यक्ष सीताराम केसरी को भगाए जाने के दो दिन बाद ही 16 मार्च, 1998 को सोनिया गांधी को कांग्रेस पार्टी का राष्ट्रीय अध्यक्ष चुन लिया गया। मीडिया उसी में रम गई ! सालों बाद गांधी नेहरू परिवार का वारिस भारतीय राजनीति में लौटकर आया था, जिसके बिना कांग्रेस अनाथ-सी हो गई थी। मीडिया के लिए यह ज्यादा महत्वपूर्ण था। लेकिन, राजनीति की इस रपटीली पिच पर अनुभवहीन सोनिया के लिए बैटिंग आसान कहां था ! वरिष्ठ पत्रकार राशिद किदवई अपनी किताब में लिखते हैं... '17 अप्रैल 1999 को 13 महीने की अटल बिहारी वाजपेयी सरकार भी गिर गई। कांग्रेस को अब सत्ता नजदीक दिखने लगी, लेकिन सोनिया के लिए दूर। पार्टी के अंदर ही शरद पवार, तारिक अनवर व पीए संगमा जैसे दिग्गजों ने सोनिया को प्रधानमंत्री का उम्मीदवार घोषित किए जाने के खिलाफ बगावत कर दी। तीनों को पार्टी से तो निकाल दिया गया, लेकिन कांग्रेस सत्ता से और दूर चली गई। अटल बिहारी वाजपेयी इस बार बहुमत के साथ सरकार बना ले गए। मई 1999 में फिर चुनाव हुआ। वाजपेयी के नेतृत्व में एनडीए मजबूती के साथ सत्ता में वापस आ गई।'

केंद्र में 24 दलों की गठबंधन सरकार की अगुआई अटल बिहारी वाजपेयी कर रहे थे और दूरदर्शन पर विपक्ष की नेता सोनिया गांधी इंटरव्यू दे रही थीं! सरकार चाहे किसी की भी हो, यह उस दौर के लिए ही नहीं, आज के दौर के लिए भी, बड़ी बात है कि दूरदर्शन पर नेता विपक्ष का अपने सहूलियत के हिसाब से इंटरव्यू हो। दिलचस्प यह है कि बतौर पत्रकार, राजीव गांधी के बेहद करीब रहे राजीव शुक्ला उस दौरान भाजपा से जुड़े थे। वरिष्ठ पत्रकार राकेश आर्या कहते हैं "भाजपा और कांग्रेस दोनों में अंदर तक पहुंच रखने में राजीव शुक्ला माहिर थे। एनडीए सरकार के दौरान दूरदर्शन पर कांग्रेस अध्यक्ष सोनिया गांधी का इंटरव्यू

प्रसारित कर राजीव शुक्ला ने देश के सामने सोनिया की बेहतरीन तस्वीर पेश की।" उस इंटरव्यू में राजनीति रूप से अनुभवहीन सोनिया गांधी को त्याग की मूर्ति के रूप में पेश किया गया। सवाल दर सवाल सोनिया बताती रहीं कि उन्होंने हताशा के दौर से निकालकर कांग्रेस पार्टी को खंडित होने से बचा लिया। कांग्रेस मजबूत होगी, तभी देश मजबूत होगा। दूरदर्शन पर बैठकर वह बताती रहीं कि कैसे राजीव गांधी ने अपनी मां इंदिरा गांधी से उन्हें मिलवाया। वह कैसे अपने मां-बाप को नाराज कर राजीव से शादी कीं। उनके पति पर बोफोर्स घोटाले का दाग लगाया गया। हर चुनाव में बोफोर्स का भूत आता है। लेकिन, अटल जी 24 दलों को साथ लेकर सरकार चला रहे हैं उसमें सबके सब क्या पाक साफ हैं?

जानकार कहते हैं इस इंटरव्यू ने ही सोनिया गांधी को राजनीतिक पुनर्जन्म दिया। राजीव शुक्ला ने भाजपा से जुड़े रहने के बावजूद कांग्रेस सुप्रीमो लिए वह काम किया जिसकी कल्पना उस दौर में नहीं की जा सकती थी। इस इंटरव्यू ने कांग्रेस में राजीव शुक्ला के लिए न सिर्फ दरवाजे खोल दिए, बल्कि वह राष्ट्रीय प्रवक्ता बनते हुए केंद्र सरकार में मंत्री व सोनिया-सेना के सबसे भरोसेमंद सिपाही हो गए। आज तक किसी पत्रकार की सत्ता में पहुंच और हैसियत राजीव शुक्ला -सी नहीं हो पाई। इस जद्दोजहद में कई पत्रकार संघर्षरत रहे, लेकिन सत्ता में पहुंच तो दूर, राज्यसभा का सपना, राजीव शुक्ला बनने की चाहत रखने वाले ज्यादातर अति महात्वाकांक्षी पत्रकारों के लिए पद्म पुरस्कार की चौखट से टकराकर ही वापस लौटता रहा।

अटल बिहारी वाजपेयी सरकार के जाने के बाद दस साल तक पर्दे के पीछे, यूपीए सरकार की सुप्रीमो रहने के बावजूद सोनिया, मीडिया के सामने न तो कभी आईं, न ही मीडिया ने उनसे सवाल करने की जहमत उठाई। 2004 के लोक सभा चुनाव से पहले सोनिया ने इलाहाबाद के आनंद भवन स्थित स्वराज भवन में 'एनडीटीवी' के प्रोग्राम 'वॉक द टॉक' के लिए शेखर गुप्ता को इंटरव्यू दिया था। हम आगे इसकी चर्चा करेंगे।

लोकतांत्रिक व्यवस्था में जनता और सरकार के बीच संवाद ही लोकतंत्र की असली ताकत है। सोशल मीडिया के इस दौर में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने इसे ही अपना हथियार बना लिया। आकाशवाणी पर प्रसारित 'मन की बात' कार्यक्रम में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने ज्योंहि ही देशवासियों से "नरेंद्र मोदी एप" से जुड़ने का

अह्वान किया, सोशल मीडिया से जुड़े लगभग एक चौथाई लोग नरेंद्र मोदी एप से जुड़ गए। सत्ता में आने के दो साल बाद से मोदी का देशवासियों से लगातार 'नरेंद्र मोदी एप' के सहारे संवाद जारी है। इसके अलावा सोशल मीडिया के इस दौर में टेक्नोक्रेट मोदी, ट्विटर, फेसबुक और इंस्टाग्राम से भी लगातार आम लोगों से जुड़े रहे। उनका जनता से यहां संवाद ही नहीं जारी रहा, बल्कि उनकी हर एक गतिविधि से राष्ट्र अवगत होता रहा। दूसरी ओर मेनस्ट्रीम मीडिया की शिकायत रही कि प्रधानमंत्री प्रेस से बात नहीं करते। जबकि, हर साल दिवाली मिलन के नाम पर सीधे मीडियाकर्मी से मिलने की परंपरा मोदी ने ही शुरू की। मोदी ने पत्रकारों की एक कैटेगरी से मिलने के बदले पत्रकारों के विशाल समूह से एक साथ मिलने की परंपरा शुरू कर पत्रकारों व संपादकों के बीच प्रिविलेज होने के गुरूर को खत्म कर दिया। लेकिन, मोदी के खिलाफ इस शिकायत में दम है कि उन्होंने अपने अबतक के कार्यकाल में कोई प्रेस कांफ्रेंस नहीं की।

प्रधानमंत्री मोदी के खिलाफ मेन स्ट्रीम मीडिया की यह शिकायत आक्रोश में बदल रहा था, उसी दौरान साल 2018 के पहले महीने में ही उन्होंने एक हिंदी और एक अंग्रेजी चैनल को लगभग एक-एक घंटे का इंटरव्यू देकर सवालों का बाजार और गर्म कर दिया। उनके ऊपर चौतरफा हमला किया जाने लगा। पत्रकारों के एक वर्ग ने शिकायत करना शुरू किया कि नरेंद्र मोदी ने अपने पसंदीदा, चापलूस पत्रकारों को ही इंटरव्यू दिया, ताकि उनकी पसंद का ही सवाल किया जा सके। प्रधानमंत्री का इंटरव्यू पाने में असफल पत्रकारों ने अपने ही वरिष्ठ साथियों को ''फैन ब्वाय'', "चापलूस" और चीयर 'लीडर' जैसे तमगों से सुशोभित करना शुरू कर दिया। जनवरी 2018 के आखिरी हफ्ते में "द वायर" जैसी वेबसाइट पर वरिष्ठ पत्रकार विनोद दुआ ने प्रधानमंत्री पर प्रेस कांफ्रेंस से भागने का आरोप लगाते हुए यह साबित करने का प्रयास किया कि वे मीडिया से डरते हैं। इसके लिए उन्होंने करण थापर और विजय विद्रोही के इंटरव्यू की क्लिपिंग का भी सहारा लिया। दुआ ने प्रधानमंत्री को इस बात के लिए कोसा कि वे पहले के प्रधानमंत्रियों की तरह मीडिया सलाहकार नहीं रखते। इसके लिए उन्होंने बाकायदा मनमोहन सिंह के मीडिया सलाहकार के नाम गिनाए और प्रेस के सामने पेश होने के लिए मनमोहन सिंह का खूब महिमामंडन किया। (2)

विनोद दुआ का यह दर्शन तब था जब देश में भ्रष्टाचार का मुद्दा गर्म होने के दौरान उन्होंने अपनी ऊंची पहुंच के बावजूद न तो सोनिया गांधी, न पीएम

मनमोहन सिंह से सवाल किया, न ही उनके मंत्रिमंडल के किसी कद्दावर मंत्री से। हद तो यह जब देश में भ्रष्टाचार का माहौल गर्म था दुआ देशभर में घूम-घूम कर खाते थे। यही उनकी गंभीर पत्रकारिता थी। कैमरे पर चटखारे लेते हुए कहते थे मैं देश के लिए खा रहा हूं।

दूसरी ओर आरफा खानम जैसे पत्रकारों ने तो खुलकर 'टाइम्स नाउ' व 'जी न्यूज' के संपादकों का मजाक उड़ाया। अलग-अलग वेबसाइट और सोशल मीडिया पर अनेकों वरिष्ठ पत्रकारों ने अपने ही साथी पुरुष संपादक को 'फैन ब्वाय' और महिला पत्रकार (संपादक) को चियर लीडर जैसी उपमा से विभूषित किया गया। यह इसलिए, क्योंकि उनके मुताबिक इंटरव्यू लेने वाले संपादकों से पत्रकारिता धर्म का पालन न करते हुए कोई कठोर सवाल प्रधानमंत्री से नहीं किए। वह एक-एक सवाल गिनाए जो प्रधानमंत्री से पूछा जाना चाहिए थे। सांप्रदायिकता और विकास पर सवाल नहीं पूछा गया, बल्कि उनसे नर्म नाजुक सवाल पूछे गए। प्रधानमंत्री का इंटरव्यू लेने वाले पत्रकारों को किसी हालत में पत्रकार नहीं कहा जा सकता। (2)[1]

भारतीय पत्रकारिता में यह एक नई परंपरा की शुरुआत 2014 के लोकसभा चुनाव के बाद देखने को मिली, जब पत्रकार भी खुलेआम दो खेमों में बंटे नजर आने लगे। वे एक-दूसरे को भक्त, फैन ब्वाय और चियर लीडर, लुटियन पत्रकार जैसे अपमानजनक उपमा से संबोधित करने लगे। बड़ी संख्या में पत्रकार खुलेआम अपने न्यूज चैनल, वेब चैनल, यू-ट्यूब चैनल व सोशल मीडिया के अलग-अलग प्लेटफॉर्म पर प्रधानमंत्री मोदी को चुनौती देने लगे। कभी सिर्फ कस्बाई पत्रकारिता करने वाले रवीश कुमार जैसे पत्रकार यकायक बड़े हो गए, उन्होंने सीधे प्रधानमंत्री को चुनौती देनी शुरू कर दी, भक्तों को तो इंटरव्यू देते हैं मोदी जी हिम्मत है तो हमें दें। पत्रकार खुद को शेर और पीएम को गीदड़ साबित करने लगे। यह सब पहली बार हो रहा था। फिर बारी-बारी से वे लुटियन पत्रकार, जो कभी मनमोहन सिंह से सवाल नहीं कर पाए कि आपकी सरकार में इतना भ्रष्टाचार क्यों है? वे सब यकायक हिम्मत वाले हो गए। प्रधानमंत्री को चुनौती देने लगे कि उन्हें हिम्मत है तो मेरे सवाल का जवाब दें। सवाल अहम था कि ऐसा क्या होने लगा, जो पहले नहीं होता था ? प्रेस कांफ्रेंस का मतलब है, जनप्रतिनिधियों का जनता के सवालों का जवाब देना, पत्रकार उसमें एक माध्यम होता रहा है। यही परंपरा रही

है। राजीव गांधी के बाद कमोबेश सभी प्रधानमंत्री ने इस परंपरा को निभाया है। एक बार ही सही। लगभग ढाई दशक तक राजनीतिक गलियारों और संसद की रिपोर्टिंग करने वाले वरिष्ठ पत्रकार रोशन गौर कहते हैं कि नरसिंह राव से लेकर अटल बिहारी वाजपेयी तक सभी प्रधानमंत्री बीच-बीच में मीडिया से मिलते थे। वे कहते हैं, 'अटल बिहारी वाजपेयी बहुत सहज थे। संसद में या पार्टी ऑफिस में यूं ही मीडिया से बात कर पत्रकारों के लायक कोई-न-कोई खबर दे ही देते थे। लेकिन, उस समय तक न इतने टीवी चैनल थे, न पत्रकार। संसद की रिपोर्टिंग कम लोग करते थे तो प्रधानमंत्री जैसे संवैधानिक पद पर बैठे शख्सियत का पत्रकारों से बात करना भी बहुत असहज नहीं होता था। धीरे-धीरे नेता और पत्रकारों के बीच दूरी बढ़ती चली गई। नरेंद्र मोदी ने तो ये दूरी एकदम से बढ़ा दी।'

पत्रकारों का एक वर्ग जो शिकायत करते हैं कि प्रधानमंत्री मोदी, मीडिया के सवालों का जवाब नहीं देते हैं! वे भी स्वीकारते हैं कि एक वक्त मीडिया के लिए वे बेहद सहज थे। वरिष्ठ पत्रकार मधु त्रेहान को 'न्यूज लॉन्ड्री' यू-ट्यूब शो के लिए दिए एक इंटरव्यू में पत्रकार राजदीप सरदेसाई बताते हैं कि गुजरात दंगा के दौरान सर्किट हाउस में उन्होंने मुख्यमंत्री नरेंद्र मोदी का इंटरव्यू लिया था। वह वीडियो टेप किसी कारणवश खराब हो गया। राजदीप ने फोन पर बात कर मोदी को अपनी लाचारी बताई। अपनी व्यस्तता में भी मुख्यमंत्री मोदी ने वक्त निकालकर देर शाम दुबारा राजदीप को इंटरव्यू दिया। टीवी में काम करने वाला कोई भी पत्रकार यह समझ सकता है कि इस तरह से दुबारा इंटरव्यू हासिल करना कितना मुश्किल होता है।

मधु त्रेहान राजदीप को याद दिलाते हुए सवाल करती हैं कि गुजरात दंगा में पहली बार मजहब की जानकारी देने वाली रिपोर्टिंग उन्होंने ही की। जिसके लिए तत्कालीन मुख्यमंत्री ने फोन कर, ऐसा न करने की सलाह दी थी। राजदीप इसे स्वीकार करते हुए कहते हैं- ''हां, उन्होंने कहा था कि दंगे वाली जगह और मरने मारने वालों का महजब मत बताओ। इससे तनाव बढ़ने की आशंका रहती है। लेकिन, मुझे यह जरूरी लग रहा था। मैं पुराने ढर्रे से हटकर काम करना चाहता था। यह बताना कि खास समुदाय के साथ ऐसा हुआ, इसके बदले मैं साफ कहना चाहता था कि किस समुदाय के साथ क्या हुआ।[3] यह बात अलग है कि उसी गुजरात दंगा से पहले गोधरा में हुए नरसंहार, जिसमें अयोध्या से लौट

रहे 59 कारसेवकों को जिंदा जला दिया गया। ट्रेन की एक बॉगी के अंदर, जिंदा जला दिए गए निर्दोषों का मजहब या उन्हें जिंदा जला देने वाले बहाबी गुजराती मुसलमानों का मजहब कभी राजदीप या उन जैसे पत्रकारों ने नहीं बताए। यह न कभी गोधरा से पहले हुआ, न कभी गोधरा के बाद। बाद में तभी हुआ जब पीड़ित मुसलमान रहे। बाद के दौर में 2017 से 2018 के बीच इसी तरह के मीडिया ग्रुप ने गो तस्करी में जयपुर में मारे गए पहलुखां, मोटरसाइकिल चोरी में झारखंड के जमशेदपुर में पिटाई के बाद अस्पताल में जान गंवाने वाले तबरेज अंसारी को मॉब लिंचिंग और मुसलमान होने की सजा बना खबरों से खेलती रही, लेकिन इसी तरह राष्ट्रीय राजधानी दिल्ली में 2018 में अंकित शर्मा, फिर 2020 अक्टूबर में राहुल नामक युवक की मुस्लिम युवकों की भीड़ द्वारा मौत के घाट उतार देने पर चुप रही। मॉब लिंचिंग शब्द गायब हो गए। साल 2020 में ही महाराष्ट्र के पालघर में दो साधु और उसकी गाड़ी के चालक को भीड़ ने कैमरे पर पीट-पीट कर हत्या कर दी लिबरल मीडिया चुप रही।

गुजरात सरकार के खिलाफ एक याचिका सुप्रीम कोर्ट में थी जिसमें गुजरात सरकार पर धार्मिक स्थलों के साथ छेड़छाड़ का आरोप लगा था। दरअसल, गुजरात की तत्कालीन मोदी सरकार ने राज्य की सड़कों को बेहतर बनाने के लिए रास्ते में आने वाले अस्थायी मंदिरों और मजारों को हटाने का सिलसिला शुरू किया था। मोदी सरकार के खिलाफ उस मामले की सुनवाई की कड़ी में ही सुप्रीम कोर्ट ने एक ऐतिहासिक फैसला जारी कर देश के सभी प्रांतों के मुख्य सचिवों को नोटिस जारी कर विकास कार्यों में बाधा बन रहे धार्मिक स्थलों को हटाने का निर्देश जारी किया था। यह अलग बात है कि ज्यादातर राज्यों ने वोट बैंक को ध्यान में रखते हुए विकास की राह में बाधा बने धार्मिक स्थलों को नहीं छेड़ा। मोदी ने गुजरात की तस्वीर बदलने का फैसला उसी वक्त किया, जब उन्हें सत्ता मिली थी। 'न्यूज लॉन्ड्री' को दिए उसी इंटरव्यू में राजदीप सरदेसाई, मधु त्रेहान को यह भी बताते हैं कि तटीय गुजरात के एक इलाके में सड़क की चौड़ाई बढ़ाने के लिए किसी छोटे से अस्थायी मंदिर को हटाया गया था जिसकी खबर एनडीटीवी (उस समय स्टार न्यूज पर चलता था) पर चली तो मोदी ने फोन कर कहा था- ''राजदीप यह मत करो। वह मंदिर नहीं था। ऐसी खबरों से माहौल खराब होता है। सरकार के लिए काम करना मुश्किल होता है।'' (3)[1]

नरेंद्र मोदी अपने कई इंटरव्यू में इन सब बातों का जिक्र कर चुके हैं, लेकिन कभी किसी पत्रकार ने यह स्वीकार नहीं किया था। उन पत्रकारों ने तो कभी नहीं, जिनने गुजरात दंगा के लिए एक दशक से ज्यादा समय तक मोदी को कठघरे में तब भी रखा जब सुप्रीम कोर्ट और उसकी बनी एसआईटी ने उनके खिलाफ सभी आरोपों को बेदम माना। साख के पेशे के जिम्मेदार पत्रकारों ने कैसे गुजरात दंगे के लिए मोदी के खिलाफ साजिशन रिपोर्टिंग की, यह सब एक बानगी भर है। लगातार मीडिया के एक वर्ग के इस रवैये ने मोदी और मीडिया की दूरी बढ़ा दी।

लगभग तीन दशक तक भाजपा बीट की रिपोर्टिंग करने वाले वरिष्ठ पत्रकार राकेश आर्या बताते हैं कि नरेंद्र मोदी जब दिल्ली में भाजपा के महासचिव थे तो अक्सर पत्रकारों से घिरे रहते थे। यह सिलसिला गुजरात में उनके मुख्यमंत्री रहने के दौरान तक जारी रहा। लेकिन, 2002 गुजरात दंगा के बाद दिल्ली और गुजरात की मीडिया, उनके खिलाफ एकतरफा रिपोर्टिंग करने लगी। तथ्यों को तोड़-मरोड़ कर पेश किया जाने लगा। पत्रकार राकेश आर्या के मुताबिक, "गुजरात का क्षेत्रीय अखबार 'गुजरात समाचार' का प्रदेश में बोलबाला था। जब मोदी गुजरात समाचार के पत्रकार से बात करते थे तो अखबार उसे तोड़-मरोड़ कर पेश करता था। ऐसे में मोदी ने उसी अखबार में सरकार की तरफ से पंपलेट डलवा कर अपनी बात रखनी शुरू कर दी।' एक वाक्या मुझे याद आता है, गुजरात दंगा में अदालती फैसले पर रिपोर्टिंग के लिए मैं फरवरी 2011 में अहमदाबाद में था। वहीं प्रेस क्लब में बातचीत के दौरान वहां के पत्रकारों ने बताया कि गुजरात दंगा के बाद मोदी के खिलाफ पत्रकारों ने जब एकतरफा रिपोर्टिंग शुरू की तो वे प्रेस कांफ्रेंस में रिपोर्टर के बदले सिर्फ कैमरामैन और फोटोग्राफर को बुलाकर अपनी बात रखते और प्रेस विज्ञप्ति दे देते थे। जब मीडिया ने सरकार के इस रुख के खिलाफ अपना कैमरामैन भेजना बंद कर दिया तो मोदी सरकार अपनी बात रखने के लिए खुद सीडी बनवा कर मीडिया दफ्तरों में भेज दिया करती थी। वह सोशल मीडिया से पहले का दौर था।

सन् 2010 के बाद नरेंद्र मोदी देश के पहले मुख्यमंत्री थे जिन्होंने सोशल मीडिया का इस्तेमाल करना शुरू किया। आज भी वे देश में सोशल मीडिया पर सबसे सक्रिय नेता हैं। ट्विटर पर और फेसबुक पर उन्हें फॉलो करने वालों की फेहरिस्त देश के किसी भी सुपरस्टार को बौना कर देता है।

सोशल मीडिया का आना मोदी के लिए वरदान साबित हो गया। गुजरात दंगा और उसके बाद की रिपोर्टिंग में पत्रकारों के रवैया से मोदी को धीरे-धीरे मीडिया से विरक्ति हो गई और वे अपने काम में लीन रहते हुए, अपनी हर बात जनता तक पहुंचाने और जनता से संवाद कायम करने के लिए सोशल मीडिया पर शेयर करने लगे। रेडियो पर मन की बात व 'नरेंद्र मोदी एप' के माध्यम से सोशल मीडिया पर जनता से सीधा संवाद कायम करना शुरू कर दिया। लेकिन, सोशल मीडिया के दौर में भी मोदी से ठीक पहले प्रधानमंत्री रहे मनमोहन सिंह या पर्दे के पीछे से सरकार चलाने वाली सोनिया गांधी या राहुल गांधी भी सोशल मीडिया से कमोबेश दूर ही रहे। राजदीप सरदेसाई कहते हैं, 'एक बार उन्होंने राहुल से पूछा कि आज के दौर में भी वे पुरातन क्यों बने हैं, सोशल मीडिया पर क्यों नहीं हैं? तो राहुल ने कहा, वे जनता से आमने-सामने बात करने में ज्यादा सहज हैं।'(3)[2]

सोशल मीडिया से दूर रहे यूपीए सरकार के दो कार्यकाल में प्रधानमंत्री रहे मनमोहन सिंह ने कुछ चुनिंदा संपादकों के संग प्रेसवार्ता, सन 2011 में अपने सरकारी निवास 7-आरसीआर में की थी। पहले कार्यकाल में भी विज्ञान भवन में मनमोहन सिंह ने पत्रकारों से बातचीत की थी। लेकिन मीडिया, प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह से कभी सख्त सवाल नहीं करती थी। वे भली-भांति जानते थे कि मनमोहन प्रधानमंत्री तो थे, लेकिन सत्ता की कमान पूर्ण रूप से सोनिया गांधी के हाथ में थी।

जब यूपीए सरकार, जनता के प्रति जवाबदेह थी, घोटालों का अंबार लगा था, कॉमनवेल्थ, 2जी व कोयला घोटालों में सरकार की साख दांव पर थी, हर घोटाला पिछले घोटालों का रिकॉर्ड तोड़ रहा था। मनमोहन सिंह सरकार के मुखिया थे, लेकिन सत्ता पर सीधा नियंत्रण सोनिया गांधी का था। सोनिया खुद अपनी इच्छा से प्रधानमंत्री तो नहीं बनीं, लेकिन त्याग की देवी बनते हुए एक ऐसी राह तलाश ली, जहां से भारत सरकार पर सीधा नियंत्रण स्थापित किया जा सके। पूर्व प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह के शपथ ग्रहण करने के केवल नौ दिन बाद 31 मई, 2004 को सोनिया गांधी ने भारत सरकार पर निगरानी रखने के लिए एक गैरसरकारी संस्था 'नेशनल एडवाइजरी काउंसिल' (एनएसी) का गठन किया और पूरी सरकार पर इस गैर सरकारी संस्था के द्वारा नियंत्रण स्थापित कर लिया। सोनिया ने खुद को एनसीए के अध्यक्ष के रूप में केंद्रीय मंत्री का दर्जा दिलवाया। जब तक मनमोहन

सरकार रही सोनिया उस पद पर कायम रहीं। एनसीए के कानून में साफ लिखा कि सरकार के 'कॉमन मिनिमम प्रोग्राम' पर एनसीए निगरानी रखेगा और उसे लागू करवाएगा। साफ है एनसीए अध्यक्ष बनकर सोनिया गांधी सरकार के हर निर्णय व कार्यक्रम पर 'वीटो पावर' बन गईं। सोनिया गांधी ने 'चुन चुन' कर एनजीओ कर्मियों को एनसीए का सदस्य बनाया। एनसीए पर होने वाले सारे खर्चे का बोझ सरकारी खजाने पर था।

हर चुनाव में सोनिया गांधी की अध्यक्षता वाली कांग्रेस पार्टी को चुनाव में जीत दिलवाने के लिए एनसीए जनहित में योजनाएं बनाता और उसे लागू कराता था। हालांकि, धरातल पर उसमें से अधिकांश योजनाएं विफल ही साबित हुईं। साल 2004 का चुनाव जीतने के बाद व वर्ष 2009 और 2014 के लोकसभा चुनाव से पहले कांग्रेस को बार-बार सत्ता में लाने के लिए मनमोहन सरकार ने जितने भी लोक लुभावन कार्यक्रम लागू किए, उन सभी का श्रेय सोनिया गांधी की अगुआई वाले एनसीए को जाता है। चाहे इसमें सूचना का अधिकार कानून हो, मनरेगा हो, शिक्षा का अधिकार कानून हो, सभी का मसौदा इसी एनसीए ने तैयार किया। देश में दो संप्रदाय के बीच नफरत बोने वाला सांप्रदायिकता व लक्षित हिंसा विधेयक भी इसी एनसीए के दिमाग की उपज थी, जिसे विपक्ष के विरोध के कारण यूपीए सरकार सदन में पास नहीं करवा पाई। दिलचस्प यह कि टीम अन्ना ने जिस जनलोकपाल के लिए जन-आंदोलन तैयार किया था, उसका मसौदा भी इसी एनसीए की सदस्य रही अरुणा राय की देखरेख में तैयार किया गया था।

साल 2010 के बाद दुनिया में भारत की पहचान एक घोटालेबाज देश की बनती जा रही थी। दिल्ली में हुए क़ॉमनवेल्थ खेल के आयोजन में 70 हजार करोड़ का घोटाला, टू जी स्पेक्ट्रम का 1 लाख 76 हजार करोड़ का घोटाला, 2004 से 2009 के बीच हुए 1 लाख 86 हजार करोड़ का कोल आवंटन घोटाला, कांग्रेस नेतृत्व वाली यूपीए सरकार को घोटालेबाज सरकार के रूप में स्थापित कर चुके थे। समाज के हर ओर भ्रष्टाचार एक प्रमुख मुद्दा और यूपीए दो सरकार एक भ्रष्टाचारी सरकार के रूप में अपनी पहचान बना चुकी थी। सोनिया गांधी उसी यूपीए सरकार पर एनसीए की अध्यक्ष के रूप में अपना नियंत्रण लगातार बनाए हुए थी, जिसका प्रधानमंत्री सोनिया गांधी ने मनमोहन सिंह को बना रखा था।

यूपीए 2 के सत्ता से बाहर होने पर उसी सोनिया गांधी ने राजदीप सरदेसाई को हेडलाइंस टुडे के बैनर तले लगभग चालीस मिनट का एक्सक्लूसिव इंटरव्यू दिया। लगभग एक दशक बाद सोनिया कोई इंटरव्यू दे रहीं थी। यह इंटरव्यू तब लिया गया था जब सोनिया की अगुआई वाली यूपीए 2 अब तक के सबसे बड़े भ्रष्टाचार के आरोप में सत्ता से बाहर हो गई थी। इलाहाबाद के आनंद भवन स्थित स्वराज भवन में लिए गए इस पूरे इंटरव्यू में राजदीप सरदेसाई सोनिया से इंदिरा गांधी और राजीव गांधी के किस्से सुनते रहे। राजदीप उस इंटरव्यू में बस सोनिया को उनका त्याग याद दिलाते रहे। यह याद दिलाते रहे कि कैसे एनडीए सरकार उनका और उनके बेटे राहुल गांधी का उपहास उड़ाती है। राजदीप ने सोनिया से पूछा कि आप पर वंशवाद का आरोप लगता है। सोनिया ने साफ कर दिया कि ये गलत आरोप हैं। नेहरू के बाद इंदिराजी फिर राजीव जी को जनता ने चुना है, वे थोपे नहीं गए। आगे सोनिया ने कहा, इसमें क्या गलत है डॉक्टर का बेटा डॉक्टर, वकील का बेटा वकील ही तो बनता है। राजदीप तल्लीन होकर सोनिया को सुनते रहे।[4] कमाल है, पत्रकारिता को अलग पेशा बताते हुए राजदीप जैसे पत्रकार बार-बार कहते हैं- ''पत्रकार का काम बस सवाल करना है। जनता की तरफ से राजनेताओं से सख्त सवाल करना।''[4{1}] लेकिन, सोनिया गांधी के नेतृत्व वाली यूपीए सरकार के दस साल के कार्यकाल में तीन रिकार्ड तोड़ घोटाले से व्यथित देश आंदोलित हो गया, फिर कांग्रेस को इतिहास की सबसे अपमानजनक हार के बियाबान में धकेल दिया। लेकिन, लगभग 40 मिनट के अपने इंटरव्यू में राजदीप ने दस साल के यूपीए सरकार के घोटालों पर सोनिया गांधी से कोई सवाल नहीं किया, न ही कांग्रेस सुप्रीमो से इतिहास की सबसे बड़ी हार का ही कारण पूछा।[4{2}]

फरवरी 2004 में उसी स्वराज भवन में एनडीटीवी अंग्रेजी के बैनर तले शेखर गुप्ता ने सोनिया गांधी का 'वॉक द टॉक' नामक प्रोग्राम के लिए जो इंटरव्यू लिया उसमें कांग्रेस अध्यक्ष बनने के उनके त्याग और इंदिरा गांधी की प्रिय बहू होने को उन्हें याद दिलाने की कोशिश की गई थी। लोकसभा का चुनाव आने वाला था। शेखर गुप्ता सोनिया का इंटरव्यू लेकर उन्हें याद दिलाते हुए साबित कर रहे थे कि कैसे उन्होंने कांग्रेस को बचाया। इंटरव्यू में सोनिया बताती रहीं कि जब वह भारत आईं तो यहां का खाना उन्हें पसंद नहीं था। बहुत परेशानी होती थी। 'पाश्ता' उनका प्रिय भोजन था, जो वह नियमित खाती थीं। बाद में इंदिरा जी का भी

पसंदीदा भोजन हो गया। साथ में सोनिया यह भी बताने लगीं कि आज पीली दाल और चावल उनका पसंदीदा भोजन है। सोनिया उस इंटरव्यू में शेखर को बताती हैं कि इंदिरा उन्हें अपनी मां से भी ज्यादा प्यार करती थीं। सोनिया उस चुनावी इंटरव्यू में शेखर गुप्ता को आगे बता रही थीं कि कैसे वह इंग्लैंड में कैंब्रिज विश्वविद्यालय के कैंटीन में जब इंदिरा गांधी से मिलीं तो डरी हुई थीं। जबकि उस वक्त इंदिरा देश की प्रधानमंत्री नहीं थीं। एक मां थीं बस।[5]

बारह साल बाद, सोनिया गांधी लगभग यही कहानी राजदीप सरदेसाई को सुनाती हैं। अंतर बस इतना है कि राजदीप इस इंटरव्यू को रोचक बनाने के लिए इसमें, राजीव सोनिया के प्रेम-प्रसंग को जोड़ते हैं। इस इंटरव्यू में सोनिया से राजीव गांधी संग प्रेम-संबंध और इंदिरा गांधी से सोनिया के रिश्ते पर कुछ रोचक सवाल करते हैं। सोनिया बताती रहीं कि किस तरह इंदिरा ने उन से कहा "तुम हिम्मत रख कर सामना करो। मैंने भी तुम्हारी उम्र में एक युवक से प्रेम किया था।" यह जानते हुए कि उस वक्त इंदिरा प्रधानमंत्री नहीं थीं, वह 1971 से पहले की इंदिरा थीं। राजदीप ने सोनिया को खुश करते हुए पूछा, जिस इंदिरा से दुनिया डरती थी, आपको डर नहीं लगा ? सोनिया जवाब देती हैं उस वक्त वो एक मां थीं, मैं अंग्रेजी भी नहीं जानती थी इंदिरा जी ने मुझ से फ्रेंच में बात की थी। राजदीप की तरह ही शेखर गुप्ता ने भी सोनिया से बस निजी सवाल किए। 1971 में बांग्लादेश की मुक्ति के लिए भारत-पाक युद्ध के समय घर के माहौल के बारे में पूछते रहे। राजीव को राजनीति में न आने देने की वजह राजदीप की तरह ही शेखर भी जानते रहे। [6]

दोनों इंटरव्यू में सोनिया से कोई राजनीतिक सवाल नहीं किए गए। जब वह यूपीए सुप्रीमो थीं, सत्ता के केंद्र में थीं, देश में इतने बड़े-बड़े घोटाले हुए, 1977 के बाद का सबसे बड़ा आंदोलन देश ने उसी दौरान देखा, उस आंदोलन ने देश की दिशा बदल दी, तीन दशक बाद एक पूर्ण बहुमत की सरकार आई, राजदीप जैसे पत्रकार ने सोनिया से इस बाबत कोई सवाल नहीं किया। राजनीतिक तो छोड़िए, जिनकी अगुआई में यूपीए की सरकार चलती रही, उस सोनिया को गंभीर बीमारी है। सोनिया इसके इलाज के लिए बार-बार विदेश जाती हैं। लेकिन वह विदेश में कहां किस बीमारी का इलाज कराती हैं, आज तक मीडिया ने उनसे सवाल नहीं किया। पूर्व प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह के मीडिया सलाहकार संजय बारू ने अपने एक लेख में लिखा था- ''अपनी बीमारी और विदेश में रहस्यमय इलाज पर पूरी

मीडिया बिरादरी की स्थिति कांग्रेस कार्यालय से एक प्रेस विज्ञप्ति लाने भर की रह गई थी!'' उनके अंदर यह नैतिकता तब नहीं जगी कि पत्रकार का काम जनता की ओर से सवाल करना ही है, बस सवाल करना।

शेखर गुप्ता के बाद सोनिया ने राजदीप सरदेसाई के अलावा 12 साल में किसी पत्रकार को कोई इंटरव्यू नहीं दिया। वही शेखर गुप्ता, वही राजदीप सरदेसाई और उनकी पत्रकार पत्नी सागरिका घोष अब द वायर वेब चैनल से जुड़े एनडीटीवी के अपने पुराने सहयोगी विनोद दुआ और आरफा खानम संग ट्विटर पर कोहराम मचाते हुए कहते हैं कि मोदी ने अपने चमचों को इंटरव्यू दिया जिन्होंने उनके मन मुताबिक सवाल किया। एक भी सवाल ऐसा नहीं किया जो सख्त हो। एनडीटीवी हिंदी के रवीश कुमार इस दौरान बदलते दौर में एक वर्ग के हीरो हो गए। रवीश कुमार ने 2018 के जनवरी महीने में एक हिंदी चैनल जी न्यूज और एक अंग्रेजी चैनल टाइम्स नॉऊ को दिए प्रधानमंत्री के इंटरव्यू के बाद सोशल मीडिया पर अपने ब्लाग और फेसबुक वॉल पर उन्हें चुनौती देते हुए पर कटाक्ष किया, "कैमरा भी है माइक भी है, अफकोस पकौड़ा भी, आई एम वेटिंग।" दरअसल, प्रधानमंत्री ने 'जी टीवी' को दिए इंटरव्यू में कहा था कि कोई बैंक से छोटा-मोटा लोन लेकर पकौड़े बेचने का धंधा करने लगा तो उसे आप आमदनी का जरिया मानेंगे या नहीं? जी न्यूज के लिए सुधीर चौधरी को दिए इंटरव्यू में मोदी ने कहा 'अब देश में हर किसी के पास बैंक अकाउंट है और किसी के लिए भी छोटा-मोटा व्यवसाय शुरू करने के लिए लोन लेना आसान हो गया है। यह एक बड़ा बदलाव है।' प्रधानमंत्री मोदी ने इसके लिए जो टीवी चैनलों के बाहर पकौड़ा के व्यवसाय का सामान्य उदाहरण दिया, पत्रकारों के एक वर्ग ने उसे ही मजाक का मुद्दा बना लिया। जिस किसी भी पत्रकार को अपनी हैसियत पर गुमान हुआ उसी ने प्रधानमंत्री मोदी को इंटरव्यू देने की खुली चुनौती दे दी। मानो यकायक ये पत्रकार शेर बन गए हों और भारत के प्रधानमंत्री भीगी बिल्ली।

9 मार्च, 2018 को 'इंडिया टुडे' कॉनक्लेव में इंडिया टुडे ग्रुप के मालिक अरुण पुरी ने सोनिया गांधी का बहुप्रत्यक्षित इंटरव्यू किया। 'आज तक' पर उस इंटरव्यू का सीधा प्रसारण हुआ। इंटरव्यू से पहले अरुण पुरी ने लगभग 15 मिनट तक सोनिया गांधी का गुणगान किया। उन्हें भारतीय राजनीति में त्याग की देवी कहा। याद दिलाया कि किस तरह सोनिया ने हाथ आई प्रधानमंत्री की कुर्सी को

त्याग कर मनमोहन सिंह को प्रधानमंत्री बना दिया। पति की हत्या के बाद राजनीति से दूर हो गई सोनिया ने बिखरते कांग्रेस को तब एकजुट किया जब कांग्रेसियों को लगा कि सोनिया के अलावा कोई भी पार्टी को बचा नहीं सकता। जब सोनिया मंच पर आईं तो इंटरव्यू से पहले अरुण पुरी का धन्यवाद करते हुए कहा 'मैं इतनी काबिल हूं या नहीं, मुझे नहीं पता, लेकिन इतना सम्मान देने के लिए आपका आभार'। इसके बाद सोनिया गांधी का लगभग 40 मिनट का इंटरव्यू हुआ। उस इंटरव्यू में अरुण पुरी, सोनिया को राजदीप और शेखर गुप्ता की तरह त्याग की देवी ही साबित करते रहे। यूपीए सरकार में प्रधानमंत्री के मीडिया सलाहकार संजय बारू की पुस्तक 'एक्सिडेंटल प्राइम मिनिस्टर' के मुताबिक तत्कालीन प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह मुखौटा थे, असली सत्ता सोनिया गांधी के हाथ में थी। उसी सोनिया गांधी की अगुआई वाली सरकार के दस साल के कार्यकाल में 12 लाख करोड़ का प्रत्यक्ष घोटाला और 52 लाख करोड़ का बैंकिंग घोटाला हुए, लेकिन राजदीप और शेखर गुप्ता की तरह भारतीय मीडिया के मुगल अरुण पुरी ने भी सोनिया गांधी से कोई सवाल नहीं किया। 2जी, कोयला, कॉमनवेल्थ घोटाला तो छोड़िए, अरुण पुरी ने भी यह नहीं जानना चाहा कि आखिर सोनिया गांधी को ऐसी कौन-सी गंभीर बीमारी है जिसके इलाज के लिए उन्हें बार-बार विदेश जाना होता है। क्या देश को सोनिया गांधी जैसी, दस साल तक देश के सुपर पीएम रहे शख्सियत के स्वास्थ्य के बिगड़ते हालात के बारे में जानने का हक नहीं है। सवाल हक का भी नहीं, उस जिज्ञासा के शांत होने का भी है जो दुनिया के सबसे बड़े लोकतंत्र की सालों तक अगुआई करने वाली और अब विपक्ष में रह कर भारतीय लोकतंत्र की स्तंभ मानी जानी वाली सुपर महिला सोनिया गांधी के स्वास्थ्य को लेकर सवा सौ करोड़ की विशाल मानस के अंदर है। अरुण पुरी जैसे मूर्धन्य पत्रकार ने देश की इस जिज्ञासा को भी समाप्त नहीं किया। बस अपने पूरे इंटरव्यू में सोनिया को 'द ग्रेट यूनिफायर' साबित किया। इसके लिए बाकायदा एक विशाल क्रोमा काटा गया जिसमें सोनिया गांधी की तस्वीर के साथ लिखा था 'द ग्रेट यूनीफायर' ! भारतीय पत्रकारिता ने किसी भी राजनीतिज्ञ का इतना महिमामय इंटरव्यू कभी नहीं देखा। (7)

इन्हीं पत्रकारों का नरेंद्र मोदी संग खासा याराना रहा, जो 2002 में गुजरात के गोधरा में साबरमती ट्रेन की एक बॉगी को स्थानीय मुस्लिम समुदाय द्वारा जलाने के

बाद पूरे गुजरात में भड़के दंगे के बाद से पत्रकारों के रवैये से जुड़ा है। 27 फरवरी, 2002 को साबरमती एक्सप्रेस में अयोध्या से आ रहे कारसेवकों को गोधरा रेलवे स्टेशन से निकते ही स्थानीय लोगों के हमले का शिकार होना पड़ा। गोधरा स्टेशन से गाड़ी ज्यों ही आगे निकली, दंगाइयों ने ट्रेन के एस 7 बॉगी में पेट्रोल डालकर आग लगा दी। इस आगजनी में 59 कारसेवक जिंदा जल गए।

अगले दिन गुजरात के कई हिस्सों में दंगा फैल गया। दो दिन तक चले इस दंगे में दोनों समुदाय के लोग मारे गए। लेकिन, राजदीप सरदेसाई और बरखा दत्त जैसे पत्रकारों ने इसे सिर्फ मुसलमानों का कत्लेआम बताते रहे। राजदीप सरदेसाई से जब यह सवाल न्यूज लॉन्ड्री के अपने उसी इंटरव्यू में मधु त्रेहान ने किया कि जब दंगे में हिंदू और मुसलमान दोनों मरे, फिर इस तरह की रिपोर्टिंग क्यों हुई मानो एकतरफा सिर्फ मुसलमान मारे गए। राजदीप इसे स्पष्ट करने के बदले यह बताने लगे कि हां यह 1984 की तरह एकतरफा नरसंहार नहीं था। उस समय 'स्टार -न्यूज' के स्टार रिपोर्टर थे, बरखा और राजदीप। इन पत्रकारों ने उस दौरान दंगे वाले जगह को इंगित करते हुए यह भी बताया कि कितने मुसलमानों को दंगाई हिंदुओं ने मार दिया। यह पत्रकारिता के आधारभूत सिद्धांत का उल्लंघन था। मुख्यमंत्री रहते मोदी ने एक इंटरव्यू में साफ कहा था- "टीवी पर इनके एक लाइव को देखते हमने फोन कर कहा कि ये क्या कर रहे हो भाई।" आप पीछे पढ़ चुके हैं कि मधु त्रेहान को दिए दिए इंटरव्यू में राजदीप ने इस बात को स्वीकार किया।

"जी टीवी" के लिए तब बतौर संवाददाता सुधीर चौधरी ने उसी दौरान नरेंद्र मोदी का इंटरव्यू लिया और "क्रिया- प्रतिक्रिया" की पूरी थ्योरी रची। अगले दिन टाईम्स ऑफ इंडिया ने बिना मोदी का इंटरव्यू किए, 'जी न्यूज' पर सुने इंटरव्यू को अपना बनाकर, उसे क्रिया-प्रतिक्रिया बताकर, न्यूटन के तीसरे नियम से जोड़ते हुए छाप दिया। हेडिंग दी गई "मोदी ने गुजरात दंगे पर कहा यह क्रिया के बराबर प्रतिक्रिया हैं'। दरअसल, मोदी ने ऐसा कहा ही नहीं था। सुप्रीम कोर्ट की गठित एसआईटी रिपोर्ट के मुताबिक, मोदी का असल बयान था- "क्रिया और प्रतिक्रिया की चेन चल रही है। हम चाहते हैं कि न क्रिया हो न प्रतिक्रिया। 'जी न्यूज' संवाददाता सुधीर चौधरी ने 1 मार्च, 2002 को मोदी का इंटरव्यू लिया था, जिसमें गुजरात के तत्कालीन मुख्यमंत्री मोदी ने लोगों से दंगा रोकने की अपील करते हुए- यह बात कही थी। 'जी न्यूज' ने वाक्य से काट-छांट करते हुए- "हम चाहते

हैं कि न क्रिया हो न प्रतिक्रिया" को उड़ा दिया और अपनी खबर से यह स्थापित कर दिया कि नरेंद्र मोदी गुजरात दंगे को प्रतिक्रिया बता कर समर्थन कर रहे हैं। [8]

एसआईटी रिपोर्ट के मुताबिक सुधीर चौधरी ने गुलबर्ग सोसाइटी में दंगाइयों के हाथों मारे गए कांग्रेस के पूर्व सांसद एहसान जाफरी समेत 50 लोगों की मौत पर सवाल पूछा था। इस पर मुख्यमंत्री ने रिपोर्ट पर हवाला देकर उन्हें बताया कि जाफरी ने हिंसक भीड़ पर गोली चला दी थी जिससे भीड़ और उग्र हो गई और उसने गुलबर्ग सोसाइटी पर हमला कर उसे आगे के हवाले कर दिया था। नरेंद्र मोदी ने आगे कहा था- "क्रिया प्रतिक्रिया की चेन चल रही है। हम चाहते हैं कि न क्रिया हो न प्रतिक्रिया।"[9]

'जी न्यूज' के इस इंटरव्यू के टेलीकास्ट होते ही इसे 'टाईम्स ऑफ इंडिया' ने उठाया और 3 मार्च, 2002 के राष्ट्रीय और अहमदाबाद संस्करण में पहले पेज पर छाप दिया कि नरेंद्र मोदी ने दंगा को न्यूटन के तीसरे नियम- 'एक्शन-रिएक्शन' थ्योरी के आधार पर जायज ठहराया है। गुजरात के मुख्यमंत्री कार्यालय ने 'टाइम्स ऑफ इंडिया' अखबार को तत्काल रिज्वाइंडर, यानी भूल सुधार के लिए नोटिस भेजा। नोटिस में लिखा गया कि मुख्यमंत्री ने उनके अखबार के किसी संवाददाता को कोई इंटरव्यू नहीं दिया है, न ही 'एक्शन – रिएक्शन' थ्योरी के आधार पर स्टोरी को जायज ठहराया है। लेकिन, अखबार ने मोदी के पक्ष को प्रकाशित नहीं किया। कार्यालय ने दोबारा नोटिस भेजा, जिसके उपरांत मूल खबर छपने के 20 दिन बाद जब दंगा शांत हो चुका था 'टाइम्स ऑफ इंडिया' ने 23 मार्च, 2002 को अंदर के पेज के एक कोने में छोटा सा भूल सुधार छाप दिया। इस भूल सुधार को भी केवल अहमदाबाद संस्करण में छापा गया, जबकि खबर को राष्ट्रीय संस्करण में भी पहले पेज पर छापा गया था।[9] [1]

उधर, एसआईटी ने 'जी मीडिया' को नोटिस जारी कर 1 मार्च, 2002 को चैनल को दिए इंटरव्यू की सीडी मांगी। दो बार नोटिस (नोटिस नंबर यू/एस 91 सीआरपीसी) भेजने के बावजूद 'जी मीडिया' ने इसकी सीडी एसआईटी को उपलब्ध नहीं कराई। लेकिन, नोटिस के जवाब में सुधीर चौधरी ने एसआईटी के सामने पेश होकर बयान दिया कि मुख्यमंत्री नरेंद्र मोदी के क्रिया –प्रतिक्रिया का वह मतलब नहीं था जो खबर में दिखलाया गया था।

सच तो यह है कि उस दौर के ज्यादातर टेलीविजन मीडिया और अखबारों ने दंगे को नियंत्रित करने के लिए मुख्यमंत्री कार्यालय से भेजी जा रही नरेंद्र मोदी के बयान वाली प्रेस विज्ञप्ति एवं दूरदर्शन पर शांति की अपील की अवहेलना की और रिपोर्टिंग के जरिये दंगे का एक पक्ष दिखाकर उसे और अधिक भड़काने का काम किया। दिलचस्प यह कि मीडिया ने अपनी इतनी बड़ी गलती को कभी स्वीकार नहीं किया। एक टीवी चैनल और एक अंग्रेजी अखबार द्वारा खबर को तोड़-मरोड़ कर पेश किए जाने से तैयार झूठी खबर को सच बनाकर सालों तक परोसा गया। कभी मीडिया ने अपनी इस गलती को नहीं माना। अपनी किताब के प्रमोशन के लिए मधु त्रेहान को न्यूज लॉन्ड्री शो के लिए दिए इंटरव्यू में राजदीप ने पहली बार इस सच को स्वीकार किया।[10] मीडिया का फैलाया क्रिया-प्रतिक्रिया वाला यही वह झूठ था जो सच के नकाब में फैलाया गया और नरेंद्र मोदी को सालों तक सवालों के घेरे में रखा। तब भी, जब सुप्रीम कोर्ट की बनाई एसआईटी ने माना कि दंगा को रोकने के लिए सही समय पर उन्होंने उचित कार्रवाई की थी।

सुप्रीम कोर्ट की बनाई एसआईटी की रिपोर्ट को भी खारिज करती रही मीडिया !

सुप्रीम कोर्ट द्वारा नियुक्त विशेष जांच दल (एसआईटी) ने गुजरात दंगों में तत्कालीन मुख्यमंत्री नरेंद्र मोदी की किसी भी तरह की संलिप्तता से इंकार करते हुए उन्हें क्लीन चिट दे दी। एसआईटी ने अपनी जांच रिपोर्ट में कहा कि गुजरात के मुख्यमंत्री नरेंद्र मोदी ने वर्ष 2002 में गोधरा गांड के बाद भड़के दंगों पर पूर्ण नियंत्रण के लिए हर संभव कदम उठाए थे। नरेंद्र मोदी के खिलाफ दंगा भड़काने के किसी भी तरह के सबूत नहीं मिले हैं। मोदी ने यह लोगों से कभी नहीं कहा कि जाइए और जाकर लोगों की हत्या कीजिए।

ज्ञात हो कि भारत के तत्कालीन मुख्य न्यायाधीश जे. एस. वर्मा के निर्देश पर सुप्रीम कोर्ट द्वारा गठित एसआईटी ने 27 फरवरी, 2002 को गोधरा में साबरमती एक्सप्रेस में हुए राम भक्तों के नरसंहार और उसके बाद गुजरात में भड़के दंगों के कुल नौ मामलों की जांच की है। एसआईटी ने जांच के लिए बनाई गई हजारों पन्नों की रिपोर्ट को निरीक्षण के लिए सुप्रीम कोर्ट के समक्ष पेश किया। सुप्रीम कोर्ट ने एसआईटी को निर्देश दिया कि वह इस क्लोजर रिपोर्ट को मामले से संबंधित

अदालत में दाखिल करे। एसआईटी ने 8 अप्रैल, 2012 को संबंधित अदालत में गुजरात दंगों की फाइल को बंद करने के लिए क्लोजर रिपोर्ट दाखिल कर दी।

एसआईटी ने कहा कि मुख्यमंत्री नरेंद्र मोदी पर आरोप लगाने का कोई आधार नहीं है। कथित तौर पर आला पुलिस अधिकारियों को दंगाइयों के खिलाफ कार्रवाई नहीं करने के संबंध में दिया गया निर्देश तीस्ता सीतलवाड़ की मनगढ़ंत कहानी है, जिसे उन्होंने पुलिस अधिकारियों संजीव भट्ट एवं आर. बी. श्रीकुमार के झूठे बयान को आधार बनाकर गढ़ी गई है। जांच के दौरान उन्हें इस बात के कोई सबूत नहीं मिले कि मोदी ने ऐसा कोई निर्देश पुलिस अधिकारियों को दिया था।

एसआईटी रिपोर्ट के मुताबिक "मोदी ने कानून व्यवस्था के लिए समीक्षा बैठकें कीं और हालात को संभालने के लिए सब कुछ किया, जो किया जा सकता था। सांप्रदायिक हिंसा को रोकने के लिए समय पर सेना को बुलाया गया। मोदी हालात पर लगाम लगाने, दंगा पीड़िगों के लिए राहत शिविर बनाने और स्थिति को शांतिपूर्ण एवं सामान्य करने के लिए हर संभव कदम उठाए। विस्तृत जांच और संतोषप्रद स्पष्टीकरण के मद्देनजर नरेंद्र मोदी के खिलाफ कोई आपराधिक मामला नहीं बनता है।"

देश की सबसे बड़ी अदालत की निगरानी में बनी एसआईटी ने उसी सुप्रीम कोर्ट में अपनी रिपोर्ट दाखिल कर नरेंद्र मोदी को निर्दोष बताया। बाद में अदालत ने भी एसआईटी की रिपोर्ट के आधार पर अपना आदेश जारी करते हुए साफ कहा कि मोदी के खिलाफ लगाए गए आरोप निराधार थे। आप एसआईटी रिपोर्ट के आधार पर इससे अवगत हो चुके हैं। गुजरात दंगे में किसी भी रूप में उनका नाम नहीं आया तब भी दिल्ली की मीडिया का बड़ा वर्ग उन्हें हत्यारा कहती रही। यह सब कुछ राफ साफ हो जाने के बाद भी मीडिया का वह वर्ग, जो नरेंद्र मोदी को कठघरे में खड़ा करता रहा उसने आज भी अपना रवैया नहीं बदला है, तब जबकि गुजरात के जिस मुख्यमंत्री के खिलाफ दिल्ली की मीडिया ने 12 साल तक साजिश रचते हुए उनकी छवि खराब करने की कोशिश की, वह मोदी अब देश के प्रधानमंत्री हैं। [12]

वह साक्षात्कार, जिसके बाद नरेंद्र मोदी ने मीडिया से दूरी बना ली.....

आपने पीछे पढ़ा, मोदी जब दिल्ली में पार्टी महासचिव थे, तब से लेकर गुजरात के मुख्यमंत्री के रूप में अपने पहला कार्यकाल 2007 में खत्म करने तक पत्रकारों से लगातार मिलते थे, इंटरव्यू देते थे। तब भी जब 2002 के दंगा के बाद लगातार मीडिया ने उनके खिलाफ तथ्यहीन रिपोर्टिंग की। जब मोदी को गुजरात के मुख्यमंत्री के रूप में जिम्मेदारी सौंपने के लिए तत्कालीन प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी ने फोन किया तो वे दिल्ली स्थित श्मशान घाट में एक टीवी कैमरामैन के अंतिम संस्कार में थे। उस टीवी कैमरामैन की मौत कांग्रेस के कद्दावर नेता माधवराव सिंधिया संग हवाई दुर्घटना में हो गई थी। मोदी एकमात्र राष्ट्रीय स्तर के नेता थे जो उस कैमरामैन की अंत्येष्टि में शामिल हुए थे। प्रधानमंत्री के बुलावे पर श्मशान घाट से वे सीधे प्रधानमंत्री कार्यालय गए और प्रधानमंत्री वाजपेयी के आदेश के बाद गुजरात के मुख्यमंत्री की जिम्मेदारी लेने अहमदाबाद। वहां से 12 साल बाद वे दिल्ली लौटे तो देश के प्रधानमंत्री के रूप में। इस दौरान 12 साल का उनका वक्त मीडिया द्वारा अपमानित होते हुए गुजरा। तब भी जब सुप्रीम कोर्ट की बनी एसआईटी द्वारा उन्हें निर्दोष साबित किया जा चुका था।

लेकिन, 2007 के गुजरात विधानसभा चुनाव में जीत के बाद उस मोदी ने अपना रुख मीडिया से मोड़ लिया। उनके अंदर इतनी संवेदना थी कि उन्होंने नामचीन लोगों के बदले एक कैमरा जर्नलिस्ट की अंत्येष्टि में जाना जरूरी समझा। मोदी ने मुख्यमंत्री की जिम्मेदारी सौंपे जाने की बात करते हुए कई बार इसका जिक्र किया। 2007 के विधानसभा चुनाव के दौरान दिल्ली की मीडिया के ज्यादातर बड़े नाम गुजरात में रिपोर्टिंग कर रहे थे और वे 2002 गुजरात दंगा के लिए मोदी को लगातार दोषी ठहरा रहे थे। इसके बावजूद जब वे दंगा के बाद के 2002 के चुनाव फिर 2007 के चुनाव में भी भारी मत से जीत कर तीसरी बार मुख्यमंत्री चुने गए तो मीडिया ने इसके लिए गुजरात की जनता की सांप्रदायिक सोच को जिम्मेदार ठहरा दिया। यहां तक कहा जाने लगा कि देश गुजरात नहीं है, मोदी जैसे लोग सिर्फ गुजरात में ही चुने जा सकते हैं।

उसी दौरान 'सीएनएन' 'आईबीएन' के लिए वरिष्ठ पत्रकार करण थापर ने मुख्यमंत्री मोदी का इंटरव्यू किया। यह इंटरव्यू इस कदर अपमानजनक था कि मोदी ने पांच मिनट के अंदर ही इंटरव्यू खत्म करते हुए करण थापर से कहा 'आप इसे खत्म कीजिए। हमारी आपकी दोस्ती बनी रहे, यही काफी है।''

मोदी के साथ करण थापर का इंटरव्यू...

करण थापर- "मिस्टर मोदी! छह साल के आपके कार्यकाल के बाद राजीव गांधी फाउंडेशन ने आपको देश का सबसे बेहतर मुख्यमंत्री माना है। इंडिया टुडे जैसी पत्रिका ने अपने दो अंक में आपको भारत का सबसे प्रभावशाली मुख्यमंत्री माना है। लेकिन, सच यह है कि जनता आपको आज भी गुजरात नरसंहार के लिए दोषी मानती है। माना जाता है कि आप मुसलमानों को लेकर पूर्वाग्रह से ग्रस्त हैं? आपकी छवि आज भी दागदार है?"

नरेंद्र मोदी- "ऐसा जनता नहीं सोचती। दो-तीन लोग हैं जो ऐसा माहौल बनाते हैं। वही लोग अपना लॉजिक इस्तेमाल करते हैं। भगवान उनका भला करे यदि उन्हें इसी में आनंद आता है।"

करण थापर- "आपका मानना है कि दो-चार लोग ही ऐसा सोचते हैं।"

नरेंद्र मोदी- "नहीं मैंने ऐसा नहीं कहा.. जो मेरी सूचना है, यह जनता की आवाज नहीं है जो आप बोलते हैं।"

करण थापर- "सितंबर 2003 में सुप्रीम कोर्ट ने कहा था कि आपने जनता में भरोसा खो दिया है। अप्रैल 2004 में सुप्रीम कोर्ट के मुख्य न्यायाधीश ने कहा, आप नीरो की तरह हैं, जिसके राज्य में निरीह जनता और बच्चे मरते रहे और आप चैन की बंसी बजाते रहे। मिस्टर मोदी प्रॉब्लम तो सुप्रीम कोर्ट को भी आप से है?"

नरेंद्र मोदी- "करण मेरा छोटा आग्रह है आप सुप्रीम कोर्ट का वह आदेश पढ़िए। हमें खुशी होगी आपको जवाब देने में यदि सुप्रीम कोर्ट ने ऐसा आदेश दिया हो।"

करण थापर- "ठीक है यह लिखित में नहीं है।"

नरेंद्र मोदी- "यदि यह सुप्रीम कोर्ट का आदेश है तो जवाब दूंगा।"

करण थापर- "बताऊं आपकी परेशानी क्या है? गुजरात के नरसंहार के पांच

साल से ज्यादा समय बीत जाने के बाद भी गोधरा का भूत आपका पीछा नहीं छोड़ रहा। आप इससे छुटकारा क्यों नहीं पाते? कानून का सहारा क्यों नहीं लेते?"

नरेंद्र मोदी- "कुछ मीडियाकर्मी को इसमें आनंद आता है.. जैसे करण थापर। वे चाहते हैं गोधरा का भूत साथ लेकर चलना। आप लोग इसे पाल रहे हैं। इसमें मजा आता है आपको।"

करण थापर- "आप क्यों नहीं इस पर बात करते? क्यों नहीं अपने राज में नरसंहार पर अफसोस जताते ? जो कुछ हुआ उसके लिए माफी क्यों नहीं मागते हैं?"

नरेंद्र मोदी- "मुझे जो कहना था, उसी वक्त कह दिया। बार-बार क्यों? आप लोग इससे बाहर क्यों नहीं निकलते?"

करण थापर- "एक बार फिर बोल दीजिए। आपको अपनी छवि सुधारने का अवसर है। आप उसे ठीक क्यों नहीं करते? यह गुजरात के हित में है।

नरेंद्र मोदी- (पानी भरा ग्लास उठाकर एक घूंट लेते हुए... निराशा प्रकट करते हुए कैमरा बंद करने का आग्रह पूर्ण इशारे के साथ) "करण खत्म कीजिए! आप खुश रहिए ! आनंद लीजिए। हमारा संबंध बना रहे बस....."[12]

उस इंटरव्यू में वरिष्ठ पत्रकार करण थापर ने तो उन्हें खुलेआम हत्यारा कहा। तथ्यों और सबूतों के बिना, तथ्यों को तोड़-मरोड़ कर मोदी के खिलाफ पत्रकारों ने किस स्तर तक साजिश की आप ऊपर पढ़ चुके हैं, लेकिन उच्च संवैधानिक पद पर बैठे किसी जनप्रतिनिधि का बिना सबूत के गंभीर आरोप लगाते इतना अपमानजनक इंटरव्यू कभी नहीं हुआ। इसी इंटरव्यू ने मोदी को बदल दिया। और मोदी मीडिया से दूर होने लगे। 2007 के विधानसभा चुनाव के बाद मीडिया से बेरुखी का सिलसिला उनका इसीलिए जारी है, क्योंकि गुजरात दंगा में उन्हें फंसाने की साजिश का हिस्सा बनी मीडिया को लेकर उनका अनुभव बेहद कड़वा है। इसीलिए आज भी बतौर प्रधानमंत्री जितने भी इंटरव्यू उन्होंने दिए, उसके आखिर में जरूर कहते हैं कि इसमें कोई तोड़-मरोड़ न कीजिएगा।

बदलते दौर में सोशल मीडिया ने उन्हें जनता से संवाद करने और अपनी बात रखने का अवसर दे दिया है। इसीलिए मीडिया से उनकी बेरुखी कायम। लेकिन, जिनके लिए मीडिया ने लाल कारपेट बिछाय़ा वह भी मीडिया से दूर रहे। जब

मीडिया से सामना भी हुआ तो उनसे बस घरेलू सवाल पूछा गया, सवाल-जवाब का यह सिलसिला इंदिरा और सोनिया की सास-बहू की कहानी से लेकर राजनीति से उनकी बेरुखी व राजीव संग प्रेम-प्रसंग से आगे बढ़ ही नहीं पाया। भारतीय मीडिया के इस चरित्र ने साख के इस पेशे को सत्ता संग हमजोली करते ही पाया। एक पक्ष यह आरोप आज भी लगा रहा है।

दूसरा अध्याय

कोयला खाती और हवा निगलती मीडिया

मीडिया पर सत्ता के अपराध और घोटालों को छुपाने के आरोप तो लगते रहे हैं, लेकिन घोटालों और अपराधों के खेल में, सत्ता संग भागीदारी के जो मामले मनमोहन सरकार के दो कार्यकाल में सामने आए, उसने संदेह को यकीन में बदल कर रख दिया। 'कॉमनवेल्थ, 2जी व कोयला घोटाला।' एक से बढ़कर एक रिकॉर्ड तोड़ इन घोटालों के आरोपों में जब केंद्र सरकार घिरी थी, देश में भ्रष्टाचार के खिलाफ अन्ना आंदोलन, जनता की आवाज बन रही थी। सवाल यह है कि जो कुछ दिख रहा था, क्या वही सच था !

अरविंद केजरीवाल ने जो जनलोकपाल बिल लाया था, जिसे लेकर 2011 में भ्रष्टाचार के खिलाफ आंदोलन दिल्ली के रामलीला मैदान से चल रहा था, उसे 24 घंटे के 'टीवी न्यूज' चैनल ने सातों दिन लगातार दिखाया। व्यावहारिकता के जरूरी दहलीज को पार कर, बिना किसी कमर्शियल विज्ञापन के, मानो अन्ना आंदोलन को न्यूज चैनलों ने बुक कर दिया था। वहीं, सरकारी चैनल दूरदर्शन ने भी गांव-गांव तक अन्ना के पहले और दूसरे फेज के अनशन को पहुंचाने के लिए 24 घंटे का लाइव इवेंट प्रस्तुत किया, जबकि इतिहास दर्शाता है कि सरकार विरोधी किसी भी आंदोलन को सरकारी नियंत्रण वाला दूरदर्शन इतना लंबा कवरेज कभी नहीं देता। कहने को तो दूरदर्शन को 'प्रसार भारती' बनाकर स्वायत्तता दी गई है, लेकिन उसका वजूद वास्तव में सरकारी नियंत्रण वाला चैनल का ही रहा है।

दिलचस्प यह कि केजरीवाल ने जनलोकपाल, अरुणा राय की देखरेख में बनाया था जो यूपीए सरकार को नियंत्रित करने वाली सोनिया गांधी की एक तरह की खास कैबिनेट, नेशनल एडवाजरी कमेटी (एनएसी) की सदस्य थीं।

'आईबीएन 7' के प्रबंध संपादक की हैसियत से इस आंदोलन के कवरेज की रूप-रेखा तैयार करने वाले आशुतोष अपनी किताब 'अन्ना क्रांति' में लिखते हैं, "मुझे आज भी 4 अप्रैल, 2011 की अपनी संपादकीय मीटिंग याद है। अन्ना उसी सुबह दिल्ली पहुंचे थे। मैंने मीटिंग में पूछा हम क्या प्लान कर रहे हैं? हम उसे कैसे कवर करने जा रहे हैं? वरिष्ठ संपादकों को उसमें कोई रुचि नहीं दिखी। उनका मानना था कि अन्ना एक प्रेस वार्ता करने जा रहे हैं जिसमें हम अपना संवाददाता भेज देंगे। लेकिन मैं थोड़ा परेशान था, वे 74 साल के बुजुर्ग हैं और आमरण अनशन पर बैठ रहे हैं। यदि उन्हें कुछ हो जाता है तो यह सरकार परेशानी में पड़ जाएगी। मनमोहन सिंह को त्याग पत्र देना पड़ सकता है। इसे हल्के में मत लो। किसी को तुरंत भेजो और अन्ना का इंटरव्यू करा लो। साथ में उनकी योजनाएं व विषय क्या है, इसका भी पता करो।" [1]

अब देखिए, गंगा को राष्ट्रीय धरोहर घोषित किए जाने के बावजूद वहां हो रहे अवैध खनन रोकने व गंगा को निर्मल बनाने के लिए स्वामी निगमानंद 68 दिनों तक अनशन करते रहे और उनकी मृत्यु हो गई, न तो कोई मीडिया हाउस ने तवज्जो दी न ही पूर्व प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह को ही इसके कारण इस्तीफा देना पड़ा। अन्ना आंदोलन शुरू करने से पहले न्यूज चैनलों के अंदर इसे शुरू करने के लिए संपादक किस तरह नाटकीय माहौल उत्पन्न कर रहे थे, आशुतोष की स्वीकारोक्ति इसकी एक बानगी भर है।

2जी स्पेक्ट्रम घोटाला

एक लाख 76 हजार करोड़ रुपये के इस अप्रत्याशित घोटाले ने सही मायने में यूपीए2 सरकार की नींव हिला दी। इस घोटाले में बड़े-बड़े पत्रकारों और कॉरपोरेट कंपनियों के नाम सामने आ चुके हैं। भारत के तब तक के सबसे बड़े घोटाले का मामला जब सुप्रीम कोर्ट के सामने आया तो देश की सबसे बड़ी अदालत ने इस मामले में भारत के प्रधानमंत्री की चुप्पी से लेकर संचार मंत्री पर कार्रवाई न किए जाने पर भी टिप्पणी की। कॉरपोरेट घरानों को मनमर्जी से स्पेक्ट्रम की बंदरबांट

करने में सरकार, उसके बिचौलियों और मीडिया के घालमेल का चौंका देने वाला सच अदालत के सामने आया। सुप्रीम कोर्ट की तल्खी के बाद ही इस मामले में देश के तत्कालीन संचार मंत्री ए. राजा की गिरफ्तारी हुई। यह देश में अपने आप में अकेला मामला था जिसमें सुप्रीम कोर्ट इस कदर सरकार के खिलाफ सख्त हुआ। दुनिया की मशहूर पत्रिका 'टाइम्स' ने दुनिया में सत्ता के दुरुपयोग के दस बड़े मामले में भारत के 2जी घोटाले को अमेरिका के 'वाटरगेट स्कैंडल' के बाद दूसरा स्थान दिया है। यूपीए सरकार द्वारा सत्ता के दुरुपयोग का भरपूर लाभ कॉरपोरेट कंपनियों और मीडिया हाउस को मिला था।

नीरा राडिया टेप ने तो मीडिया के बड़े-बड़े चेहरों को बेनकाब कर दिया था। बड़े-बड़े पत्रकारों को देश ने एक नई भूमिका में देखा और पढ़ा। देश ने जाना कि कैसे नामचीन पत्रकार, भारत सरकार में मंत्री बनाने तक का ठेका लेते हैं, ताकि उस मंत्री के सहयोग से कॉरपोरेट घरानों का हित साधा जा सके। इस हित में हर किसी की हिस्सेदारी रहती होगी इस बात को कतई नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है। आप उस बातचीत को खुद पढ़िए और समझिए। कैसे मीडिया पूर्वाग्रह संग रिपोर्टिंग करती रही यह तो आप आगे पढ़ेंगे ही, यहां बातचीत में देखिए कैसे मीडिया, सरकार संग मिलकर कॉरपोरेट मीडिया पार्टनर बनकर रही। जिसे देश की जनता तक घोटाले को ले जाने की जिम्मेदारी थी, कैसे और कब वह उस घोटाले का पार्टनर बन गई, पता ही नहीं चला। 11 दिसंबर, 2010 के बीबीसी हिंदी डॉट कॉम में छपी रिपोर्ट के मुताबिक नीरा राडिया के 800 टेप 'आउटलुक' पत्रिका को मिले थे। 'आउटलुक' को ये टेप तब मिले थे जब सरकार ने सील बंद लिफाफे में सारे टेप सुप्रीम कोर्ट में जमा करा दिए थे। बीबीसी में छपी रिपोर्ट के मुताबिक राडिया टेप से पता चलता है कि वह दो बड़ी कंपनी रतन टाटा और मुकेश अंबानी की कंपनी के लिए कॉरपोरेट दलाल का काम करती थी। 'आउटलुक' पत्रिका के मुताबिक राडिया टेप में बातचीत से साफ है कि वह ग्राहक कंपनियों को लाभ पहुंचाने के लिए पत्रकारों से लेकर राजनेताओं का इस्तेमाल करती थीं। 'आउटलुक' के तत्कालीन संपादक कृष्णा प्रसाद ने बीबीसी से बातचीत में इस बात की पुष्टि की कि बातचीत के विवरण से स्पष्ट है कि 2009 में मनमोहन सरकार के मंत्रिमंडल के गठन और 2जी स्पेक्ट्रम घोटाले में सरकार, बड़े व्यावसायिक घरानों और मीडिया के बीच के खेल की एक डरावनी तस्वीर पेश करते हैं। इस

खबर में कहा गया कि बातचीत के केंद्र में ए. राजा को यूपीए 2 में दूरसंचार मंत्री बनाए रखना ही है।[2] 'आउटलुक' ने राडिया टेप के जो संक्षिप्त विवरण पेश किए उसके अनुसार नीरा राडिया के बातचीत से जाहिर होता है कि ए. राजा को दूरसंचार मंत्री बनाने के लिए किस तरह बातचीत चल रही थी और इसके लिए करुणानिधि परिवार में किस तरह की खींचतान चल रही थी।

फोन पर राजनीतिज्ञों, नौकरशाहों, उद्योगपतियों और पत्रकारों के स्वार्थ की धुन......2 [1]

साभार: आउटलुक
ए. राजाः पूर्व संचार मंत्री

नीरा राडिया...आप कैसे हैं?

ए. राजा... हां कनि! क्या कह रही है?

एनआर..वह कह रही है कि उन्हें यह मंजूर है उन्हें कोई समस्या नहीं। लेकिन एक बात है कि किसी को अलागिरी से बात करनी होगी और यह काम आप करेंगे।

ए. राजा....हूं...

एनआर...और उन्हें बताइए कि मारन (मुरासोलि) ने क्या जा कर कहा है। (उन्हें अपशब्द कहे हैं)

एआर...हां! मैं इस पर उनसे बात कर चुका हूं।

एनआर...आप ने उन्हें बताया कि उन्होंने दिल्ली में कांग्रेस के नेताओं से क्या जा कर कहा है?

एआर...मुझे पता है कि कांग्रेसियों के मन में ये धारणा किसने बिठाई कि अलागिरी अंग्रेजी नहीं जानते हैं।

एनआर... नहीं, नहीं सिर्फ यही नहीं केवल उनके (मारन) और स्टालिन के इशारे पर पार्टी चलेगी, क्योंकि बुढ़ऊ (करुणानिधि) तो सठिया गए हैं और ज्यादा लंबी पारी खेलने वाले नहीं हैं और कांग्रेस उनके साथ लंबी पारी खेलने वाली नहीं, और कांग्रेस उनके (मारन) साथ लंबी पारी खेलकर खुश रह पाएगी। उन्होंने कांग्रेस को यही बता रखा है कि स्टालिन पर उनका नियंत्रण है।

एआर..ओ हो हो हो हो..

एनआर...और उन्होंने यह धारणा फैला रखी है कि अलागिरी अपराधी है। और यह कि अलागिरनी ने तो पांचवी कक्षा तक की पढ़ाई नहीं की है। यही बात उन्होंने फैला रखी है।

एआर....ठीक है, ठीक है।

एनआर..आप जाइए, यह बात उन्हें बताइए, नहीं?

एआर....नहीं, यह बात मैंने अलागिरी को बताई थी। अलागिरी ने इस पर पार्टी नेता करुणानिधि से बात की थी।

एनआर...लेकिन उन्होंने तो यह भी कहा था कि दिल्ली में तो सिर्फ उन्हीं से वास्ता रखना होगा, क्योंकि स्टालिन तो हमेशा राज्य की राजनीति में व्यस्त रहेंगे।

एआर...उन्हें मालूम है, देखिए, मैं जानता हूं कि वह कैसा दुष्प्रचार फैला सकते हैं।

....

एआर...राजा बोल रहा हूं।

एन आर....हाय! मुझे अभी - अभी बरखा दत्त से एक खबर मिली है।

एआर..हूं।

एनआर...बरखा दत्त।

एआर....क्या कहा उन्होंने?

एनआर....उन्होंने (बरखा दत्त) कहा कि वह आज रात पीएमओ पर फोकस कर पूरे मामले पर नजर रखे हुए हैं। दरअसल, उन्होंने ही मुझे बताया कि वहां सोनिया गांधी गई थीं। वह (बरखा) कहती हैं कि उन्हें आप से कोई समस्या नहीं है। पर, बालू को लेकर समस्या है।

एआर...लेकिन इस पर नेता (करुनानिधि) से बात की जानी चाहिए।

एनआर...हां, हां उन्हें (अलागिरी को) नेता से बात करनी होगी।

एआर.....इस मसले पर सुबह बात होगी।

एनआर...अलागिरी के लोग कह रहे हैं कि अगर पार्टी में अलागिरी जैसे सीनियर नेता हैं तो मारन को कैबिनेट सीट क्यों मिलने जा रही है।

एआर...ये अलग बात है पर निश्चित तौर पर इन सभी पक्षों पर बातचीत होनी चाहिए, ये बातें बताई जानी चाहिए।

एनआर....हां यह सही है।

एआर...कम से कम नेता के सामने एक साथ बैठ कर यह बात बताई जानी चाहिए। कोई व्यक्ति कम से कम सील बंद लिफाफे में यह संदेश पहुंचाए कि हमें बालू से गंभीर समस्या है।

एनआर.....कांग्रेस की ओर से, ठीक?

एआर....हां।

एनआर.... मैं उन से कहूंगी वह (बरखा) अहमद पटेल से बात कर रही हैं। इसलिए मैं पटेल से ही बात करूंगी।

एआर.....कम से कम उन्हें फोन पर यह कहने दीजिए कि सर यह समस्या है। हम खासी इज्जत करते हैं पर हमें राजा से कोई समस्या नहीं है, समस्या बालू से है। कहो।

एनआर...फिर आप दूसरी समस्या कैसे सुलझाएंगे?

एआर...दूसरी समस्या अपने आप सुलझा ली जाएगी, क्योंकि नेता अब जमीन पर आ रहे हैं। चिंता की कोई बात नहीं। आपका कहना है कि मारन इंफ्रास्ट्रक्चर के लिए फिट नहीं हैं, क्योंकि वह विवाद में रहा है..ठीक। आप एक संदेश भेजो।

कनिमोली- राज्यसभा सांसद!

कनिमोलीः हलो!

नीरा राडियाः हाय, कनि मैंने उन लोगों से दुबारा पूछा है कि क्या वह मुख्यमंत्री (करुणानिधि) से बातचीत करेंगे और उन्हें कुछ संदेश देंगे। पर उन्होंने कुछ किया नहीं है। मैं यह समझती हूं कि अब यह बात फैलाई जा रही है कि इंफ्रास्ट्रक्चर विभाग बालू या राजा की झोली में नहीं जाना चाहिए, जबकि वास्तव में यह भी कहा जा रहा है कि यह विभाग मारन और बालू को नहीं दिया जाना चाहिए। कुछ लोग यह भी मानते हैं कि उन्होंने (मारन) सोनिया गांधी से मुलाकात नहीं की है। मैंने भी इसकी पुष्टि कर ली है।

कनिः हां मैंने भी पता लगाया है।

राडियाः मैं समझती हूं कि उन्होंने किसी को बताया है कि वह आपके पिता से अकेले में मिल चुके हैं। वह आपके पिता से अलग से मिले और उन्हें दिल्ली के बारे में बताया। आपके पिता ने उन्हें दिल्ली के लोगों से चुपचाप मिलने को कहा।

कनिः नहीं यह सच नहीं है। चूंकि जब मेरे... तो उन्होंने दरअसल सभी से बाहर चले जाने को कहा। और वे अकेले में कुछ कहना चाहते थे। मेरी मां, मेरा मतलब है वह सब समझ नहीं पाई, वह पिताजी के लिए एक ग्लास छाछ लेकर गई। अतः वह पूरी बातचीत के दौरान वहीं थी। मेरा मतलब है कि डैड ने अकेले में कुछ भी नहीं कहा। आज, डैड को कहा गया कि जो भी कैबिनेट में शामिल होने को इच्छुक है, उसे सौदेबाजी करने की अनुमति नहीं होनी चाहिए।

राडियाः ठीक है, ठीक है। बिल्कुल ठीक है।

कनिः डैड की भी यही राय है।

राडियाः ठीक है, फिर यही बेहतर रास्ता है, नहीं।

कनिः वह (मारन) सिर्फ झूठ बोल रहे हैं और झूठ फैला रहे हैं।

राडियाः नहीं, वह यूं ही बोल रहे हैं, क्योंकि मैंने राजदीप से कुछ मिनट पहले बात की थी। मैंने राजदीप से पूछा कि आपको यह सूचना कहां से मिली, तो उन्होंने कहा कि देखिए, मैं आपको कुछ बताने जा रहा हूं। राजदीप ने कहा कि सन टीवी न सिर्फ उनके, बल्कि *टाइम्स नाउ* और हर चैनल के संवाददाताओं के बीच खबर फैलाने में दिन-रात लगा है। उन्होंने बताया कि पिछली रात उन्हें इस बात का एहसास हुआ। उन्हें गलत खबर दी गई कि करार हो गया है.....उन्होंने कहा कि वे इसे लेकर बेहद सतर्क हैं, लेकिन इंफ्रास्ट्रक्चर का राजा और बालू को नहीं मिलना बहुत खतरनाक है।

.....

कनिः हलो।

राडियाः हाय., सुनो, वह लोग मीटिंग में व्यस्त हैं, लेकिन वे आपसे बात करेंगे।

कनिः समझी नहीं।

राडियाः वे लोग आपसे बात करेंगे, वह संदेश उन तक पहुंच गया है। मैंने उनको साफ बताया कि आप नहीं, सिर्फ राजा को ही शपथग्रहण समारोह में जाना था। दया (दयानिधि मारन) अहमद पटेल से बात नहीं कर रहे हैं। मुझे नहीं मालूम कि दया किससे बात कर रहे हैं।

कनिः ठीक है, नहीं दया शपथग्रहण में जा रहे हैं, नहीं?

राडियाः नहीं, मैंने कांग्रेस से यही सुना कि उन्होंने अपना नाम दिया है और वह शपथग्रहण में जा रहे हैं।

कनिः मुझे नहीं मालूम, उन्हें मेरे साथ वापस आना है। सो मेरा मानना है कि हमारे नेता कुछ कह रहे हैं और वे कुछ फैला रहे हैं। यही कि मैं...

राडियाः लेकिन, आपके डैड को यह बताया जाना चाहिए ना ?

कनिः यही तो बात है वो (मारन) आएंगे और मनगढ़ंत कहानियां उन्हें सुनाएंगे। वह बताएंगे कि अहमद पटेल – नहीं, नहीं, वह आकर कहेंगे कि अहमद पटेल ने फोन किया था। वह (अहमद) मुझे कह रहे थे कि कम-से-कम आपको तो आना ही चाहिए, क्योंकि आप एकमात्र प्रतिनिधि हैं कि आप द्रमुक की शक्ल हैं। अगर आप वहां नहीं होंगे तो ठीक नहीं होगा।

राडियाः अगर आपके डैड उनसे कहें कि उन्होंने सिर्फ राजा को जाने को अधिकृत किया है तो....।

कनिः नहीं, डैड, किसी भी हालत में ऐसा नहीं करेंगे..।

राडियाः मुझे मालूम है कि आप इससे...इस राजनीति से ऊब चुकी हैं। मैं जानती हूं कि आप उनसे हताश हो चुकी हैं। सो उसे, छोड़िए उनकी अनदेखी कीजिए। देखिए वे जल्द ही अप्रासंगिक हो जाएंगे, लेकिन आपको..।

कनिः यह सच नहीं है। आप जानती ही हैं कि अगर कोई अपनी ही पार्टी और नेता के खिलाफ हो जाए तो हमें फर्क नहीं पड़ता हां यही...

राडियाः हां तो फिर आपके पिता को यह समझना चाहिए,वह समझ नहीं रहे हैं, सो आपको उन्हें समझाना चाहिए।

कनिः मैं उन्हें कैसे समझाऊं ? वो समझ नहीं रहे हैं।

राडियाः फिर उन्हें कौन समझाएगा ? यह काम आप ही कर सकती हैं। कोई और नहीं, कनि। वो आपके सिवा किसी और की नहीं सुनेंगे, क्योंकि हर कोई

उन्हें समझाने से घबराता है। आप उनकी बेटी हैं, सो आपकी बात सुनेंगे। आपको अपनी हैसियत का इस्तेमाल करना होगा कनि, आपको यह करना होगा। अगर आप पार्टी को बचाना चाहती हैं तो आपको यह करना होगा।

कनिः मैं भरसक प्रयास करूंगी।

राडियाः यह हुई न बात, आप अपना ख्याल रखें। मैं चार बजे आपको कॉल करूंगी।

....

कनिः हलो।

राडियाः हाय, गुड मार्निंग।

कनिः माफ कीजिए आपको सुबह-सुबह जगा तो नहीं दिया।

राडियाः नहीं, नहीं।

कनिः नहीं, मैं सिर्फ यह जानना चाहती थी कि वे लोग मझे क्या देना चाहते हैं।

राडियाः मैंने उस रात आपको बताया था।

हमारी बात होने के बात मैंने उन्हें फोन किया था। जानती हो मैंने उन्हें क्या कहा। मैंने उनसे स्वास्थ्य विभाग के बारे में बात की थी। मैंने कहा कि अगर स्वास्थ्य का विकल्प खुला न हो तो पर्यावरण एवं वन-विभाग ही दे दिया जाए। स्वतंत्र प्रभार या फिर विमानन पर भी सोचा जा सकता है। आप जानती हैं मैंने उनसे तीन के बारे में बात की है, लेकिन वे लोग आश्वस्त नहीं कर पा रहे हैं।

कनिः यहां तक कि पर्यटन भी इस लायक नहीं।

राडियाः पर्यटन स्वतंत्र प्रभार है। वे यह विभाग आपको नहीं देंगे कनि, क्योंकि गुलाम नबी आजाद ने अभी तक अपनी ख्वाहिश नहीं बताई है। वह जितना मिला है, उससे ज्यादा चाहते हैं। आपको मालूम है उन्हें संसदीय कार्य-मंत्रालय मिला है। वे उससे संतुष्ट नहीं हैं।

कनिः अच्छा।

राडियाः यही वजह है, इसीलिए पर्यटन का जिक्र किया, क्योंकि मुझे मालूम नहीं कि वे सिर्फ एक कैबिनेट पद रखेंगे।

कनिः ठीक है। हो सकता है मैं पर्यटन की मांग करूं..आप जानते हैं कि वे स्वास्थ्य नहीं देंगे।

राडियाः मैं समझती हूं कि स्वास्थ्य आवंटित हो चुका है।

कनिः पर्यावरण वे दे देंगे, क्या आप जानती हैं।

राडियाः स्वतंत्र प्रभार? हां। आपने आज सुबह तक सूची दी थी। हां।

कनिः हां मैंने एक सूची दी थी।

राडियाः आपने उसमें विमानन को शामिल नहीं किया, कनि।

कनिः आप जानते हैं सिर्फ विमानन , मैं ले सकती हूं। उन लोगों ने कहा कि वे लौटकर बताएंगे।

रतन टाटा.. प्रमुख टाटा संस

नीर राडियाः तो क्या आप अभी भी मध्यपूर्व में हैं।

रतन टाटाः हां, मैं अभी भी मध्यपूर्व में हूं।

राडियाः बजट ठीक था। ग्रामीण विकास....।

टाटाः हां, इससे न इधर कुछ होना न उधर कुछ। मेरी एकमात्र चिंता है कि मारन राजा के हाथ धोकर पीछे पड़े हैं। मैं उम्मीद करता हूं कि राजा गिरेंगे या फिसलेंगे नहीं।

राडियाः नहीं ऐसा नहीं है। चीफ जस्टिस ने कहा है कि किसी भी मंत्री ने हाईकोर्ट जज को फोन नहीं किया। (मद्रास हाईकोर्ट के एक जज ने आरोप लगाया था कि एक केंद्रीय मंत्री ने उन्हें प्रभावित करने की कोशिश की और दयानधि मारन ने तुरंत ए. राजा की तरफ उंगली उठा दी थी।)

टाटाः वाह सच में ?

राडियाः भारत के मुख्य न्यायाधीश ने यह बयान जारी किया है, तो यह बात साफ स्पष्ट हुई। और किसी भी हालत में ऐसा नहीं हुआ और मारन अब थोड़ा बेवकूफ नजर आ रहे हैं।

टाटाः ठीक है।

राडियाः और बहरहाल कुछ हुआ तो कनि उभरेगी, न कि मारन।

टाटाः ठीक है।

राडियाः वैसे भी बार एसोसिएशन के अध्यक्ष ने खुली अदालत में यह कहा था।

टाटाः ठीक है।

.....

राडियाः टेलीकॉम जंग का दूसरा चरण शुरू हो गया है। मुझे पता नहीं कि और कितनी जंग लड़ी जाएगी।

टाटाः मझे आश्चर्य है कि जिस राजा के लिए आपने इतना कुछ किया, वही अब यह दांव खेलने लगे हैं।

राडियाः मैंने कनि को समझाया। मैं कल ही उनसे घर लौटते वक्त मिली थी। मैंने उनसे कहा, कनि जो हो रहा है वह यह है। उन्होंने कहा कि वह उन्हें बुलाकर ठीक से पेश आने को कहेंगी। उन्होंने (राजा ने) मुझसे साफ कहा देखो नीरा मैं कोर्ट के आदेश के खिलाफ कैसे जा सकता हूं? तो मैंने कहा- 'हेलो, मिस्टर राजा, आप कोर्ट के खिलाफ भी जा सकते हैं। कोर्ट ने जो कुछ भी कहा है उस पर चलने की जरूरत नहीं है, क्योंकि लाइसेंस इनटाइटलमेंट में 4.4 (मेगाहर्ट्ज) की बात है और इसकी व्याख्या करना आपका काम है। इसलिए यह छोटा-मोटा काम चल रहा है।

टाटाः लेकिन, अब नए अटार्नी जनरल यह जो भी हैं वह..।

राडियाः नही, रतन यह तो अच्छा ही है। मैं आपको बताऊंगी कि क्यों... क्योंकि वे तो बस संवैधानिक मामले ही देखते हैं। सॉलिसिटर जनरल सज्जन व्यक्ति हैं। मैंने आपको स्विमिंग पुल वाली बात बताई है.....गोपाल सुब्रमण्यम। उन्हीं को इसकी व्याख्या करनी है। मैं उनसे मिलने जा रही हूं। मैंने उन्हें संदेश भेजा था तो उनका जवाब था कि फुर्सत मिलने के बाद 5:30 या 6 बजे घर लौटकर फोन करेंगे। तब मैं उन से पूरी बात बताऊंगी। दरअसल, वे उनसे (अनिल अंबानी समूह) से घृणा करते हैं। मुझे विश्वास नहीं कि वे जो कहेंगे, उस पर वे सहमत हो जाएंगे। वह ईमानदार शख्स हैं....मैं समझती हूं, राजा अटार्नी जनरल को लाने की कोशिश करेंगे। उन्होंने कल पीएम को 3जी के बारे में बताया और कहा कि वे इस बारे में एक कैबिनेट नोट रखना चाहते हैं और मंत्रियों के समूह के पास नहीं जाना चाहते। वे लोग यह सब नाटक करेंगे, लेकिन मुझे नहीं लगता कि अगले साल मार्च से पहले 3जी नीलामी होने जा रही है। वे लोग यह हड़बड़ी में नहीं करेंगे। और अनिल के लिए 6.25 मेगाहर्ट्ज करने की एकमात्र वजह यह है एटीएनडीटी

को अपनी कंपनी के हिस्से खरीदने को राजी कर सकें। एटीएनडीटी उनसे ठीक अभी बात कर रही है, रतन।

रतनः अच्छा।

राडियाः हां, क्योंकि उन्हें एक एक्विटी पार्टनर की जरूरत है। वर्ना अपने कब्जे के कारण वे बच नहीं सकते। उनके रास्ते बंद हैं जब तक पूंजी नहीं उगाहते। और कुछ अन्य चीजें इधर-उधर नहीं करते।

रतनः इन सब का पर्दाफाश क्यों नहीं होता?

राडियाः रतन, वे मीडिया को खरीद रहे हैं। वे मीडिया को खरीदने की अपनी ताकत का इस्तेमाल कर रहे हैं। हर विज्ञापन के लिए वो जो मीडिया में देते हैं.. मीडिया के साथ मेरी जो बातचीत हुई है वह मैं आपको बता नहीं सकती... खासकर *टाईम्स समूह* और *दैनिक भास्कर*...अग्रवाल परिवार के लोग, जिनसे आप मिल चुके हैं।

रतनः हां..।

राडियाः वे कहते हैं नीरा जब कभी हम उनके बारे में नकारात्मक खबर छापते हैं, वे विज्ञापन वापस ले लेते हैं। तो, मैंने कहा ठीक है, दूसरे लोग भी विज्ञापन वापस ले सकते हैं। वे अपने मीडिया बजट का हर डॉलर यह सुनिश्चित करने में खर्च करते हैं कि कोई नकारात्मक प्रचार न मिले। मीडिया बेहद, बेहद लालची है।

बरखा दत्त

नीरा राडियाः हाय, मैंने आपको जगा तो नहीं दिया?

बरखाः हाय नीरा, मैं पूरी रात लगी रही, गतिरोध बरकरार है।

राडियाः वे, उनसे सीधे बात करना चाहते है। यही एक रास्ता है और यही समस्या है।

बरखाः लगता है, संदेश यह है कि बालू सार्वजनिक क्यों हुए? वे लोग अभी दावा कर रहे हैं कि उन्होंने, उन्हें यह फार्मूला दिया था और इन लोगों ने इसे ठुकरा दिया। इन लोगों ने यह कभी नहीं कहा कि वे बाहरी समर्थन वापस ले लेंगे। लगता है बालू के सार्वजनिक बयान से प्रधानमंत्री भी नाराज हैं।

राडियाः यह तो बालू को करनी है न?

बरखाः हां। बालू को करनी है। उन्हें करुणानिधि ने यह निर्देश नहीं दिया है।

राडियाः उन्हें कांग्रेस से बात कर वापस लौटनी थी, लेकिन बाहर मीडिया थी।

बरखाः हे भगवान ! तो मुझे उन्हें क्या कहना चाहिए? बताइए।

राडियाः मेरी बेटी और पत्नी से लंबी बात हुई। समस्या यह है कि उन्हें सीधे करुणानिधि से बात करनी चाहिए। समस्या ये है कि वे मारन, बालू के सामने बात नहीं कर सकतीं। तमिलनाडु से कई कांग्रेसी नेता हैं जो ऐसा कर सकते हैं। सबसे बड़ी समस्या यह है कि अलागिरी के लोग कह रहे हैं कि मारन को कैबिनेट पद दें और उन्हें राज्यमंत्री बनाएं, यह नहीं हो सकता है।

बरखाः क्या करुणा1 बालू को छोड़ देंगे?

राडियाः देखिए, अगर आप उन्हें कहें कि बालू ही समस्या हैं तो वो बालू को छोड़ सकते हैं।

बरखाः लेकिन, समस्या विभागों के बंटवारों की भी तो है?

राडियाः उन्होंने कुछ भी नहीं कहा है अभी पोर्टफोलियो पर कोई चर्चा नहीं हुई है।

बरखाः कांग्रेस दावा कर रही है, उसका जो भी मूल्य हो कि द्रमुक, भूतल, परिवहन, ऊर्जा, आईटी दूरसंचार, रेलवे और स्वास्थ्य चाहती है। अभी कांग्रेस ने आईटी, दूरसंचार, रासायन, उर्वरक और श्रम देने का प्रस्ताव किया है। मामला यहां है। क्या द्रमुक मान जाएगी?

राडियाः शायद नहीं। अगर वो स्वीकार करते हैं तो उन्हें मारन को छोड़ना होगा। मारन कोयला और खनन के लिए कोशिश कर रहे हैं।

बरखाः कौन जोर लगा रहा है?

राडियाः अब मारन कहते हैं कि उन्हें कोयला एवं खदान दिया जाए। मेरी ईमानदार सलाह यह है कि आप उन लोगों से कहें कि वे खुश हैं, क्योंकि कनिमोली को स्वतंत्र रहने पर भी कोई आपत्ति नहीं। लेकिन, अलागिरी उन्हें (कनिमोली को) कह रहे हैं कि मारन के कैबिनेट मंत्री रहते आप स्वतंत्र प्रभार नहीं रह सकतीं। कांग्रेस मीडिया और दूसरे स्रोतों से संदेश भेज रही है कि मारन हर किसी को यह कहते फिर रहे हैं कि वही स्वीकार्य व्यक्ति हैं। यह तो सही नहीं है न?

बरखाः मैं जानती हूं। हमने इसे समझ लिया है।

राडियाः कांग्रेस को करुणानिधि से यह कहने की जरूरत है कि हमने मारन के बारे में कुछ भी नहीं कहा।

बरखाः ठीक है। मुझे फिर उनसे बात करने दीजिए।

राडियाः उम्मीदवार के चयन का मामला आप पर छोड़ा है। बालू को लेकर हमारी कुछ आपत्तियां हैं। उन्हें यह कहने दीजिए कि हम मारन के बारे में कुछ भी नहीं कह रहे।

....

वीर संघवी

नीरा राडियाः हाय।

वीर संघवीः हाय, क्या आप बात कर सकती हैं?

राडियाः हां, हां बिल्कुल।

वीरः आपको मालूम है, मारन सोनिया से नहीं मिले।

राडियाः नहीं मिले।

वीरः वह सोनिया से नहीं मिलेंगे, वह वहां गए। वह लोग कहते हैं कि हम उन्हें आधिकारिक प्रवक्ता बिल्कुल नहीं मानते। उन्होंने अभी-अभी फोन किया था मैंने आपका संदेश देखा, वह हर आधे घंटे पर गुलाम नबी आजाद को फोन कर रहे हैं और नई-नई मांग रख रहे हैं। जहां तक हमारी बात है दो पत्नी, एक भाई, एक बहन, एक भतीजा, हमारे लिए मामला बहुत जटिल है। हमने एक बुनियादी पेशकश की है। यदि करुणानिधि हमारी बात सुनते हैं और कहते हैं कि सीधे बात करना चाहेंगे, वह श्रीमती गांधी से बात करना चाहेंगे, हम खुश होंगे। उन्होंने सिर्फ मनमोहन सिंह से बात की। हमने मारन से कहा कि उन्हें हमारे पास आकर बताना होगा कि हमारी पेशकश पर उनकी राय क्या है। और, लगता है चेन्नई में द्रमुक को बहुत खराब प्रेस मिल रही है।

राडियाः अच्छा...।

वीरः इसलिए उन्होंने कहा कि हम दो दिन के लिए और इंतजार करने जा रहे है। ठीक है उन्हें वापस आने दीजिए हमारी लाइन है कि यह कांग्रेस, द्रमुक समस्या

नहीं है, यह द्रमुक की आंतरिक समस्या है, क्योंकि पार्टी उनकी सभी पत्नियों, बच्चों और भतीजों के बारे में तय नहीं कर पा रही है। करुणानिधि को अपना रुख साफ करना होगा और एक व्यक्ति को मनोनीत करना होगा। हमें उस शख्स से डील करके बहुत खुशी होगी। हम इस मारन से खुश नहीं हैं जो हर समय गुलाम नबी को फोन करके कहते हैं, मुझसे बात करो, मुझसे बात करो। वे लोग उन्हें गंभीरता से नहीं ले रहे हैं।

राडियाः बहुत दिलचस्प। मझे खुशी है कि आपने गुलाम नबी से बात की, क्या की?

वीरः मैंने अहमद पटेल से बात की। गुलाम नबी बहुत महत्वपूर्ण व्यक्ति नहीं है। अहमद मुख्य व्यक्ति हैं।

राडियाः सही कहा।

वीरः हां। सो, अहमद कहते हैं कि मारन से गुलाम नबी डील कर रहे हैं, लेकिन गुलाम हमारे आधिकारिक व्यक्ति नहीं हैं। हम मारन को गंभीरता से नहीं लेते। जहां तक उनकी बात है उन लोगों ने पांच महत्वपूर्ण मंत्रालय मांगे हैं, यह बेहूदी और अतार्किक मांग है। अब बारी करुणानिधि की है कि वे हमसे बात करें, कनि हमसे मिले। कोई भी हमसे मिल सकता है और कह सकता है कि मैं अपने पिता से आपकी बात कराऊं आदि-आदि। इसके लिए टेलीफोन लाइन के दरवाजे खुले हैं। लेकिन, हमें ऐसी स्थिति पसंद नहीं जहां मारन फोन कर सुनाते रहते हैं कि मैं ही असल व्यक्ति हूं और गुलाम नबी से कहते रहते हैं कि मैं ये चाहता हूं, वो चाहता हूं। मारन कौन है?

राडियाः हूं।

वीरः संभवतः मारन आज चेन्नई गए हैं?

राडियाः हां, वह लौट गए हैं।

वीरः अहमद कहते हैं कि हमने मारन को साफ बता दिया है कि हम करुणानिधि से सीधे बात करना चाहते हैं। इसलिए वह वापस चले गए। अतः वे बहुत आशावान हैं। वे कहते हैं, हमने बड़ा जायज प्रस्ताव दिया था, हमें करुणानिधि के लिए इज्जत है। हम उन्हीं से डील करना चाहेंगे। हमें मारन के लिए कोई इज्जत नहीं है।

....

वीरः हलो।

राडियाः परेशान करने के लिए माफ कीजिए। उनके बीच बैठक हुई।

वीरः अच्छा।

राडियाः एमके नारायणन आए थे। और जैसा कि सुझाया गया था, सिर्फ कनि थी। लेकिन, वे लोग अभी भी अपने चार और एक मंत्री वाले फार्मूले पर चिपके हुए हैं।

वीरः ठीक है।

राडियाः लेकिन ये लोग इसके बारे में सोचेंगे और उन्हें कल बताएंगे। उन्होंने (अहमद) सब कुछ स्पष्ट कर दिया है।

वीरः ठीक है, बहुत अच्छा।

राडियाः मैं समझती हूं यह कोई मुद्दा नहीं था और मुख्यमंत्री की ओर से काफी राहत मिली। मुझे और उन्हें यह समझ में आया कि सब कुछ किया जा रहा है...

वीरः मारन द्वारा।

राडियाः हां, लेकिन ऐसा लगता है कि वो लोग अभी तक मारन को लाने के लिए काफी दबाव में हैं।

वीरः आखिर यह दबाव किधर से है।

राडियाः यह दबाव स्टालिन और उसकी बहन सेल्वी की तरफ से है।

वीरः अच्छा।

राडियाः मैं समझती हूं, मारन ने स्टालिन की मां दयालु को 600 करोड़ रुपये दिए हैं।

वीरः इस तरह के दबाव से बहस करना कठिन है।

राडियाः है न? लेकिन वे तीन और एक स्वतंत्र प्रभाव पर अड़ते हैं तो कनि को स्वतंत्र प्रभाव मिलेगा तथा अलागिरी, बालू और राजा अंदर जाएंगे।

वीरः यह इतना बुरा नहीं है।

राडियाः हां, मैं ऐसा ही सोचती हूं।

वीरः बशर्ते मारन को कैबिनेट में जगह न मिल जाए।

राडियाः हां, लेकिन मुझे लगता है कि वह तीन परिजनों को जगह नहीं देंगे इसमें से बुरा संदेश जाएगा।

......

वीरः हाय, नीरा।

राडियाः हाय वीर। आप कहां हैं? दिल्ली में या...?

वीरः मैं जयपुर में हूं। आज शाम आ रहा हूं।

राडियाः ठीक है, मैं अपने तमिल दोस्तों से बात कर रही हूं। मुझे मालूम नहीं कि आप कांग्रेस में किसी से संपर्क करने की स्थिति में हैं या नहीं। मैंने अभी-अभी कनि से मुलाकात की है।

वीरः मैं आज सोनिया से मिलने वाला था, लेकिन यहां फंस गया हूं। सो अब कल ही हो पाएगा। मैं राहुल से मिलता रहता हूं, लेकिन मुझे बताइए।

राडियाः वे समझ नहीं पा रहे हैं कि वे गलत आदमी से बात कर रहे हैं। इसलिए नहीं कि मैं मारन को नापसंद करती हूं। दरअसल, पिता ने मारन को बात करने के लिए अधिकृत नहीं किया है। आप जानते हैं न अब यह मामला बनाना रिपब्लिक जैसा हो गया है, जहां कैबिनेट...।

वीरः तो मारन पार्टी का चेहरा क्यों बन गए हैं। सभी लोग उनसे घृणा करते हैं।

राडियाः नहीं, वह नहीं है। मैं जानती हूं। लेकिन, कांग्रेस एक और मुगालते में है। उन्होंने मारन को संकेत दिया है कि प्रधानमंत्री द्रमुक को इंफ्रास्ट्रक्चर नहीं देंगे, लेकिन वह इंफ्रास्ट्रक्चर पाने को बेसब्र हैं।

वीरः बिल्कुल।

राडियाः लेकिन समस्या यह है कि एक नेता कनि का भाई है जो अलागिरि है, जो चुनाव जीत चुके हैं। और वह जन नेता हैं। आधा तमिलनाडु उनके कब्जे में हैं और पिता उन्हें नाराज नहीं कर सकते, क्योंकि...।

वीरः निश्चित ही।

राडियाः सिर्फ उनकी स्थिति के कारण।

वीरः हां।

राडियाः अब तक कांग्रेस इस बात को समझ नहीं पाई है।

वीरः तो उन्हें किससे बात करनी चाहिए?

राडियाः उन्हें सीधे करुणानिधि से बात करनी चाहिए। उन्हें कनि से बात करनी चाहिए।

वीरः मैं अहमद से बात करने की कोशिश करता हूं।

एम. के. वेणु

व्यापार पत्रकार

एम. के. वेणुः आपने रोहिणी की खबर देखी। आज आई है।

राडियाः नहीं, मैंने नहीं देखी है। मैं इसे अब देखूंगी। मैं रात 1.30 तक व्यस्त रही।

वेणुः लेकिन, खबर अंदर डाल दी गई। आज मनोज मोदी का वक्त भी रख रही है 2 बजे।

राडियाः तो खबर अंदर डाल दी गई?

वेणुः हैं, लेकिन ईटी में आप इसे मिस नहीं कर पाएंगी। लेकिन यह ऊपर के आधे हिस्से में लीड खबर है।

राडियाः आपको यह मालूम है कि गणपति मेरा पीछा कर रहे हैं, लेकिन मैं उन्हें यह देना नहीं चाहती। मेरे पास आंध्र प्रदेश के मुख्यमंत्री का एक पत्र है।

वेणुः अच्छा।

राडियाः मैं उन्हें यह देना नहीं चाहती, मैं डर रही हूं कि दे भी दूं और खबर भी लीक हो जाए। आपके अनुसार मुझे क्या करना चाहिए? उसने तगड़ा हमला किया है। उसने प्रधानमंत्री को लिखा है।

वेणुः आधा सीएम। दो साल पहले वह अनिल अंबानी की धुन गाते थे। ये काफी शख्त पत्र है, यार।

वेणुः क्या करूं यार। मैं इस खबर को दबने नहीं देना चाहती।

वेणुः सटीक सलाह। इसे ऐसे अखबार को दो जो इसे लीड फ्लायर खबर छापे। इसे *सीएनबीसी* को दो। तब ये लोग पर्याप्त भड़क जाएंगे। अगर *सीएनबीसी* दस बार इसे लीड खबर के रूप में प्रसारित करेगी तब सभी तितर-बितर हो जाएंगे। अगर मैं संपादक होता तो रोहिणी की खबर को प्रथम पृष्ठ पर आधे-हिस्से में लीड स्टोरी की तरह छापता। क्या आप सोचती हैं कि एमडी को एक पत्र भेजा जा सकता है? मोटे तौर पर यह कहते हुए कि हम आपको *ईटी नाउ* शुरू होने पर बधाई देते हैं। फिर आप कह सकती हैं कि राष्ट्रहित का एक बड़ा विवादास्पद मामला है और हमें आशा है कि आप इसे ले सकते हैं। जो आप जानती हैं वीएसआर रेड्डी की चिट्ठी के अनुरूप। ऐसा कर के आपको एक लगाना चाहिए।

राडियाः टाइम्स के प्रभाकर सिन्हा कैसे हैं?

वेणुः मेरी जानकारी के मुताबिक वे और उनके भाई अरुण कुमार दूसरे पक्ष के रिटेनर हैं। अरुण कुमार के बारे में तो मैं निश्चिंत हूं। वह और संदीप बमजई खुले आम पक्षपाती थे। मैं खाने पर शेखर भाटिया से मिला था। तब वह कार्यकारी संपादक हुआ करते थे। उन्होंने संदीप बमजई से कहा कि कम-से-कम एक हफ्ता तो छोड़ दो। कम-से-कम तीन से छह महीने आप उन्हें नहीं छेड़ें। शेखर भाटिया ने सरेआम उन्हें कहा।

राडियाः हां, मैं उन्हें दोष नहीं देती। मैं सुकुमार और संजय नारायण से मिली थी।

वेणुः इस संजय नारायण की टोनी (जेसुदासन) से दोस्ती है न? उनके कुछ बड़े हित साझा हैं।

....

तरुण दास

नीरा राडियाः यह शख्स दोपहर को वहां नहीं है तरुण। उन्हें चंडीगढ़ जाना ही जाना है।

तरुण दासः नहीं, यह अच्छा है, अच्छा है।

राडियाः तो वह कह रहे हैं कि वह शुक्रवार को यह कर सकते हैं।

तरुणः हां, शुक्रवार ठीक है।

राडियाः तो शुक्रवार को आपको कोई आपत्ति नहीं है?

तरुणः हां, शुक्रवार ठीक है, मैं यहीं हूं।

राडियाः ठीक है, मैं आगे बढ़ती हूं...।

तरुणः यहां मैं पूरे सप्ताह हूं।

राडियाः मैं इस दिशा में प्रयास करता हूं और आपको शुक्रवार की पुष्टि करती हूं, और शुक्रवार तय करती हूं। यदि शुक्रवार तय होता है तो शायद मैं भी आपके साथ जाऊं।

तरुणः यदि यह मामला ठीक-ठाक रहा तो करार क्या होगा।

राडियाः हूं...जमीन?

तरुणः हां।

राडियाः मैं इसे करती हूं। आप चिंता ना करें।

तरुणः हूं।

राडियाः मैं इसे सुलझाऊंगी। हम देखेंगे ना कि हम क्या कर सकते हैं। शायद वह इसे भारी रियायत पर दे पाएं। बाकी हम देख लेंगे। इसके बारे में चिंता न करे, तरुण।

तरुणः ठीक है।

....

तरुणः मैं अभी–अभी ड्राइव करता हुआ मुंबई पहुंचा हूं।

नीराः तो। क्या मुकेश 4 बजे आपका इंतजार करेंगे।

तरुणः हां, शाम में रतन के साथ मुझे डिनर करना है।

नीराः ओह, बहुत अच्छा। क्या आप उन्हें बताएंगे कि आप मुकेश से मिले थे?

तरुणः बताना ही पड़ेगा। सामान्यतः मैं बताता ही। मैं इसी तरह का हूं ना। मैं सबको बता देता हूं। आप जानती हैं कि मेरे नहीं बताने के लिए कुछ नहीं होता, और डिनर की वजह से ही तो मैं आ रहा था।

नीराः ठीक-ठीक है अच्छा। अच्छा,अच्छा,अच्छा। हां यह अच्छा है।

तरुणः आप कैसी हैं? आप क्या कर रही हैं?

राडियाः नहीं, कुछ भी नहीं। मैं कुछ मसलों पर सोच रही हूं। हम टेलीकॉम की जंग में फिर से शामिल होने जा रहे हैं। मैं सुनील से पिछले हफ्ते मिली थी।

तरुणः अकेले या किसी और के साथ?

राडियाः नहीं-नहीं, अकेले। सुनील मित्तल। सिर्फ यह जानने की कोशिश करने के लिए कि हम कहां हैं और क्या हम लोग....। रतन को भी उन पर भरोसा नहीं है। किसी भी कीमत में वह उनके साथ कुछ भी करने को तैयार नहीं हैं। लेकिन, मैं समझती हूं कि वह यह नहीं समझ पा रहे हैं कि इस वक्त वे एक-दूसरे की जरूरत हैं।

तरुणः हां।

राडियाः मैं यह देख सकती हूं। मैं देखना चाहती हूं कि ठीक कहां हमें इसकी जरूरत पड़ेगी। यही मैंने सुनील से भी कहा, मैंने कहा, राजा के प्रति इतना अहंकार मत रखिए।

तरुणः हां।

राडियाः तो रतन के साथ ऐसा ही है। वह आप जानते हैं सुनील को अपने ख्याल से निकाल नहीं सकते। उन्हें इन सालों में उनकी उपलब्धियों का श्रेय तो उन्हें देना ही होगा।

तरुणः तो सुनील आपको कैसे लगे? उनके बारे में आपकी क्या राय बनी?

राडियाः अच्छी, अच्छी, अच्छी। मैं अब भी... उन्हें भरोसा अभी बनाना पड़ेगा।

तरुणः आप उनसे ऑफिस में मिली, घर पर या कहीं और?

राडियाः हां उनके घर पर। हां, मैंने उनके ऑफिस जाने से इंकार कर दिया।

तरुणः वह आपके बारे में पूछ रहे हैं।

राडियाः उन्होंने कहा मैं हमेशा उनकी पहुंच से परे हूं। तो मैंने उनसे कहा, नहीं, देखिए, मैं आपके लिए काम नहीं कर सकती, क्योंकि आप जानते हैं कि रतन का एक नजरिया है। लेकिन, मुझे लगता है कि मैं आपकी मदद कर सकती हूं। कुछ क्षेत्रों में मुझे लगता है कि हमें साथ आने की जरूरत है.....।

रंजन भट्टाचार्य

रंजनः तो क्या मुकेश खुश हैं?

राडियाः बहुत खुश।

रंजनः आप जानती हैं उन्होंने मुझसे क्या कहा...?

राडियाः क्या?

रंजनः उन्होंने अपने चिर-परिचित अंदाज में कहा, मुझे और यह सब भूल जाइए। आप क्या सोचती हैं?

राडियाः अच्छा।

रंजनः वह कहते हैं, सर, ठीक है। मैंने कहा, मुकेश कभी कोई भावना दिखाइए। आपका तो सब काम हो गया।

राडियाः अच्छा।

रंजनः मोटू नहीं आया, ये नहीं हुआ। उन्होंने जवाब दिया। हां यार रंजन आपको मालूम है, आप सही हैं। अब तो कांग्रेस अपनी दुकान है।

राडियाः ठीक है सब सुनिए, मेरा मतलब है कि जीएनए (गुलाम नबी आजाद) का रास्ता तो है ही, लेकिन मैं एसजी (सोनिया गांधी) तक बात पहुंचाऊं तो बेहतर होगा?

रंजनः एसजी कौन?

राडियाः एसजी मतलब एसीजी - बॉस।

रंजनः सॉरी, मैं समझ नहीं पाया हां, बात पहुंचाइए..।

राडियाः हां मैं सुबह करती हूं। मैं किसी से मिल रही हूं।

रंजनः पर तुम जीएनए को भी बोल दो। वह तमिलनाडु देख रहे हैं।

राडियाः हां, मैं जानती हूं। ठीक है।[2]

सबूत और साक्ष्य के रूप में सुप्रीम कोर्ट में पेश राडिया टेप, दस्तावेज़ के रूप में संकेत देते हैं कि देश के तब तक के सबसे बड़े घोटाले का पर्दाफाश करने के बदले मीडिया का एक बड़ा वर्ग कैसे सरकार और कॉरपोरेट घराने संग मिलकर अपराध में साझीदार की भूमिका में थी।

कोयला घोटाला

कोयला घोटाले में भी खनन की दुनिया से अंजान मीडिया हाउसों को कोयला के खदानों की बंदरबांट कर दी गई। 2जी घोटाले की तरह ही कोयला घोटाले में यह साबित हुआ कि भारतीय लोकतंत्र का प्रहरी (वॉच डॉग) खुद लूट में शामिल होकर सरकार संग हिस्सेदारी पाते हुए लोकतंत्र का मजाक बना रहा था। पूर्व कोयला मंत्री दसारी राव, कोयला सचिव एस. सी. गुप्ता व झारखंड के पूर्व मुख्यमंत्री मधु कोड़ा कानून के शिकंजे आ चुके हैं। अदालत में सीबीआई दसारी रॉव के खिलाफ गंभीर सबूत पेश नहीं कर पाई। लिहाजा, इस मामले में उन्हें आरोप मुक्त कर दिया गया। 2जी मामले में राडिया टेप ने तो साबित किया कि केंद्र की सत्ता में मंत्री बनाने और हटाने के खेल में कैसे मीडिया की भागीदारी रही है। राज्य की सत्ता में भी ऐसा कुछ होता है ऐसा कोई टेप रिकार्ड, सबूत के तौर पर तो नहीं हैं, लेकिन एक निर्दलीय विधायक मधु कोड़ा जैसे नेता का झारखंड जैसे प्राकृतिक रूप से संपन्न राज्य का मुखिया बनना और कुछ ही दिनों के अपने कार्यकाल में कोयला खादानों की बंदरबांट की उनकी जल्दबाजी बहुत कुछ कहती है!

सुप्रीम कोर्ट में पेश किए गए सीएजी की रिपोर्ट से पता चलता है कि 2005 से 2009 तक की अवधि में कोयला खदानों के आवंटन में भारी घोटाला किया गया। भारत के नियंत्रक-महालेखा परीक्षकों (सीएजी) की रिपोर्ट के मुताबिक सरकार ने औने-पौने दामों में कोयला खदानों को निजी कंपनियों के हवाले कर दिया। इस भ्रष्टाचार से सरकारी खजाने को एक लाख छियासी हजार करोड़ की रकम का नुकसान हुआ। यह घोटाला इस बात का भी पुख्ता सबूत है कि देश के बहुराष्ट्रीय व्यापारी घराने, सरकारी नीतियों को मन मुताबिक तोड़ने-मोड़ने में किस तरह जुटे हुए हैं। द *हिंदू* में 7 सितंबर, 2012 और 28 जून, 2016 की सुजय मेहदुदिया की रिपोर्ट के हवाले से लिखा.. इंटर मिनिस्ट्रियल ग्रुप (आईएमजी) ने पाया है कि दस कंपनियों की कोयला घोटाले में भूमिका है, जिसने चार मीडिया घराने को अपने विशेष हित के लिए फायदा पहुंचाया। द *हिंदू* ने सरकारी सूत्रों के हवाले से तैयार अपनी रिपोर्ट में लिखा कि तीन प्रिंट मीडिया और एक इलेक्ट्रानिक मीडिया से जुड़ी कंपनी की भी कोल घोटाले में भागीदारी थी। आईएमजी ने इस मामले में उषा मार्टिन, जिंदल स्टील प्राइवेट लिमिटेड (jspl), विजा स्टील व भूषण स्टील को भी नोटिस भेजा था। (3)

कोलगेट घोटाला के एक मामले में आदित्य बिड़ला ग्रुप के मालिक कुमार मंगलम बिड़ला और पूर्व कोल सचिव पीसी पारेख का नाम दर्ज था। सीबीआई की विशेष अदालत ने इसी मामले में तत्कालीन प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह से पूछताछ के लिए सम्मन की जरूरत महसूस की थी। 11 मार्च, 2015 को दिल्ली की विशेष सीबीआई अदालत ने इस मामले में प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह को सम्मन जारी कर दिया। 3 [1] चूंकि इस मामले की निगरानी सुप्रीम कोर्ट कर रहा था, लिहाजा सुप्रीम कोर्ट के दखल के कारण प्रधानमंत्री को पेशी से राहत मिल गई। समझा जा सकता है कि मामला कितना गंभीर था। मीडिया रिपोर्ट के मुताबिक कुमार मंगलम बिड़ला का 51 प्रतिशत शेयर लिविंग मीडिया में और लिविंग मीडिया का 57.47 प्रतिशत शेयर *टीवी टुडे* ग्रुप में है, जिसका *इंडिया टुडे* पत्रिका से लेकर 'आज तक'' का साम्राज्य है। 3[2] बिजनेस स्टैंडर्ड के हवाले से तैयार अपनी रिपोर्ट में फर्स्ट पोस्ट ने साफ किया कि किस तरह कोयला घोटाले के आरोपों से घिरी कंपनियों का शेयर मीडिया चलाने वाली कंपनियों में है।

जिस ऊषा मार्टिन लिमिटेड का नाम कोयला घोटाले में सामने आया था, उसका झारखंड और बिहार के एक बड़े अखबार में शेयर है। दिलचस्प यह है कि छोटी-छोटी बातों पर बड़ी-बड़ी बहस चलाने वाला सरकारी और कॉरपोरेट मीडिया इन कंपनियों की करतूत पर या तो चुप्पी साधे खड़ा है या खबर को घुमा-फिराकर पेश कर रहा है। ऊपर आप पढ़ चुके हैं कि इंटर मिनिस्ट्रियल ग्रुप (अंतर मंत्रिमंडलीय समूह) की बैठक में यह सामने आया कि कौन-कौन सी मीडिया कंपनियां इस घोटाले में शामिल हैं। इसके बाद आरोपी दस कंपनियों पर कोयले की कालिख का मामला सामने आया, जिसने मीडिया चार घरानों को प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष रूप से मदद पहुंचाई। इस घटना से एक बार फिर यह भी छिपा नहीं रहा है कि किस तरह से कॉरपोरेट मीडिया जनता के साथ धोखेबाजी करती है।

दरअसल, कोयला घोटाले में फंसी कंपनियों ने विज्ञापन और अन्य प्रलोभन में मीडिया घरानों को पूंजीपतियों के हाथ की कठपुतली बना लिया। यह कॉरपोरेट मीडिया का ही कमाल है कि कोयला घोटाले की पोल खुलने के बाद भी बहस सिर्फ कोयला खदानों के आवंटन में हुई गड़बड़ी पर केंद्रित रही। मीडिया यह सवाल उठाने से बचती रही कि आखिर कोयला खदानों को निजी हाथों में सौंपने

की जरूरत ही क्या है? 2जी की तरह कोयला घोटाले में मीडिया की भूमिका सामने आई, लेकिन इस पर चर्चा कभी नहीं हुई।

लोकमत समूह अखबार अपने प्रसार के हिसाब से मराठी का सबसे बड़ा अखबार है। महाराष्ट्र के कई जिलों से इसका प्रकाशन होता है। मराठी के अलावा हिंदी में भी *लोकमत* समाचार प्रकाशित होता है। इस कंपनी का रिश्ता मुकेश अंबानी-राघव बहल-राजदीप सरदेसाई से भी रहा है, मराठी न्यूज चैनल *आइबीएन-लोकमत* इसका उदाहरण है। *लोकमत* के मालिक विजय दर्डा उस समय कांग्रेस पार्टी के राज्यसभा सांसद भी थे और कंपनी के दूसरे मालिक और विजय के भाई राजेंद्र दर्डा महाराष्ट्र की कांग्रेस सरकार में शिक्षा मंत्री थे। विजय दर्डा पत्रकार, व्यापारी और राजनीतिज्ञ एक साथ हैं। उन्हें 1990-91 में 'फिरोज गांधी मेमोरियल अवॉर्ड फॉर एक्सीलेंस इन जर्नलिज्म' मिल चुका है। इसके अलावा 1997 में 'जायंट इंटरनेशनल जर्नलिज्म अवॉर्ड' और 2006 में 'ब्रिजलालजी बियानी जर्नलिज्म अवॉर्ड' भी मिला हुआ है। 3 [3]

विजय दर्डा मीडिया मालिकों के प्रभाव वाली संस्था ऑडिट ब्यूरो ऑफ सर्कुलेशन के अध्यक्ष रहने के अलावा इंडियन न्यूज पेपर सोसायटी के अध्यक्ष भी रह चुके हैं। ये दोनों संस्थाएं मीडिया मालिकों के प्रभाव और उनका हित देखने वाली संस्थाएं हैं। दिलचस्प है कि दर्डा जैसे पत्रकार भारत में प्रेस की नैतिकता को बनाए रखने वाली संस्था प्रेस काउंसिल ऑफ इंडिया (पीसीआइ) के सदस्य भी रह चुके हैं। वर्ल्ड न्यूज पेपर एसोसिएशन के सदस्य होने के साथ और भी कई अंतरराष्ट्रीय मीडिया संगठनों के सदस्य हैं। कुल मिलाकर पत्रकारिता के नाम पर मालिक होकर भी जितने फायदे हो सकते हैं उन्होंने दोनों हाथों से बटोरे हैं। सीबीआई की शिकायत के बाद दिल्ली की विशेष सीबीआई अदालत के जज भरत पराशर ने 10 नवंबर, 2016 को कांग्रेस नेता विजय दर्डा, उनके बेटे देवेंद्र दर्डा पूर्व कोयला सचिव, एचसी गुप्ता, कोयला मंत्रालय के अन्य अधिकारियों समेत जेएलडी यवतलाम एनर्जी के खिलाफ कोल ब्लाक घोटाला मामले में आरोप तय कर दिए। गैरकानूनी तरीके से कंपनी को कोल ब्लाक आवंटित किया गया था। 3[4]

अपनी किताब 'पत्रकारिता: बिहार से झारखंड' में वरिष्ठ पत्रकार संजय झा लिखते हैं 'कोयला खदान आवंटन में मधु कोड़ा मुख्यमंत्री बनते ही जिस तरह से

जल्दबाजी की, उसका खुलासा बाद में हुआ। जब पता चला कि वीनी आयरन एंड स्टील लिमिटेड के विजय जोशी समेत कई लगुओं भगुओं को खादान आवंटन में मधु कोड़ा ने मामूली नियमों का भी पालन नहीं किया। 16 दिसंबर, 2017 को इस मामले में पूर्व मुख्यमंत्री मधु कोड़ा, तत्कालीन मुख्य सचिव एसके बसु व कोयला सचिव एसचसी गुप्ता को तीन-तीन साल की सजा हुई। आरोप लगा कि झारखंड से निकलने वाले दो प्रमुख अखबारों की इसमें बड़ी भूमिका थी।' लेकिन पूरा मामला मधु कोड़ा को मिली सजा तक ही सिमट कर रह गया। सवाल यह है कि कोड़ा किसे फायदा पहुंचा रहे थे! झारखंड में यह आम धारणा है कि निर्दलीय विधायक मधु कोड़ा को मुख्यमंत्री बनाने में मीडिया घरानों की बड़ी भूमिका थी। कोड़ा को मुख्यमंत्री बनाने का उद्देश्य ही था, कोयला घोटाले में मिल बांट कर खाना। लेकिन, इस मामले में निचली अदालत का फैसला आ जाने के बाद ही स्थानीय अखबारों की इसमें भूमिका पर चुप्पी लाद ली गई।

जिस तरह कई मीडिया समूहों के नाम कोयला घोटाले में आए हैं उससे सबक लेते हुए ऐसे नियम बनाने की जरूरत है जिससे देश में मीडिया स्वामित्व को अन्य उद्योगों के मालिकान से स्वतंत्र रखा जा सके।

राष्ट्रमंडल खेल घोटाला

वह भारत को गर्व कराने का अवसर था ! 2010 में बड़े खेल का आयोजन होना था। देश बेहद उत्साहित था। राष्ट्रमंडल खेल का आयोजन भारत की राजधानी नई दिल्ली में होना था। दिल्ली दुल्हन की तरह सज रही थी। यमुना तट पर अक्षरधाम मंदिर के पास भव्य खेल गांव तैयार था जहां राष्ट्रमंडल देशों के खिलाड़ियों के ठहरने के लिए शानदार व्यस्था की गई थी। उस खेलगांव में बेहतरीन इनडोर स्टेडियम भी तैयार किया गया था। खेल गांव से खिलाड़ियों को बिना किसी बाधा के एक नवीनतम रोड, बारापुला रोड तैयार किया गया जो सीधे खिलाड़ियों को जवाहर लाल स्टेडियम तक बिना किसी रेड लाइट सिग्नल के ले जा सके। बदनाम ब्लू लाइन के बदले, शानदार एसी रेड लाइन डीटीसी बसें दिल्ली की तस्वीर बदल चुकी थीं। राष्ट्रमंडल खेल के कारण दिल्ली की बदलती तस्वीर ने दिल्ली ही नहीं, पूरे देश को इतराने का मौका दे दिया। शानदार उद्घाटन समारोह के बाद ब्रिटेन के द गार्जियन ने लिखा..' भारत विश्वपटल पर उभरा, बेहतरीन उद्घाटन।' न्यूयार्क

टाइम्स ने लिखा खेल शुरू, भारत के उम्मीदों की लाज बच जाएगी! तय है कि दुनिया भर को उम्मीदें थीं भारत से, लेकिन खेल खत्म होते ही आयोजन समिति के चेहरे पर लगी कालिख ने साबित किया कि बिना रिश्वत और काले धन की लूट के दिल्ली की कोई तस्वीर नहीं बदलती।

दुखद यह कि इतने बड़े खेल के आयोजन के बहाने लूट का एक धंधा तेजी से चल रहा था यह सब कुछ उस खेल महाकुंभ के आयोजन के पहले ही सामने आ चुका था। लूट के इस धंधे में साझीदार होने का आरोप एक बार फिर मीडिया के समूह पर लगा। फिर साबित हुआ कि जिस मीडिया को भ्रष्टाचार के उजागर की जिम्मेदारी थी, उसका एक बड़ा वर्ग खुद उसका हिस्सेदार बना था। राष्ट्रमंडल खेल घोटाले में भारत के नियंत्रक महालेखक परीक्षक (कैग) ने कई मीडिया हाउस को सरकार के भ्रष्टाचार में सहयोगी करार दिया। कैग की रिपोर्ट के मुताबिक उस समय *हिंदुस्तान टाइम्स* अखबार में सुरेश कलमाड़ी के कॉलम नियमित छपते थे।

आरोप था कि राष्ट्रमंडल खेल आयोजन समिति के प्रमुख सुरेश कलमाड़ी *हिंदुस्तान टाइम्स* अखबार पर विशेष मेहरबान थे। वरिष्ठ खेल पत्रकार राकेश थपलियाल कहते हैं, उस दौरान हिंदुस्तान टाइम्स अखबार में कलमाड़ी के नियमित कॉलम छपते थे। ज्यादतर विज्ञापन कुछ चुनिंदा अखबारों को ही मिलते थे। *हिंदुस्तान टाइम्स* के प्रतिद्वंद्वी अखबार *टाइम्स ऑफ इंडिया* ने इसे गंभीरता से लिया। परिणाम स्वरूप कॉमनवेल्थ घोटाले का सच दुनिया के सामने आया।

मामले की जांच की जिम्मेबारी सीबीआई को सौंपी गई। जांच के बाद सीबीआई ने पाया कि 90 करोड़ के इस घोटाले में आयोजन समिति के महासचिव रहे ललित भनोट और महानिदेशक वीके वर्मा भी शामिल थे। कांग्रेस के कद्दावर नेता सुरेश कलमाड़ी आयोजन समित के प्रमुख थे और भ्रष्टाचार के आरोपों के बीच उन्हें अप्रैल 2011 में बर्खास्त किया गया था।

सीबीआई के आरोपपत्र में कलमाड़ी और अन्य अभियुक्तों पर खेलों की तैयारी के दौरान 'स्विस टाइमिंग' नाम की कंपनी को गैर कानूनी तरीके से फायदा पहुंचाने के आरोप लगे। कलमाड़ी को 25 अप्रैल, 2011 को गिरफ्तार किया गया था और वो नौ महीनों तक दिल्ली की तिहाड़ जेल में रहे। दिल्ली हाई कोर्ट ने 19 जनवरी, 2012 को उन्हें जमानत दी जिसके बाद उनकी रिहाई संभव हो सकी।

राष्ट्रमंडल खेलों के दौरान भ्रष्टाचार के बारे में विभिन्न रिपोर्टों के बाद केंद्रीय सतर्कता आयुक्त ने इस मामले को सीबीआई को सौंपा था। सीबीआई ने इस बारे में गहन छानबीन की और कलमाड़ी के कई नजदीकी सहयोगियों को गिरफ्तार किया गया। दिलचस्प यह कि देश के इतने बड़े खेल-घोटाले की खबर को देश के चुनिंदा अखबार और टीवी चैनलों पर इसलिए छुपाया गया, क्योंकि कलमाड़ी ने इन अखबारों और न्यूज चैनलों को रेवड़ी बांटे थे। दूसरे अखबारों में जब घोटाले की खबर छपती थी तो *हिंदुस्तान टाइम्स ग्रुप* के अखबार में उसकी लीपापोती कर दी जाती थी। इन तमाम प्रयासों के बाद भी सच को झुठलाया नहीं जा सका।

कैश फॉर वोट मामला

कैश फॉर वोट मामला जुलाई 2008 में तब सामने आया जब अमरीका से परमाणु समझौते के विरोध में वाम दलों द्वारा समर्थन वापसी से यूपीए सरकार के खिलाफ अविश्वास प्रस्ताव, यानी नो कॉन्फिडेंस मोशन आया था। मनमोहन सिंह की अगुआई वाली यूपीए-1 को विश्वास मत हासिल करना था। इस दौरान भाजपा सांसदों ने नोटों का बंडल सदन में लहराते हुए सरकार पर सांसदों को रिश्वत देने का आरोप लगाया था। इस घटना से संसद में अजीबोगरीब स्थिति उत्पन्न हो गई थी। भारत के संसदीय इतिहास में यह पहली घटना थी, जब विपक्ष के सांसद सदन के अंदर नोटों की गडिड्यां लहराते हुए कह रहे थे कि उन्हें सदन में अपने पक्ष में वोट देने के लिए सरकार ने कैश से खरीदने की कोशिश की है।

संसद में हुई इस शर्मनाक घटना को नोट के बदले वोट-कांड के नाम से जाना जाता है। 22 जुलाई, 2008 को मनमोहन सिंह सरकार संकट में आ गई थी। सरकार को संसद में विश्वास मत हासिल करना था। इसी दौरान भाजपा के तीन सांसदों अशोक अर्गल, फग्गन सिंह कुलस्ते और महावीर सिंह भगोरा ने संसद में एक करोड़ रुपये के नोट लहराते हुए वोट की खरीद-फरोख्त की साजिश का आरोप लगाया था।

भगोरा, कुलस्ते और अर्गल ने आरोप लगाया था कि अमर सिंह ने उनके यहां पैसे भिजवाए, ताकि वे न्यूक्लियर बिल पर वोटिंग के दौरान मनमोहन सरकार के खिलाफ अविश्वास प्रस्ताव के विरोध में वोट डाल दें।

बाद में हुए एक स्टिंग ऑपरेशन में अमर सिंह के नजदीकी संजीव सक्सेना का नाम भी इस मामले में सामने आया था। पहले इसकी जांच संसदीय समिति ने

की और 2009 में मामला दिल्ली पुलिस की क्राइम ब्रांच को सौंप दिया था। इस मामले में दिल्ली की तीस हजारी अदालत ने फग्गन सिंह, महावीर भगौरा और अमर सिंह को आईपीसी की धारा 120-बी और सीआरपीसी की अलग-अलग धारा के तहत गिरफ्तार कर जेल भेज दिया। इस पूरे मामले में अब तक किसी पत्रकार की कोई भूमिका नहीं थी। लेकिन, जल्द ही यह मामला सामने आया कि सांसदों की खरीद-फरोख्त का जो मामला सदन में आया, उससे पहले सीएनएन-आईबीएन न्यूज चैनल के प्रमुख राजदीप सरदेसाई के पास थे।

एक चैनल के संपादक राजदीप सरदेसाईं के पास वह सीडी एक दिन पहले ही पहुंच गई थी। लेकिन सरदेसाई ने पत्रकारीय धर्म न निभाते हुए सीडी दबा ली। राजदीप सरदेसाई पर आरोप लगे कि कांग्रेस के प्रति उनकी निष्ठा पुरानी थी और सीडी में साफ था कि सदन में मनमोहन सरकार को बचाने के लिए कांग्रेस ने भाजपा के सांसदों की खरीद-फरोख्त के लिए अमर सिंह का सहारा लिया था। जो सीडी राजदीप सरदेसाई को सौंपे गए थे उसमें साफ दिख रहा था कि अमर सिंह के सचिव सक्सेना ने टेबल पर रुपये रखते हुए बीजेपी नेताओं से सरकार के पक्ष में वोट करने को कहा। जब यह पूरा मामला सदन में आया तो राजदीप सरदेसाई पर सवाल उठे कि इतनी बड़ी खबर जब उनके पास थी तो उन्होंने पत्रकारीय धर्म का पालन करते हुए उसे दिखाया क्यों नहीं? सवाल उठना लाजमी था कि कोई पत्रकार इतनी बड़ी खबर को छुपा कैसे सकता है! अपने पास इतनी बड़ी खबर को छुपा कर उन्होंने आखिरकार किसे बचाने का प्रयास किया और क्यों?

राजदीप की इस पत्रकारीय निष्ठा ने फिर एक बार साबित किया कि कैसे भ्रष्टाचार का पर्दाफाश करने के जिम्मेदार पत्रकार खुद भ्रष्टाचारियों के लिए ढाल बन रहे थे। अपनी जिम्मेदारी न निभाना किसी पत्रकार को कानून के दायरे में तो नहीं कसता, लेकिन साख के इस पेशे में नैतिकता का सवाल तो उठाता ही है। वरिष्ठ पत्रकार मधु त्रेहान के कार्यक्रम *न्यूज लॉन्ड्री* में राजदीप जब अपनी किताब के प्रमोशन के लिए पहुंचे थे तो मधु ने उनसे सवाल किया कि आपने उस खबर को दिखाया क्यों नहीं? मधु के सवाल का जो जवाब राजदीप ने दिया, वह बेहद हास्यास्पद था। राजदीप ने कहा 'मेरे पास वक्त कम थे। मैंने खबर पर वकीलों की राय ली। वकीलों ने कहा इस सीडी के तह तक जाने के लिए अभी और वक्त चाहिए, ताकि इसकी सत्यता साबित हो सके।" राजदीप की इस दलील से वे खुद

सवालों के घेरे में थे। मधु ने राजदीप से कहा, क्या कोई वकील तय करेगा कि खबर क्या है? कितनी खबरों में हम ऐसा करते हैं राजदीप?[6]

राजदीप के पास मधु के सवाल का संतोषजनक जवाब नहीं थे। खबरों की आपाधापी में जब टीवी मीडिया में आगे निकलने की होड़ इस कदर हो, वैसे में इतनी बड़ी खबर को दबा लेना कई सवाल खड़े करते हैं। राजदीप जैसे नामचीन पत्रकार, जो खबरों के पीछे इतना भागता हो वह कुछ भी सफाई दें, हाथ लगी खबर को एअर होने से रोकने के उनके फैसले ने एक पत्रकार को नैतिकता के कठघरे में खड़ा तो कर ही दिया था। किसी पत्रकार के लिए मुश्किल होता है इतनी बड़ी खबर को दबा देना। टेलीविजन के प्रतिस्पर्धा में तो किसी पत्रकार का यह फैसला घातक माना जाता है, क्योंकि खबर यदि आप नहीं दिखाएंगे तो वह दूसरे को दे दिया जाएगा। इतनी बड़ी खबर को दबाते समय क्या राजदीप जैसे मंझे हुए पत्रकार ने एक बार भी नहीं सोचा कि इन खबरों के बहाव को रोका नहीं जा सकता है। राजदीप के उस फैसले ने किसी एक पत्रकार को ही नहीं, पूरे पेशे को संदेह के घेरे में डाल दिया। क्या सचमुच कुछ पत्रकारों ने भ्रष्टाचार के खिलाफ आवाज बनने के बदले उसमें खुद की हिस्सेदारी तय कर ली?

तीसरा अध्याय

एनडीटीवी और हवाला कारोबार

अस्सी के दशक के आखिरी सालों में भारतीय टेलीविजन पर फर्राटेदार अंग्रेजी से अपनी विद्वता और राजनीतिक सूझबूझ व संभ्रांत कलेवर से आम भारतीय को अपनी ओर खींचने वाले प्रणय राय भारतीय मीडिया का रूपक मर्डोक बनने का सपना साकार करने को ठान चुके थे। 'सत्यम शिवम सुंदरम' की शालीनता, सौम्यता और सत्यता से समाचार परोसने के दूरदर्शन के रंग में, विदेश से पढ़कर आए अंग्रेजीदां प्रणय राय रूपी सेफोलोजिस्ट का 'द वर्ल्ड दिस वीक' साप्ताहिक समाचार बुलेटिन गजब ढा रहा था। न्यूज के कलेवर में वो संभ्रांत अंग्रेजीदा अंदाज लोगों को अपनी ओर खींच रहा था। प्रणय राय का अंदाज एकदम अलहदा था। पत्रकारीय मिजाज और तेवर से अंजान टेलीप्रिंटर पर सपाट न्यूज पढ़कर निकल जाने के अंदाज से एकदम अलग।

यहीं से प्रणय राय को दूरदर्शन के सरकारी कर्मचारियों के अंदर पत्रकारीय अनुभवहीनता का फायदा उठाते हुए और खुद को धनकुबेर बनाते हुए, देश में अपना मीडिया साम्राज्य स्थापित करने की राह दिखने लगा था। अस्सी के दशक के आखिर में दूरदर्शन, जब 'रामायण' और 'महाभारत' टीवी धारावाहिक के माध्यम से बड़ी तेजी से आम मध्यवर्ग के घरों में दस्तक देते हुए लोकप्रिय हो रहा था उसी शुरुआती दौर में ही प्रणय राय ने 'न्यूज टू नाइट' और 'द वर्ल्ड दिस वीक'

के माध्यम से दूरदर्शन पर अपना दबदबा बना लिया! उस दौर में अपने हर एपिसोड के लिए प्रणय राय के लिए दूरदर्शन दो लाख रुपये का मानदेय वहन करता था। तब भास्कर घोष दूरदर्शन के महानिदेशक थे। कांग्रेस सरकार में उनकी जबरदस्त पैठ थी। प्रणय राय ने उसी दौर में 'एनडीटीवी' के नाम से अपना प्रोडक्शन हाउस शुरू किया। जब आम भारतीय पत्रकार इसकी कल्पना नहीं कर सकता था, यह प्रणय राय की काबिलियत और दूरदर्शिता को साबित करता है। लेकिन, आरोप लगता रहा कि प्रणय राय अपना साम्राज्य दूरदर्शन के संसाधनों से चलाते रहे, पूरी ठसक के साथ! दूरदर्शन के चर्चित डिबेट शो 'दो टूक' के एंकर और वरिष्ठ पत्रकार अशोक श्रीवास्तव ने अपने कार्यक्रम में कहा था कि प्रणय राय का एनडीटीवी, दूरदर्शन के संसाधनों से चलता था। दूरदर्शन का सामान कैसे एनडीटीवी के दफ्तर पहुंचा, किसी से छुपा नहीं है! मीडिया में यह चर्चा आम रही कि दूरदर्शन का फायदा उठाने के लिए ही 'एनडीटीवी' ने भास्कर घोष के दामाद राजदीप सरदेसाई को अपनी टीम का अहम हिस्सा बना लिया। प्रसिद्ध विचारक और लेखक श्री अय्यर ने अपनी बहुचर्चित किताब 'एनडीटीवी फ्राड' में तथ्यों और साक्ष्यों संग एनडीटीवी के फर्श से अर्श तक उठते हुए मीडिया जगत में छा जाने के लिए अपनाई गई तरकीबों को खोलकर रख दिया। दूरदर्शन के सहारे अपना साम्राज्य फैलाने की तरकीब प्रणय जान चुके थे, इसीलिए उन्होंने दूरदर्शन के तात्कालीन निदेशक भास्कर घोष के दामाद राजदीप सरदेसाई को शुरुआती दिनों में खुद के साथ जोड़ लिया, फिर पूरा का पूरा दूरदर्शन मानो उनका अपना हो गया।[1]

राजदीप को अपनी टीम में शामिल करने के फायदे एनडीटीवी को साफ-साफ दिखा। चर्चित 'पी गुरु' वेबसाइट में विश्लेषण के बाद श्री अय्यर ने अपनी किताब 'एनडीटीवी फ्रॉड' में इसी आधार पर कहा है कि भास्कर घोष से मिले फायदे के अनुभव के आधार पर ही प्रणय राय ने अपनी टीम में राजनेताओं, अफसरशाहों और सैन्य अधिकारियों के बेटे, बेटियों और नजदीकी रिश्तेदारों की फौज खड़ी कर ली। इस फौज में देश के तत्कालीन गृह राज्यमंत्री आरपीएन सिंह की पत्नी सोनिया सिंह चैनल की खास रिपोर्टर व एंकर थीं। दूसरी महिला सहयोगी निधि राजदान के जम्मू कश्मीर के मुख्यमंत्री और केंद्र में यूपीए सरकार की सहयोगी दल के नेता उमर अब्दुल्ला से घनिष्ठ संबंध थे। कश्मीरी मूल की निधि राजदान चैनल की मुख्य एंकर व रिपोर्टर थीं। तीसरी प्रभावशाली महिला दूरदर्शन के निदेशक

भास्कर घोष की बेटी और पत्रकार राजदीप सरदेसाई की पत्नी सागरिका घोष। उसके बाद तो सिलसिला जारी रहा। एनडीटीवी ने अपना ग्रुप सीईओ आईआरएस केवीएल नरसिंहा राव को बनाया था। केवीएल देश के पूर्व सेना प्रमुख केवीएन नरसिंहा राव के पुत्र थे। जब बरखा दत्त एनडीटीवी से बाहर की गईं तो बरखा के चर्चित शो "वी द पीपुल" जिस सराह जैकब के हवाले किया गया, उनका परिचय यही था कि वे केंद्रीय मंत्री मोंटेक सिंह अहलूवालिया की बहू थीं।

सत्ता और पावर रूपी इस भाई-भतीजावाद के कॉकटेल से भारतीय टेलीवीजन मीडिया में एनडीटीवी का जो कद बढ़ा, उसके सामने पूरी पत्रकारिता बौनी होती गई। तथ्यों और सबूतों के आधार पर अपनी बेबाक राय के लिए मशहूर सुब्रमण्यम स्वामी हर आम-ओ-खास के बीच कहते नजर आते रहे कि यह मान्यता है कि सफेदपोशों और शक्ति-संपन्न व्यक्ति के बच्चे या नजदीकी रिश्तेदार यदि शैक्षणिक रूप से नालायक हैं तो उन्हें एनडीटीवी में डलवा कर पत्रकार बना दिया जाए। स्वामी यूं ही कभी कुछ नहीं बोलते, ऊपर पेश उदाहरण तो बानगी भर है। श्री अय्यर ने तथ्यों संग इसकी व्याख्या अपनी किताब में की है। आप आगे पढ़ेंगे कि 'एनडीटीवी' अंग्रेजी में काम करने वाले ज्यादातर पत्रकारों के नजदीकी रिश्तेदार या तो राजनेता, मंत्री, उच्च सैन्य अधिकारी या बड़े नौकरशाह हैं।

'एनडीटीवी' में लगभग दस साल तक अपनी सेवा दे चुके संदीप भूषण ने दिसंबर 2015 में 'कारवां' मैग्जीन को दिए अपने साक्षात्कार में कहा एनडीटीवी में नौकरशाहों के संबंध रखने वालों की ही नौकरी पक्की होती थी। भूषण के मुताबिक उन्हें 2000 में एक बार इंटरव्यू में छांट दिया गया। बाद में उसी पोस्ट के लिए एक नौकरशाह की पैरवी के प्रभाव से उन्हें नौकरी मिली।[2] ये तमाम वो साक्ष्य हैं जो बताते हैं कि प्रणय राय ने भारतीय मीडिया मुगल बनने के लिए अपने पत्रकारीय ताकत को कैसे बढ़ाया! आगे आप पढ़ेंगे कि कैसे प्रणय राय ने कड़ी दर कड़ी अपनी टीम में ऐसे लोगों को शामिल किया जिसने पत्रकारिता के नाम पर हवाला के कारोबार में उनके हाथ मजबूत किए।

भारत में स्टार न्यूज संग डील और प्रणय राय का शक्ति-प्रदर्शन

दूरदर्शन के तत्कालीन महानिदेशक भास्कर घोष के दामाद राजदीप सरदेसाई को टीवी पत्रकार बनाने की कीमत दूरदर्शन ने क्या चुकाई, इसकी गवाही सीबीआई

की वह एफआईआर देती है, जो प्रणय राय के खिलाफ 1998 में सीबीआई ने दायर किया। सीबीआई की प्राथमिकी के मुताबिक सूचना और प्रसारण मंत्रालय व दूरदर्शन के कई अधिकारियों संग मिल कर प्रणय राय ने उस दौर में दूरदर्शन को पांच करोड़ से ज्यादा का चूना लगाया। [3] सीबीआई के आरोप के मुताबिक इस मामले में राजदीप के ससुर भास्कर घोष समेत कई अधिकारियों ने प्रणय राय की मदद की। घोष के एक साथी अधिकारी रतिकंता बसु जिसने प्रणय राय का साम्राज्य खड़ा करने में मदद की वे बाद में रूपक मर्डोक के स्टार न्यूज संग जुड़ गए। आरोप लगता रहा कि प्रणय राय ने दूरदर्शन को जो आर्थिक क्षति पहुंचाई, उससे दूरदर्शन आज तक नहीं उबर पाया। शुरुआत में दूरदर्शन के लिए महज एक साप्ताहिक प्रोग्राम 'द वर्ल्ड दिस वीक' बनाने वाले प्रणय राय ने 1994-95 में दूरदर्शन के साम्राज्य में संरक्षण के कारण 23 करोड़ का ठेका हासिल कर लिया[4]। दूरदर्शन के साथ सालों के बेहद लाभदायक डील के कारण 1997 में उदारीकरण के दौर में एनडीटीवी ने दुनिया के मीडिया मुगल के रूप में ख्याति प्राप्त रूपक मर्डोक के स्टार टीवी संग चमत्कारीय सौदा कर लिया। लुटियन की दिल्ली में अपने प्रभाव के कारण उन्होंने रूपक मोर्डोक को भारतीय बाजार में घुटने के बल खड़ा कर दिया। मर्डोक के सामने शर्त यह रखी गई कि यदि उन्हें भारत में व्यापार करना है तो उन्हें इस देश में स्टार न्यूज को तभी लाने दिया जाएगा, जब वे हर हाल में प्रणय राय के एनडीटीवी को अपना भारतीय प्रतिनिधि बनाएंगे। इसके लिए मर्डोक और एनडीटीवी के बीच पांच साल का करार हुआ। करार के मुताबिक मर्डोक के स्टार न्यूज को भारत में चलाने के लिए एनडीटीवी ने 20 लाख डॉलर प्रति साल का करार तय किया। दिलचस्प यह कि भारत में स्टार न्यूज चैनल की लॉन्चिंग के लिए जो जगह तलाश की गई वह भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री आईके गुजराल का सरकारी निवास था। वहीं से फरवरी 1998 में स्टार न्यूज का प्रसारण शुरू हुआ, लेकिन उसी गुजराल सरकार में सूचना और प्रसारण मंत्री रहे सी. एम. इब्राहिम के कार्यकाल में एनडीटीवी पर कार्रवाई तब हुई जब विजिलेंस की रिपोर्ट में यह सामने आया कि पिछले दस साल में एनडीटीवी ने दूरदर्शन का खून, जोंक की तरह चूस लिया। इस विजिलेंस रिपोर्ट को तत्कालीन संसदीय पैनल ने संस्तुति दी और सीबीआई जांच की सिफारिश की गई। लेकिन, लुटियन

की दिल्ली में एनडीटीवी का प्रभाव इस कदर बढ़ चुका था कि भ्रष्टाचार और आपराधिक षड्यंत्र का सिलसिला दस्तावेजों में सामने होते हुए भी सरकार और व्यवस्था की नाक के नीचे ही जारी रहा, लेकिन कार्रवाई नहीं हुई।[5]

सत्ता संग प्रणय राय की साठगांठ ऐसी रही कि सरकारें बदलती रहीं लेकिन गुजराल सरकार के समय विजिलेंस रिपोर्ट के आधार पर दूरदर्शन की संपत्ति गायब करने के आपराधिक ष़ड्यंत्र के लिए सीबीआई द्वारा प्रणय राय समेत दूरदर्शन के तत्कालीन आला अधिकारियों के खिलाफ़ 1998 में दाखिल एफआईआर सालों तक बस धूल फांकती रही। प्रणय राय पर आरोप तो हमेशा कांग्रेस के मंत्रियों के संग सांठगांठ के रहे, लेकिन 1999 में केंद्र में बनी एनडीए सरकार के सूचना प्रसारण मंत्री अरुण जेटली के दौर में उनके खिलाफ, दर्ज एफआईआर को ठंडे बस्ते में डाल दिया गया। आरोप लगते रहे कि अटल बिहारी वाजपेयी के नेतृत्व वाली एनडीए सरकार में प्रभावशाली मंत्री संग प्रणय राय के संबंध के कारण सीबीआई इस मामले में एक कदम भी आगे नहीं बढ़ी। बीतते साल में एनडीए के बाद यूपीए की सरकार दो बार आई, लेकिन 1998 में दर्ज एफआईआर पर आरोप पत्र दाखिल करने का कोई प्रयास नहीं किया गया। अंततः 14 साल बाद 2013 में सोनिया गांधी के नेतृत्व वाली यूपीए2 की सरकार के कार्यकाल के आखिरी दौर में जब सरकार भ्रष्टाचार में चौतरफा घिरी थी और चुनाव बाद सत्ता खोने का भय साफ दिख रहा था, सीबीआई ने दूरदर्शन संग आपराधिक षड्यंत्र के इस मामले में दिल्ली की विशेष अदालत में क्लोजर रिपोर्ट फाइल कर दिया। आरोप है कि यह सब तब हुआ, जब एजेंसी के पास प्रणय राय, दूरदर्शन के तत्कालीन महानिदेशक और राजदीप सरदेसाई के ससुर भास्कर घोष व दूरदर्शन के अन्य अधिकारी व बाद में मीडिया मुगल स्टार न्यूज के मालिक रूपक मर्डोक की टीम में अहम भूमिका निभाने वाले रतिकांता बसु के खिलाफ पुख्ता सबूत थे। इस पूरी घटना से यह साबित होता है कि सत्ता किसी की भी हो, सरकार किसी की हो, प्रणय राय की धमक रही। 5 [1] यही भ्रष्ट व्यवस्था की आपसी सांठ-गांठ है जिसमें मीडिया भी हिस्सेदार है, जिसकी भूमिका आम आदमी के लिए पहरेदार के रूप में होनी चाहिए थी। सही मायने में ये सत्ता और व्यवस्था में लाभ के उद्देश्य से किए घुसपैठ में मीडिया के मूल चरित्र की बानगी भर है।

कारोबारी प्रणय राय का अपनों से छूटता नाता

खालिस पत्रकारिता के लिए पहचाने जाने वाले प्रणय राय पत्रकारिता में डुबकी लगाते हुए मार्केटिंग के भी माहिर खिलाड़ी हो गए। लेकिन, बदलते दौर में कई आरोपों से घिरे होने के कारण एनडीटीवी में बाहरी फंडिंग लगभग बंद हो गई। जिस चैनल में तमाम सुविधाओं की कल्पना लेकर काम करने का सपना देखने वालों ने पाया कि वर्ष 2017 में दर्जनों वीडियो जर्नलिस्ट को एनडीटीवी ने एकाएक नौकरी से निकाल दिया। मीडिया में यह मान्यता थी कि एक बार यदि आप प्रणय राय परिवार के सदस्य हो गए तो बाहर नहीं जाएंगे, क्योंकि पत्रकारिता का वो सम्मान और सुख-सुविधा किसी पत्रकार को कहीं मिल ही नहीं सकता। लेकिन, बदले दौर में कर्मचारियों को निकालने का यह फैसला प्रणय राय को इसलिए लेना पड़ा, क्योंकि *एनडीटीवी* की मदर कंपनी आरआरपीआर को होने वाली तमाम संदिग्ध फंडिंग के आवक के रास्ते को केंद्र सरकार ने रोक दिया। ऐसे हालात में भी *एनडीटीवी* ने सिर्फ वीडियो जर्नलिस्टों को निकाला, रिपोर्टरों को नहीं निकाला, क्योंकि प्रणय राय को पता है कि चैनल में ज्यादातर लाखों लाख की सैलरी वाले पत्रकार बड़े-बड़े प्रभावशाली परिवारों से आए हैं जो बुरे वक्त में उनके लिए घातक हो सकते हैं, इसीलिए कॉस्ट कटिंग के नाम पर वीडियो जर्नलिस्टों को शिकार बनाया गया।

आरोप है रिपोर्टरों की वहां सालों तक सैलरी नहीं बढ़ी। कुछ नौकरी छोड़कर दूसरे विकल्प की तलाश में निकल लिए। बरखा दत्त जैसों ने नौकरी छोड़ी तो ट्विटर पर प्रणय राय के खिलाफ संग्राम शुरू कर दिया। चैनल की कार्यकारी संपादक निधि राजदान जैसों ने नौकरी से बाहर होने का सम्मानजनक रास्ता ढूंढने का प्रयास किया, लेकिन कुछ ही दिनों में सोशल मीडिया पर नौकरी से बाहर होने के इस तरकीब की तलाश के लिए ट्रोल हो गईं।

निधि ने जून 2020 में खुद ट्वीट कर जानकारी दी कि हार्वर्ड विश्वविद्यालय में उनकी नियुक्ति असिस्टेंट प्रोफेसर के रूप में हो गई है। चैनल के मालिक प्रणय राय ने ऑन एयर निधि को बधाई देते हुए कहा...बधाई प्रो. हार्वर्ड! आरोप के मुताबिक निधि ने महीनों तक अमेरिकी चुनाव की रिपोर्टिंग प्रो. हार्वर्ड के रूप में उसी चैनल के लिए किया। कमाल है! सात माह बाद निधि राजदान ने खुद ट्विटर पर खुलासा किया कि उनके साथ धोखा हुआ है। उन्होंने बताया उनके साथ

साइबर क्राइम हुआ है। उन्होंने बताया, लंबे इंतजार के बाद हार्वर्ड विश्वविद्यालय से कोई ऑफर लेटर नहीं मिला। एक ई-मेल के माध्यम से उन्हें हार्वर्ड के पत्रकारिता विभाग में नियुक्ति का ऑफर आया था। कमाल है उसी ई-मेल को निधि राजदान जैसी नामचीन पत्रकार ने नियुक्ति पत्र मानकर हार्वर्ड में प्रोफेसर बन जाने का ढोल पीट लिया। उन पर आरोप लगाया जाता है कि पोल खुलने पर निधि ने खुद को पीड़ित बताते हुए दिल्ली पुलिस में एक शिकायत कर औपचारिकता पूरी कर ली।

कमाल है दो दशक तक लगातार एनडीटीवी में रिपोर्टर से संपादक तक की कुर्सी पर रही निधि राजदान एक सामान्य ई-मेल को हार्वर्ड जैसे दुनिया के प्रतिष्ठित विश्वविद्यालय का ऑफर लेटर मानकर घोषित कर दिया कि वह प्रोफेसर हो चुंकी हैं। इसके लिए उनके संपादक प्रणय राय ने उन्हें ऑन एयर 'कांग्रेचुलेशन प्रो हार्वर्ड' कह कर बधाई दे दी। आरोप है निधि ने धोखाधड़ी का खुलासा तब किया जब कुछ लोगों ने पड़ताल कर सोशल मीडिया पर शेयर किया कि हार्वर्ड में पत्रकारिता का कोई विभाग है ही नहीं तो निधि को ऑफर लेटर कहां से मिला! इतनी बड़ी पत्रकार निधि राजदान के साथ धोखाधड़ी, कई सवाल करता है। सवाल यह कि दूसरों को सजग करने वाली इतनी बड़ी संपादक कोई सामान्य परिवार से तो थी नहीं। विदेश से नया नाता तो था नहीं। निधि के कश्मीरी पंडित पिता का सालों तक देश के कई प्रधानमंत्री व मंत्री से बेहद नजदीकी रिश्ता रहा है। निधि उसी महाराज कृष्ण राजदान की बेटी हैं जिनका पांच दशक तक लगातार PTI में जलवा रहा। वामपंथ से गहरा नाता रहा। सालों तक PTI में प्रमुख रहते वर्ष 2016 में रिटायर्ड हुए। पत्रकारिता और सत्ता का जलवा निधि राजदान ने बचपन से देखा। 2005 में पत्रकार निलेश से शादी के कुछ ही दिनों बाद तालाक हुआ। वह जम्मू कश्मीर के पूर्व मुख्यमंत्री उमर अब्दुला की खास मित्र रहीं! कहते हैं दोनों शादी करना चाहते थे, लेकिन मुस्लिम बहुल कश्मीर में उमर के पिता, फारुख अब्दुल्लाह की राजनीति में यह रिश्ता भारी पड़ सकता था, क्योंकि निधि एक कश्मीरी पंडित थी। यह चर्चा यह समझने के लिए भी कि सुब्रमण्यम स्वामी और श्री अय्यर जैसे लोग आरोप लगाते रहे कि प्रणय राय ने प्रभावशाली लोगों के बच्चों और परिजनों को अवसर दिया, इसके क्या मायने हैं। ऐसे प्रभावशाली पत्रकारों का इस तरह साइबर क्राइम का शिकार हो जाना अचंभित करता है जिनकी पूरी जिंदगी इस तरह की खबरों के खुलासे में गुजरा हो।

जिस प्रणय राय ने सिर्फ नैतिकता और ईमानदारी के नाम पर पत्रकारीय जीवन का अपना नायाब चेहरा पेश किया, जिस एनडीटीवी ने बिना किसी टीआरपी के टीवी चैनलों के प्रतिस्पर्धा में निचले पायदान पर रहते हुए भी मीडिया में सबसे ज्यादा सैलरी और सुविधा देने का मिसाल कायम किया। सवाल यह है कि आखिर यह कैसे संभव था! जबकि किसी भी चैनल की आय उसकी टीआरपी पर ही निर्भर करती है, क्योंकि उसी आधार पर विज्ञापन मिलते हैं। टीआरपी में और कोई गिरावट नहीं आई, लेकिन 2016 के बाद एनडीटीवी ने यकाएक टीवी पत्रकारिता में महत्वपूर्ण भूमिका निभानेवाले वीडियो जर्नलिस्टों को सड़क पर लाकर छोड़ दिया। कैमरामैन का काम भी रिपोर्टरों को सौंप कर उन्हें दोहरी मजदूरी के लिए विवश कर दिया गया। मोबाइल से 'सेल्फी लाइव' रिपोर्टरों की मजबूरी हो गई। वही चैनल, जो बिना टीआरपी के टेलीविजन मीडिया जगत में सबसे ज्यादा सैलरी और कर्मचारियों को अथाह सुख-सुविधा संग नौकरी की गारंटी देता था, हर पल कॉस्टकटिंग के खौफ का अड्डा बन गया। नौकरी जाने के भय में, सालों से लाखों की सैलरी वाले रिपोर्टर भी बिना कैमरा और वीडियो जर्नलिस्ट के खुद ही मोबाइल से सेल्फी स्टाइल में वीडियो बनाकर रिपोर्टिंग करने को विवश हो गए। आखिर यकायक ऐसा क्या हो गया! हवाला व मनी लॉन्ड्रिंग की कमाई पर नकेल कसने के बाद बदहाली की इस पत्रकारिता को एनडीटीवी की आरआरपीआर मैनेजमेंट, टीवी पत्रकारिता में नई पहल के नाम पर सैमसंग मोजो (मोबाइल जर्निलज्म) कहा और इसे पत्रकारिता में नवीन तकनीक का नाम देकर खुद अपना महिमा-मंडन शुरू किया। इस प्रोमो का प्रयोजक सैमसंग मोबाइल को बनाया गया। भारतीय मीडिया मुगल के दरबार में आर्थिक तंगी को बेचने का भी ये नायाब तरीका था जिसमें कैमरामैन की सैलरी और लाखों के कैमरे की जगह एक मोबाइल कंपनी को प्रायोजक बनाकर काम चलाया जाने लगा। यह सब यकायक उस चैनल में जहां के मीडियाकर्मियों की सैलरी और सुविधा की कसमें देश के दूसरे चैनलों में खाई जाती थीं। नौकरी बचाने को विवश कल तक न्यूनतम टीआरपी पाने वाले इस न्यूज चैनल में लाखों की सैलरी वाले रिपोर्टर इस बदहाल हालात में अपनी लाचारी का प्रोमो बनाकर टीवी स्क्रीन पर टेक्नोक्रेट होने का दंभ बघारने लगे। महीने दो महीने बाद उनमें से भी कुछ की बारी आई। दरअसल, यह दंभ बदलते हालात में नौकरी बचाने का उनका प्रयास भर था।

9 जून, 2017 में जब प्रणय राय के ठिकानों पर इनकम टैक्स विभाग की छापामारी हुई तो दिल्ली स्थित प्रेस क्लब ऑफ इंडिया में 'प्रेस की आजादी की रक्षा जरूरी' के नाम पर एक बड़ा प्रेस-कांफ्रेंस आयोजित कर हल्ला बोल किया गया। जबकि, सीबीआई ने कभी एनडीटीवी के दफ्तर पर छापा नहीं मारा। उसने शेयर होल्डरों की शिकायत पर मुकदमा दर्ज कर प्रणय राय के घर और अन्य ठिकानों पर छापा मारा था, लेकिन इसे अभिव्यक्ति की आजादी और पत्रकारिता पर हमला बताया गया। इस प्रेस कांफ्रेंस के कुछ ही दिनों बाद प्रणय राय ने जब फिर से अपने स्टाफों की छंटनी की तो हल्ला बोल कार्यक्रम में मालिक के सुर में सुर मिलाने वाले अपने मसीहा डॉ. राय को हिटलर और लुटेरा बताने लगे।

कमाल देखिए प्रणय राय के ठिकानों पर छापेमारी उनके पत्रकारीय सरोकार से संबंधित नहीं था, वह एक भ्रष्टाचार का सालों पुराना मामला था, लेकिन उसे पत्रकारिता पर हमला का हल्ला बोल किया गया। इसके महज तीन साल बाद 23 अप्रैल, 2020 को रिपब्लिक चैनल के एडिटर इन चीफ अर्नब गोस्वामी को उनके पत्रकारीय सरोकार से जुड़े मामले में सम्मन जारी कर बुलाया गया। 12 घंटे थाने में पूछताछ के नाम पर प्रताड़ित किया गया। इतना ही नहीं, उनके सीएफओ से आर्थिक लेनदेन का ब्योरा लिया गया। इसके लिए उन्हें भी सम्मन किया गया। घंटों पूछताछ की गई। कारण यह कि अर्नब गोस्वामी ने अपने चैनल पर महाराष्ट्र के पालघर में दो संतों की पीट-पीट कर हत्या के मामले में महाराष्ट्र सरकार को घेरा। उनसे ताबड़तोड़ सवाल किए। फिर अक्टूबर 16 की रात यकायक उसी *रिपब्लिक चैनल* के सलाहकार संपादक को एंट्रीसिपेटरी बेल मिले होने के बाद भी 10 घंटे के लिए थाने में बैठाकर पूछताछ की गई, मोबाइल जब्त कर लिया। पत्रकारों के किसी संगठन ने आवाज नहीं उठाई। इसे अभिव्यक्ति की आजादी का मुद्दा नहीं बनाया। यह बदलते दौर में पत्रकारिता के खेमेबाजी में बंटने का दौर माना जाने लगा। यह बतलाया जाने लगा कि अर्नब गोस्वामी के रिपब्लिक भारत ने दो दशक से टीवी पत्रकारिता में नंबर वन रहने के आजतक के दंभ को तोड़कर नंबर एक हो गए। इसी खीज में ज्यादातर चैनल उनके खिलाफ हो गए। फिर उन पर टीआरपी की चोरी का आरोप लगा दिया मुंबई पुलिस कमिश्नर परमबीर सिंह ने। परमबीर सिंह ने 14 अक्टूबर, 2020 को एक प्रेस कांफ्रेंस का आयोजन कर अर्णब और उनके चैनल पर यह गंभीर आरोप लगाए, जबकि सच यह था कि एफआईआर में

रिपब्लिक के बदले आज तक चैनल के अंग्रेजी संस्करण टीवी टुडे का नाम था। कमाल है बिना एफआईआर पढ़े पुलिस कमिश्नर और टीवी चैनल के संपादकों ने टीवी न्यूज के दुनिया में नए-नए नंबर एक बने अर्नब और उसके चैनल पर हमला कर दिया। बीते दौर की पत्रकारिता से यह एकदम अलग थी, जहां लोग एक-दूसरे मीडिया संस्थान का नाम तक अपने चैनल पर नहीं लेते थे।

इसी कड़ी में एक बड़ा नाम बरखा दत्त है। बरखा ने *एनडीटीवी* छोड़ने के बाद अक्टूबर 2017 में सोशल मीडिया का सहारा लेते हुए अपने आदर्श प्रणय राय को फेसबुक पर बेपर्दा करने लगीं। बरखा ने अक्टूबर 2017 के आखिरी हफ्तों में लगातार कई पोस्ट लिखकर यह साबित करने का प्रयास किया कि प्रणय राय अपनी सुविधा के मुताबिक समझौतावादी हैं। बरखा ने लिखा सर्जिकल स्ट्राइक के दौरान चिदंबरम के इंटरव्यू को प्रसारित न करना, अमित शाह के बेटे जय शाह मामले पर अंग्रेजी चैनल के संपादक श्री निवासन जैन की खबर रोकना साबित करता है कि वे पत्रकारिता के नाम पर क्या कर रहे थे! बरखा के मुताबिक उन्होंने जब इसका विरोध किया तो नौकरी गंवानी पड़ी। अक्टूबर 2017 को मीडिया की खबरों के लिए चर्चित वेब साइट 'भड़ास4 मीडिया' ने बरखा के तीन फेसबुक पोस्ट को संकलित कर खास रिपोर्ट तैयार की। उससे पहले फरवरी 2017 में 160 पेज के अपने दस्तावेजी किताब 'एनडीटीवी फ्रॉड' में श्री अय्यर ने वो तमाम साक्ष्य पेश कर दिए जो प्रणय राय और एनडीटीवी के भारतीय मीडिया मुगल बनने की पोल खोल कर रख दी।

श्री अय्यर की किताब *एनडीटीवी फ्रॉड* के मुताबिक विश्व में छाई 2008 की मंदी के दौर में 64 करोड़ का आयकर देने के नाम पर बहुतों की सैलरी में कटौती की गई थी। जबकि, सच्चाई यह थी कि उसी दौरान एक शेल कंपनी के नाम पर एनडीटीवी ने 150 मिलियन डॉलर (लगभग 650 करोड़ रुपये) हवाला रकम के रूप में बरमूडा और नीदरलैंड से मंगवाए थे। दिसंबर 2015 में 'आज तक' में लंबे समय तक क्राइम रिपोर्टिंग करने वाले पत्रकार दीपक शर्मा ने वेबसाइट 'इंडिया संवाद' पर अपनी रिपोर्ट में लिखा कि *एनडीटीवी* ने 2008 में इंडिया बुल्स से 501 करोड़ का कर्ज लिया। मुकेश अंबानी से 353 करोड़ का उधार लिया, लेकिन इसकी वापसी हुई या नहीं, इसका कोई रिकॉर्ड नहीं है। *इंडिया संवाद* ने यह रिपोर्ट कारवां मैग्जीन समेत आयकर अदालत में दाखिल दस्तावेज के हवाले से कई

रिपोर्ट तैयार की थी। हां, ये उसी प्रणय राय की उपलब्धि थी जो पत्रकारिता के नाम पर सिर्फ ईमानदारी और नैतिकता का धंधा करने का स्वांग रचते हैं।

पत्रकारिता के नाम पर नैतिकता की बात करने वाले प्रणय राय ने 2जी घोटाले के मुख्य आरोपी रहे केंद्रीय मंत्री ए. राजा के पक्ष में बैंटिंग करने का आरोप झेल रही बरखा दत्त को कंपनी का शेयर देकर मालिकाना हक दे दिया था। पिछले अध्याय में आप पढ़ चुके हैं कैसे यूपीए-2 सरकार बनाने के दौरान मंत्रिमंडल गठन की रूपरेखा तैयार करने के लिए राडिया टेप में बरखा की भागेदारी सामने आई जिसमें वह डीएमके नेताओं को मनमोहन सिंह सरकार में मंत्री बनाने के लिए अपनी ऊर्जा लगा रही थीं। बदलते वक्त में बरखा का कंपनी में कद बढ़ा और अब वह कंपनी के कई शेयर की मालकिन हो गई थीं। लेकिन हालात को भांपते हुए बरखा दत्त ने यकायक जनवरी 2017 में प्रणय राय के दरबाजे से बाहर छलांग लगाते हुए लगभग डेढ़ दशक पुरानी *एनडीटीवी* की नौकरी छोड़ दी। वैसे बरखा की दलील है कि खबरें रोके जाने का विरोध करने के कारण उन्हें नौकरी गंवानी पड़ी। सच जो भी हो, कहने को यह डूबते जहाज से चूहों के भागने सरीखे हैं लेकिन यह बरखा दत्त को पता है कि प्रणय राय जिस काम-काज में शामिल रहे हैं उसके आपराधिक रिकार्ड सीबीआई, ईडी और आयकर विभाग जैसी जांच एजेंसी के पास है। उससे बचने के लिए ये बहाने काम नहीं आ सकते। प्रणय राय और राधिका राय के साथ जिस आपराधिक मामले में बरखा के हिस्सेदार होने का आरोप है उससे बचने का एक ही तरीका है कि वह सरकारी गवाह बन जाए! सवाल यह है कि क्या बरखा ऐसा करेंगी? नवंबर 2017 में लगातार किए अपने ट्विट्स और फेसबुक पोस्ट में बरखा ने जिस तरह से 2जी घोटाले में खुद पर लगे आरोप प्रणय राय पर मढ़ दिया। उससे इसकी आशंका बढ़ती है कि बरखा, प्रणय राय को परेशानियों में डाल सकती हैं। *एनडीटीवी* से बाहर होने के बाद कांग्रेस नेता और पूर्व कानून मंत्री कपिल सिब्बल को सता कर बरखा यह साबित कर चुकी हैं कि बदले के भाव में आए तो कुछ भी कर सकती हैं। बरखा ने *एनडीटीवी* छोड़ने के बाद कपिल सिब्बल की पत्नी संग मिल कर *तिरंगा* चैनल लांच करने की तैयारी की। सिब्बल यह चैनल इस उम्मीद में ला रहे थे, क्योंकि राजस्थान, मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ में कांग्रेस की सरकार आ गई थी। सिब्बल को प्रोपराइटर मिलने की उम्मीद थी। लेकिन, एमपी में सरकार

गिरने से पहले सिब्बल ने भांप लिया कि कमजोर घोड़े पर कोई दांव नहीं लगाता। कुछ ही माह में चैनल बंद हुआ। बरखा का सिब्बल की पत्नी से टकराव इस कदर हुआ कि देश के पूर्व कानून मंत्री को अदालत में घसीटने की धमकी बरखा ने 15 जून, 2019 को खुलेआम ताबरतोड़ टिव्यूट्स कर देने लगी। बरखा खुद की लाखों की सैलरी संग 200 कर्मचारियों को बिना नोटिस के निकाले जाने के खिलाफ अदालत जाने की धमकी दे रही थीं। बरखा ने दुनिया को यह भी बताया कि मीट का कारोबार करने वाली सिब्बल की पत्नी तिरंगा टीवी की ऑफिस में चिल्लाकर कहती है... उन्होंने मजदूरों को एक पैसा दिए बिना फैक्ट्री बंद कर दी तो ये पत्रकार क्या बला हैं। ये कौन होते हैं छह माह की सैलरी मांगने वाले। अंततः सिब्बल को अपनी साख बचाने के लिए सभी कर्मचारियों की तीन महीने की अग्रीम सैलरी देकर मामले को रफादफा करना पड़ा।

सीबीआई के चंगुल से एनडीटीवी की मुक्ति और नैतिक सरोकार से टूटता नाता

यूपीए सरकार में अपनी गहरी पैठ और एनडीए सरकार में प्रभावशाली मंत्री के बरदहस्त होने के कारण सीबीआई के चंगुल से मुक्ति ने आम आदमी को यह एहसास करा दिया कि देश में सरकार किसी की भी प्रणय राय का सत्ता में अपना रौब है। राजनीतिक ताकत के बल पर नैतिकता के आवरण में एनडीटीवी ने दूरदर्शन के साथ जो कुछ भी किया फिर टैक्स चोरी व हवाला के तहत विदेशों से गैरकानूनी तरीके से फर्जी कंपनियों के आधार पर गबन किया। चर्चित वेबसाइट "पी गुरु डॉट कॉम" ने पिछले कई सालों से उसे परत-दर-परत खोला है। इसी वेबसाइट के आधार पर आर्थिक मामले के जानकार, लेखक और विचारक श्री अय्यर की किताब "एनडीटीवी फ्रॉड" नाम से फरवरी 2017 में बाजार में आई। श्री अय्यर ने मीडिया जगत में गॉसिप का हिस्सा रहे एनडीटीवी के कारनामे को तथ्यों और साक्ष्यों संग सामने रख दिया। श्री अय्यर लिखते हैं कि भारतीय मानस में जो सम्मान लोकतंत्र के चौथे स्तंभ के रूप में मीडिया का रहा, है प्रणय राय ने अपनी राजनीतिक पहुंच से लुटियन क्लब में शामिल होकर पत्रकारिता को अलग रूप में लाकर रख दिया। ये सब एक बानगी है, यह बताने के लिए कि कैसे, प्रेस की स्वतंत्रता के नाम पर मीडिया मालिकों के गोरख धंधे ने पत्रकारिता के स्तर को बहुत नीचे गिराकर रख दिया।

प्रेस की आजादी और वॉर रिपोर्टिंग के ग्लैमर के नाम पर जाने-अनजाने दुश्मन की सेना को मदद करने का आरोप भी सबसे पहले बरखा पर ही लगा। इंडियन एक्सप्रेस में नौकरी के बाद प्रणय राय के भरोसेमंद सिपाही के रूप में बरखा को कश्मीर में रिपोर्टिंग का लंबा अनुभव प्राप्त हुआ। जम्मू-कश्मीर के तत्कालीन मुख्यमंत्री और सबसे प्रभावशाली नेता फारुख अब्दुल्ला से बरखा के घनिष्ठ संबंध थे। दिल्ली की मीडिया के कुछ गॉसिप को अब्दुल्ला ने बरखा के साथ एक इंटरव्यू में (चैनल पर 2007 में प्रसारित) इस बात का जिक्र भी किया है। लुटियन की दिल्ली में अपने मालिक प्रणय राय के बढ़ते कद के कारण बरखा कारगिल युद्ध के दौरान युद्ध मैदान से लाइव रिपोर्टिंग का अधिकार पा गईं।{6} फिर बरखा के उस अनुभवहीन और अति उत्साहित रिपोर्टिंग का खामियाजा भारतीय सेना को उठाना पड़ा। आरोप है कि कारगिल युद्ध के दौरान उस लाइव रिपोर्टिंग के कारण दुश्मन को भारतीय सेना की कई खुफिया जानकारी मिली और ठिकाने का पता चला, जिससे सेना के कई जवान शहीद हो गए। लेकिन, *एनडीटीवी* के लुटियन दिल्ली में प्रभाव के कारण बरखा की गैर जिम्मेदाराना रिपोर्टिंग के लिए कोई कारवाई भी नहीं हुई। मीडिया की स्वतंत्रता के नाम पर कांग्रेस और भाजपा के प्रभावशाली नेताओं ने भी इस बेहद गंभीर मामले पर पूर्णतः चुप्पी लाद ली। हर मामले में सरकार के खिलाफ आवाज उठाने वाले वामपंथी दल की चुप्पी भी काबिले गौर थीं। यह इसलिए कि भारतीय काम्युनिस्ट पार्टी [M] के पोलित ब्यूरो मेंबर बृंदा कारत प्रणय राय की पत्नी और *एनडीटीवी* की पार्टनर राधिका राय की बहन थी। और हमेशा भारतीय राजनीति में विरोध की आवाज के प्रतीक रहे कम्युनिस्ट पार्टी [M] के 2009 तक महासचिव रहे प्रकाश कारत उसी बृंदा कारत के पति हैं, मतलब प्रणय राय के साढ़ू। ऐसे में लुटियन दिल्ली में प्रणय राय के प्रभाव को समझा जा सकता है। बाकी कसर प्रणय राय ने नौकरशाह, मंत्री, प्रभावशाली नेता और सैन्य अधिकारियों के नजदीकी रिश्तेदारों को अपने चैनल में नौकरी देकर पूरी कर ली थी। तथ्यों संग इसकी जानकारी आपको पहले भी दी जा चुकी है। नतीजा यह कि एनडीटीवी ने पत्रकारिता संग सत्ता में भी अपनी पैठ बनाकर अपने कारोबार की राह आसान कर ली।

कारगिल युद्ध की नायाब लाइव रिपोर्टिंग के बाद 2002 के गुजरात दंगा की रिपोर्टिंग में एनडीटीवी ने पत्रकारिता के सभी आयाम को धता बताते हुए ऐसी

पत्रकारिता को अंजाम दिया जिसकी अतीत में कभी कोई मिसाल नहीं। बदलते दौर में *एनडीटीवी* का कद लगातार बढ़ता रहा था। 2004 में जब केंद्र में वाजपेयी सरकार के हटने के बाद सोनिया गांधी की वरदहस्त वाली यूपीए की मनमोहन सरकार दिल्ली की सत्ता पर काबिज हुई *एनडीटीवी* की ताकत और बढ़ गई। उस समय मानो एनडीटीवी ने दिल्ली के बाद, गुजरात में भाजपा की मोदी सरकार को कुचल डालने का ठेका ले लिया। गोधरा में अयोध्या से लौट रही साबरमती एक्सप्रेस की एस-6 बागी में 59 कारसेवकों को स्थानीय मुसलमानों द्वारा जिंदा जला देने से भड़की हिंसा की *एनडीटीवी* ने एकतरफा रिपोर्टिंग की। इस पूरे दंगा के लिए दिल्ली से रिपोर्टिंग के लिए गए राजदीप सरदेसाई और बरखा दत्त ने बिना सबूत और साक्ष्य के सीधे मुख्यमंत्री नरेंद्र मोदी का चरित्र हनन करते हुए उन्हें पूरे दंगा के लिए दोषी साबित कर दिया।[7] यह सिलसिला 12 साल तक लगातार जारी रहा। गुजरात दंगा की रिपोर्टिंग में सीधे मरने वालों और मारने वालों के मजहब की व्याख्या की जाने लगी। पत्रकारिता में ऐसी मिसाल पहले कभी देखने को नहीं मिली। भारत में सुपारी पत्रकारिता का यह बेहतरीन उदाहरण है।[8]

वाजपेयी के नेतृत्व वाली केंद्र की एनडीए सरकार और उसके उभरते राजनेता व गुजरात के मुख्यमंत्री नरेंद्र मोदी के खिलाफ लगातार सुपारी पत्रकारिता की जा रही थी। उसी दौरान, वर्ष 2003 में मीडिया मुगल रूपक मर्डोक के *स्टार न्यूज* से लगभग सौ मिलियन डॉलर का करार हासिल उस पर अपना आधिपत्य हासिल कर लिया। फिर चौबीस घंटे के चैनल के रूप में अपना खुद का लाइसेंस प्राप्त कर लिया। प्रणय राय के मित्र अरुण जेटली उस समय देश के कानून मंत्री थे। दिल्ली दरबार में प्रणय राय की इस ताकत को समझते हुए रूपक मर्डोक ने *एनडीटीवी* के खिलाफ कोई एफआईआर दर्ज नहीं करवाया और चुपचाप अपना बोरिया बिस्तर बांध लिया[9] इस प्रकरण और समय का आकलन करते हुए समझा जा सकता है कि प्रणय राय की पैठ उसी भाजपा सरकार में कितनी रही जिसकी कब्र वे लगातार खोदते रहे।

नरेंद्र मोदी के खिलाफ लगातार अपना एजेंडा चलाने वाले एनडीटीवी के संबंध वाजपेयी सरकार में उपप्रधान मंत्री लालकृष्ण आडवाणी और प्रभावशाली मंत्री प्रमोद महाजन से भी बेहद गहरे थे। माना जाता है कि उस दौर में कैबिनेट मीटिंग का एजेंडा और चर्चा का गोपनीय संदेश भी एसएमएस के द्वारा चैनल की

एक वरिष्ठ महिला पत्रकार तक पहुंचाया जाता था। मोदी सरकार के पुरुष मंत्रियों द्वारा महिला पत्रकार के प्रति विशेष सहयोगात्मक भाव के प्राकृतिक भावना समझा जा सकता है, लेकिन यह गोपनीयता को खंडित करने वाला कतई नहीं होना चाहिए। लेकिन, सच यह है कि वह महिला रिपोर्टर देश में रहे या विदेश में, कैबिनेट मीटिंग के दौरान गोपनीयता की पूरी खबर होती थी। [10]

एनडीए सरकार में प्रणय राय की घुसपैठ को इतने भर से नहीं जाना जा सकता है। दिलचस्प यह है कि बाजपेयी के नेतृत्व वाली एनडीए सरकार के दौरान झटके से देश में दो बड़े नेशनल चैनल को लाईसेंस मिला- एनडीटीवी 24&7 व एनडीटीवी इंडिया। अंग्रेजी और हिंदी के 24घंटे के ये दोनों चैनल प्रणय राय और उनकी पत्नी राधिका राय के मालिकाना हक वाले एनडीटीवी ग्रुप के ही थे। इन चैनलों को लाईसेंस उस दौर में मिले जब सीबीआई दूरदर्शन के साथ जालसाजी और घोखाधड़ी के मामले में प्रणय राय और उनकी कंपनी एनडीटीवी के खिलाफ दर्ज एफआईआर की जांच कर रही थी। लुटियन दिल्ली में प्रणय राय का यह दबदबा साबित करता है कि गुजरात के मुख्यमंत्री मोदी के बढ़ते कद को रोकने के लिए भाजपा और कांग्रेस के पारंपरिक राष्ट्रीय स्तर के नेता उन्हें अपना नैतिक समर्थन दे रहे थे। दरअसल, हर कद्दावर नेता मोदी को खुद की राजनीतिक भविष्य की राह में बाधक मान रहे थे और प्रधानमंत्री और राष्ट्रपति की रेस में दौड़ने के लिए मरे जा रहे थे। प्रणय राय देश के महत्वाकांक्षी राजनेताओं की इसी चाहत का इस्तेमाल कर रहे थे।

कभी दूरदर्शन की संपत्ति को अपनी निजी संपत्ति समझने वाले प्रणय राय और राधिका राय के अच्छे दिन तो अभी आने थे। 2004 में इंडिया शाइनिंग का नारा देने वाली वाजपेयी की अगुआई वाली एनडीए हार गई। कांग्रेस के नेतृत्व में वामपंथी पार्टी के सहयोग से सोनिया गांधी की वरदहस्त वाली यूपीए की सरकार दिल्ली में काबिज हो गई, फिर प्रणय राय के स्वर्णिम दिन शुरू हो गए। *एनडीटीवी* शाइनिंग के दौर आ गए। पी. चिदंबरम देश के वित्तमंत्री बने और नई दिल्ली के ग्रेटर कैलाश स्थित न्यू दिल्ली टेलीविजन (एनडीटीवी) की रौनक बढ़ने लगी। यूपीए के इस कार्यकाल में फिर टैक्स चोरी के दर्जनों मामले के आरोप में एनडीटीवी पर लगने लगे। चिदंबरम और प्रणब मुखर्जी बतौर वित्त मंत्री एनडीटीवी को खैरात बांटने लगे{11}। प्रणब मुखर्जी जब राष्ट्रपति बने तो एनडीटीवी ने

अपना 25वां सालगिरह राष्ट्रपति भवन में मनाया। स्वतंत्र भारत में यह पहली बार हुआ कि राष्ट्रपति भवन में कोई निजी समारोह का आयोजन हुआ। वर्ष 2013 के इस समारोह में देश भर के बिजनेस महारथी के साथ-साथ लगभग पूरी भारत सरकार मौजूद थी।

प्रणय राय की यह पहुंच यूं ही नहीं थी। आरोपों का बाजार गर्म था, अदालत में मामले चल रहे थे। सोनिया गांधी की अगुआई वाली यूपीए2 की सरकार उस समय, अब तक के तमाम घोटलों को धता बताते हुए कॉमनवेल्थ, 2जी, कोलगेट और केजी बेसिन जैसे घोटाले में देश को लूटने में लिप्त थी। मीडिया के वॉच्र डॉग के बदले एनडीटीवी की इन घोटालों में हिस्सेदारी थी। जांच में यह सामने आया कि 2006 यूपीए के दौरान जब चिदंबरम वित्त मंत्री थे, मलेशिया के मैक्सिस ग्रुप और एअरसेल घोटाला हुआ। सौदेबाजी और घोटाले में तत्कालीन वित मंत्री पी. चिदंबरम के बेटे कार्ति चिदंबरम की कंपनी को फायदा पहुंचाया गया, और चिदंबरम परिवार की अवैध कमाई का यह 50 मिलियन डॉलर एनडीटीवी में लगाया।11 [1] दस साल के यूपीए सरकार में आजाद भारत का सबसे बड़ा और सबसे ज्यादा घोटाले हुए, लेकिन एनडीटीवी और उसके जांबाज रिपोर्टरों ने एक भी घोटाले का पर्दाफाश नहीं किया। यह काम अखबार के रिपोर्टर सबूतों संग करते रहे, लेकिन रिपोर्टिंग के लिए जो पद्म पुरस्कार किसी को नहीं मिला था, प्रणय राय के दो जांबाज संवाददाताओं राजदीप सरदेसाई और बरखा दत्त को उसी दौरान सरकार ने पद्मश्री पुरस्कार से नवाजा। आरोप है इनके कारनामे ये थे कि ये जांबाज सरकार के घोटालों में चुप्पी साधे थे। कौन प्रधानमंत्री की कैबिनेट में मंत्री रहे, इसके लिए घोड़े दौड़ा रहे थे। गुजरात में तब के मुख्यमंत्री नरेंद्र मोदी के राजनीतिक करियर को तबाह करने के लिए खबरों की जोड़तोड़ के गुणा-भाग की साजिश में लिप्त थे। 2012 में गुजरात विधानसभा चुनाव के दौरान राजदीप सरदेसाई को नरेंद्र मोदी के इंटरव्यू का फिर अवसर मिला। वे चुनावी हेलिकॉप्टर में सीएम की सीट के नीचे बैठकर मोदी का इंटरव्यू कर रहे थे। गुजरात में 2002 के बाद के बदलाव के बदले लुटियन मीडिया के वर्ग के सवालों की सुई वहीं दंगे पर अटकी थी, जिसका मनमुताबिक जवाब चाहते थे। सवाल पूछते ही नरेंद्र मोदी ने राजदीप को लगभग आईना दिखाते हुए जवाब दिया.... 'राजदीप सरदेसाई

को मैं शुभकामनाएं देता हूं। इस मुद्दे के सहारे वे दस साल से जी रहे हैं। इसी से इनकी रोजी-रोटी चलती है। सुना है.. मोदी को गाली देने वालों को राज्यसभा की टिकट मिलती है। पद्मश्री मिलता है। मेरी शुभकामनाएं राजदीप को.. आप अपना अभियान जारी रखें। ऐसे मित्रों के सहारे राज्यसभा जाइए। पद्मश्री वगैरह कुछ पाइए।' कमाल है, मोदी की शुभकामनाएं उन्हें अपनी सहयोगी बरखा दत्त और विनोद दुआ संग तुरंत लग गई। पत्रकार से वे भी पद्मश्री हो गए। ये वही दौर था.... घोटालेबाजों और सरकार के बीच पत्रकार बिचौलिये बन रहे थे। पीछे आप राडिया टेप की कहानी में विस्तार से जान चुके हैं।

एनडीटीवी की जांबाज रिपोर्टर पत्रकारिता के बदले भ्रष्ट मंत्री और धन्नासेठों के बीच बिचौलिये के धंधे में कैसे लिप्त थे, राडिया टेप उसका ठोस उदाहरण है जिसे आप पीछे पढ़ चुके हैं। यूपीए सरकार के दौरान इन जांबाजों के कारण एनडीटीवी को एक से एक निवेशक मिल रहे थे। मुकेश अंबानी समेत ओसवाल ग्रुप के मालिक व नवीन जिंदल के ससुर ने भी *एनडीटीवी* में अपना निवेश किए। फिर यह वही दौर था जब सोनिया गांधी की अगुआई वाली यूपीए सरकार 2जी, कोलगेट, केजी बेसिन और कॉमनवेल्थ घोटाले में लिप्त थी। इस में से किसी भी घोटाले के खुलासे या उसकी गंभीर रिपोर्टिंग उस चैनल ने नहीं किया जिसके जांबाज रिपोर्टर पद्म पुरस्कार पा गए या हर साल रामनाथ गोयनका अवार्ड पाते रहे। वर्ष 2012 में लेखक यासिर हुसैन ने अपनी किताब "करप्शन फ्री इंडिया" में लिखा है- जब देश में घोटाले का दौर था बरखा दत्त, सोनिया के पक्ष में पत्रकारिता में लीन थीं।

यूपीए के दस साल के कार्यकाल में *एनडीटीवी* लगभग हर दिन गुजरात के मुख्यमंत्री नरेंद्र मोदी को लेकर ही ब्रेकिंग चलाते रहे। गुजरात दंगे की खबर नहीं रही तो सोहराबुद्दीन या इशरत जहां एनकाउंटर की खबर या *एनडीटीवी* या तो खुद के रिपोर्टर के हवाले से या तरुण तेजपाल के "तहलका" के माध्यम से खबर ब्रेक कराता रहा। अपनी बेटी की साथी संग बलात्कार के प्रयास का केस से हाल ही में बरी हुए तरुण तेजपाल जैसे क्रांतिकारी पत्रकार उस दौर में बस मोदी के खिलाफ फर्जी सबूतों के आधार पर खबर बनाने की वजह से स्टार बनते रहे। तेजपाल और एनडीटीवी, एनजीओ चलाने वाली तीस्ता सितलवाड़ और गुजरात

कैडर के आईपीएस संजीव भट्ट की तरफ से तैयार आधारहीन तथ्यों के आधार पर खबर बनाते रहे, लेकिन एसआईटी रिपोर्ट की जांच के बाद अदालत में कभी टिक नहीं पाए।

चैनल के एंकर की आईआरएस पत्नी पर लगा आरोप

टेलीविजन पत्रकारिता में अभिनय के गुर के बड़े मायने हैं। जिस किसी भी खांटी एंकर व रिपोर्टर को बेहतर अभिनय नहीं आया, वह टीवी में पिछड़ गया। यह पत्रकारिता में एक आम धारणा बन गई। इसी धारणा ने टीवी और प्रिंट की पत्रकारिता में एक खाई पैदा कर दी। विदेश से पढ़कर आए अंग्रेजीदां अभिसार शर्मा को दो दशक तक पत्रकारिता की एक्टिंग करने के बाद भी भले ही गेहूं और धान में अंतर नहीं पता हो (एनडीटीवी में लंबे समय तक एंकर रहे अभिसार शर्मा *एबीपी न्यूज* में रहते अगस्त 2017 में इंसेफेलाइटिस पर पूर्वी उत्तर प्रदेश के एक धान के खेत से रिपोर्टिंग कर रहे थे तो धान और गेहूं को एक बता रहे थे, वह वीडियो खूब वायरल हुआ था), लेकिन चैनल उनके माध्यम से देश की नब्ज़ टटोलता रहा। ऐसे न जाने कितने लोग, पत्रकार सिर्फ इसलिए बन गए, क्योंकि वे प्रभावशाली परिवार से थे।

अभिसार की आयकर अधिकारी पत्नी सुमना सेन को *एनडीटीवी* के द्वारा आयकर चोरी की जांच के लिए जांच अधिकारी नियुक्त किया गया था। अब इसके लिए सुमना सेन का ही चयन क्यों किया गया, यह भी जांच का अलग विषय होना चाहिए था। लेकिन जांच में यह सामने आया कि *एनडीटीवी* द्वारा आयकर मामले के नियम-कायदों को ताक पर रखने का मामला सामने आने के बाद भी मामले की जांच अधिकारी सुमना सेन इसकी रिपोर्ट विभाग को नहीं सौंपे! आरोप है ऐसा सिर्फ इसलिए, क्योंकि उनका पति अभिसार शर्मा उस चैनल में न्यूज प्रजेंटर थे।

यह मामला तब सामने आया जब विभाग के बड़े अधिकारी आयकर आयुक्त एस. के. श्रीवास्तव ने आरोप लगाया कि सुमना ने अपने पति के हित को ध्यान में रखते हुए चैनल को आयकर की रकम एक करोड़ 41 लाख रुपये का लाभ पहुंचाया। श्रीवास्तव की रिपोर्ट के मुताबिक सुमना के इस फरेब में एक और महिला अधिकारी अशिमा नेब की भूमिका थी। चैनल ने इसके एवज में सुमना को कई विदेश यात्रा भी करवाया, जिसमें अभिसार साथ थे। जांच में श्रीवास्तव ने आरोप

लगाए कि चैनल में चिदंबरम के अवैध पैसे लगे हैं। आरोप के अनुसार सुमना सेन ने इन सबूतों को ठंडे बस्ते में डालने के खेल में भी चैनल की मदद की। [12]

श्री अय्यर की किताब 'एनडीटीवी फ्रॉड' के मुताबिक एनडीटीवी के मेंटर तत्कालीन वित्त मंत्री पी. चिदंबरम, श्रीवास्तव की इस ईमानदारी से बहुत व्यथित हुए। अंततः श्रीवास्तव को इस एवज में न सिर्फ चिदंबरम को उनकी नाराजगी झेलनी पड़ी, बल्कि नौकरी से बर्खास्तगी का सामना भी करना पड़ा। मामला यहीं नहीं रुका। उन्हें लगातार फर्जी केस में कोर्ट कचहरी के चक्कर भी काटने पड़े। मानसिक शारीरिक और आर्थिक पीड़ा झेलनी पड़ी, सो अलग। एक ईमानदार अधिकारी को मिली यह प्रताड़ना दरअसल दूसरे अधिकारियों के लिए एक सबक था कि वह सिर झुका कर काम कैसे करे।

श्रीवास्तव की ईमानदारी का इनाम भारत सरकार ने किस तरह से उसे प्रताड़ना की हद तक सताते हुए दिया, यह मामला आम आदमी की जानकारी में तभी आया, जब 2008 में चिदंबरम को गृह मंत्रालय मिला और प्रणब मुखर्जी देश के वित्त मंत्री बने। वित्त मंत्री प्रणब मुखर्जी ने श्रीवास्तव के खिलाफ जारी गैरकानूनी मामले से उन्हें राहत दी। उसी दौरान आयकर आयुक्त एसके श्रीवास्तव, आर्थिक विशेषज्ञ गुरुमूर्ति, वरिष्ठ वकील राम जेठमलानी और सामाजिक कार्यकर्ता मधु किश्वर के नजदीक आए। इन तीनों की मदद यदि उन्हें नहीं मिली होती, तो मानसिक प्रताड़ना झेल रहे एक ईमानदार अधिकारी की कहानी अपनी कर्तव्य-निष्ठा के लिए ईमानदारी का सहारा लेने वाले हर अधिकारी के अंदर खौफ पैदा कर देता। जब देश भ्रष्टाचार के खिलाफ आंदोलन के दौर में था, 2जी घोटाला में कई दस्तावेज श्रीवास्तव की ओर से पेश किए गए थे। वक्त बदला 2012 में चिदंबरम दुबारा देश के वित्तमंत्री बने जब प्रणब मुखर्जी देश के राष्ट्रपति हो गए। श्रीवास्तव को प्रताड़ित करने का गंदा खेल फिर शुरू हो गया। नौकरी में वापसी की प्रकिया पर विराम लगा दिया गया।

इन तमाम सरकारी मशीनरी के प्रयोग के बाद भी वक्त ने साबित किया कि श्रीवास्तव ने जो तथ्य जमा किए थे वह बिल्कुल सही थे। शेल कंपनियों द्वारा मनीलॉन्ड्रिंग का मामला सही साबित हुआ। साथ ही श्रीवास्तव पर लगाए गए सभी आरोप झूठे और बेबुनियाद पाए गए। लिहाजा, उनकी पुनः बहाली हुई। श्रीवास्तव के मुताबिक आयकर जांच में यह सामने कि अभिसार की पत्नी आयकर अधिकारी सुमना सेन ने सात करोड़ से ज्यादा की गैरकानूनी कमाई की।

सुमना की सहयोगी आयकर अधिकारी अशिमा नेब ने दो करोड़ 93 लाख की अवैध कमाई की। एनडीटीवी को फायदा पहुंचाने के लिए सुमना को पति अभिसार संग विदेश भेजा गया। चैनल को गैरककानूनी तरीके से मदद के एवज में। एसके श्रीवास्तव के मुताबिक हाईकोर्ट में दाखिल एक हलफनामा के मुताबिक सुमना और नेब ने माना कि वह विदेश दौरे पर अभिसार के साथ गए थे। अभिसार को *एनडीटीवी* ने विदेश भेजा था। दूसरी ओर *एनडीटीवी* का कहना था कि उन्होंने किसी को विदेश नहीं भेजा। तय है कि दोनों में से कोई झूठ बोल रहा है। लेकिन, इतना सच है कि वह विदेश गए थे। वह चैनल के आधिकारिक यात्रा पर नहीं गए, चैनल को गैरकानूनी मदद के लिए उन सब को यह फायदा पहुंचाया गया था। हालांकि, स्वयं पर व पत्नी पर लगे आरोपों को अभिसार शर्मा हमेशा नकारते रहे हैं {12} [1]

(REFER Annex 1 NDTV FROUD)

बैंकों और शेयरधारकों संग प्रणय राय की धोखाधड़ी के आरोपों पर सरकार की चुप्पी

बाहर की दुनिया के लिए प्रणय राय ने अपनी साफ-सुथरी छवि के साथ साख भी कमाई है। किसी भी पत्रकार के लिए एनडीटीवी में नौकरी का मतलब था मनमाफिक सैलरी और असीमित सुविधाएं। सरकारी नौकरी जैसी निश्चिंतता। अखबार या टीवी चैनल के किसी संस्था के कर्मयोगी ने कभी वो गुमान नहीं पाला जो दो दशक से ज्यादा वक्त तक *एनडीटीवी* में काम करने वाले पत्रकारों और गैर पत्रकारों ने पाला। इस गुमान संग *एनडीटीवी* के पत्रकार कहा करते थे कि डॉ. राय (प्रणय राय) संग काम करने का मतलब है नीली छतरी वाले से सीधा वास्ता। ईडी, सेबी और सीबीआई के पास सालों से *एनडीटीवी* और प्रणय राय के खिलाफ मनी लॉन्ड्रिंग, फेमा, धोखाधड़ी और फरेब के पुख्ता सबूत होने के बाद भी कानून और सरकार उनका कुछ नहीं बिगाड़ पाई।

आप पीछे पढ़ चुके हैं कि *एनडीटीवी* में ज्यादातर उन्हीं लोगों को नौकरी मिली जिनका सीधा संबंध, राजनेता, मंत्री, नौकरशाह व सेना के उच्चपदों पर बैठे लोगों से था। आगे आप समझ पाएंगे कि सत्ता और नौकरशाही में पैठ के साथ पत्रकारिता के पेशे की शुरुआत ही प्रणय राय ने क्यों की ?

सन 1988 में न्यू दिल्ली टेलीविजन (एनडीटीवी) की बुनियाद रखने वाले प्रणय राय की पहचान देश के नामी सेफोलॉजिस्ट के रूप में हो चुकी थी। विदेश से पढ़कर आए प्रणय राय का जलवा दूरदर्शन पर ऐसा हो गया था कि वह दूरदर्शन के सबसे प्रभावशाली व्यक्ति दिखने लगे थे, जबकि वहां महज एक प्रोग्राम का ठेका उन्हें मिला था "द वर्ल्ड दिस वीक"। यहीं से प्रणय राय का भारतीय रूपक मर्डोक के रूप में सफर शुरू हुआ। आप पीछे पढ़ चुके हैं कि रुपक मर्डोक के *स्टार न्यूज* चैनल ने 20 मिलियन डॉलर प्रतिवर्ष देने के पांच साल का करार प्रणय राय के एनडीटीवी संग 1998 में किया। तब जाकर ही भारत में रूपक मर्डोक के स्टार न्यूज चैनल को प्रसारण की अनुमति मिली। डॉ. राय का जलवा ऐसा कि स्टार न्यूज की लॉन्चिंग भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री आईके गुजराल के सरकारी निवास से हुआ। ये ठसक की बुनियाद थी भारतीय मीडिया मुगल के रूप में प्रणय राय का, जिसका जलवा भविष्य में उनके साथ के शेयर धारकों, निजी बैंकों व ईडी, आयकर विभाग व सीबीआई को उनके हर फरेब धोखाधड़ी को आंख मूंद कर देखना था।

लेकिन वक्त ने करवट लिया जो वर्ष 2013 में प्रणय राय को कानून की घंटी के रूप में सुनाई देने लगी। कानून की उस घंटी की दिशा बदलने के लिए उन्होंने फिर अपनी ऊर्जा लगा दी, किंतु बदलते वक्त में अब उन्हें अदालती हथौड़े की आवाज सुनाई देने लगी है।

मनी लॉन्ड्रिंग, हवाला के कारण *एनडीटीवी* में धन का बहाव निरंतर जारी था। लिहाजा, उन्हें किसी टीआरपी की कोई चिंता नहीं थी, क्योंकि उन्हें प्रदर्शन के लिए किसी टुटपुंजिये प्रायोजक की कोई जरूरत नहीं थी। उनके कर्मचारी अथाह सैलरी के साथ मौज कर रहे थे। इसी दौरान 2013 में एनडीटीवी के दो शेयर धारक संजय दत्त और संजय जैन ने हद दर्जे के चरित्रवान और साख वाले प्रणय राय और *एनडीटीवी* पर बेहद गंभीर आरोप लगाए। प्रवर्तन निदेशालय (ईडी) और इनकम टैक्स विभाग को दी गई शिकायत तब सामने आई, जब केंद्र में एनडीए की सरकार आई। दरअसल, शिकायत करने के बाद ही प्रणय राय ने अपने दोनों शिकायतकर्ता शेयर धारकों को न सिर्फ वसूली के झूठे केस में फंसाने की कोशिश की, बल्कि समझौता करने के लिए *एनडीटीवी* के कार्यालय में बुलाकर स्टिंग ऑपरेशन के जाल में फंसाने की साजिश भी रची। पूरा मामला दिल्ली पुलिस के अलग-अलग

विभागों में गया जहां *एनडीटीवी* का स्टिंग फर्जी और वसूली का उसका आरोप झूठा साबित हुआ। लिहाजा, केस खारिज हो गया। {13}

दत्त और जैन जैसे शेयर धारकों की शिकायत के आधार पर जब जांच आगे बढ़ी तो सामने आया कि दोनों शेयर धारक दरअसल प्रणय राय के सहयोगी पत्रकार विक्रम चंद्रा के मित्र थे, जिसमें संजय दत्त 1980 के दौर से ही देहरादून के स्कूल से ही चंद्रा के साथी थे। बाद में दत्त और जैन बतौर सीए अपनी कंपनी क्वांटम सिक्योरिटी प्राइवेट लिमिटेड के माध्यम से *एनडीटीवी* के शेयर धारक बन गए। कुछ वक्त तो सब कुछ ठीक-ठाक था, लेकिन बदलते वक्त में दोनों शेयर धारकों के हिस्से का गबन कर उन्हें बाहर करने की साजिश *एनडीटीवी* ने रची। इसके लिए अमेरिका में चल रही आर्थिक मंदी के नाम पर चैनल को घाटे में दिखाने की बात की गई। यह मामला मई-जून 2008 का है। एनडीटीवी के इस रवैये से दोनों शेयर धारकों को भारी क्षति हुई।

बैलेंस सीट..आरआरपीआर (एनडीटीवी फ्रॉड किताब से)

Table 1. Source: NDTV public issue prospectus filed with SEBI in 2004.

Date of transfer	No. of Equity Shares (Face value of Rs. 10)	Cost per Shares (Rs.)	Price (Rs.)	Nature of payment	No. of Equity Shares (of Face Value of Rs. 4) post splitting
21-Oct-94	48,140	10	675	Cash	120,350
16-May-95	99,070	10	675	Cash	247,675
21-Jul-95	121,625	10	675	Cash	304,063
22-Aug-95	81,481	10	675	Cash	203,702

After inking favorable deals with Doordarshan,

मई 2016 में एनडीटीवी के शेयर धारकों के ग्राफ बताते हैं कि कंपनी पर राधिका राय एवं प्रणय राय (आरआरपीआर) को काबिज कर दिया गया। इसके लिए अतीत के छोटे शेयर धारकों को अपनी कुर्बानी देनी पड़ी। इस पूरे मामले पर सेबी की चुप्पी बेहद दिलचस्प थी जिसने शेयर धारकों को दिल्ली हाईकोर्ट का दरवाजा खटखटाने को मजबूर कर दिया। आरोप है कि यूपीए सरकार के वित्त मंत्री की तरह एनडीए सरकार के वित्त मंत्री के निर्देश पर जांच एजेंसी एनडीटीवी पर कार्रवाई नहीं कर रही थी। लेकिन, 12 जनवरी, 2017 को क्वांटम सिक्योरिटी प्राइवेट लिमिटेड (QSL) की अर्जी पर दिल्ली हाईकोर्ट के सख्त आदेश के बाद ईडी और आयकर विभाग हरकत में आया। जांच एजेंसी के रवैये से नाराज हाइकोर्ट ने न सिर्फ qsl की पिटिशन पर प्रगति रिपोर्ट दाखिल करने का आदेश जारी किया, बल्कि जस्टिस संजीव सचदेवा ने ईडी और आयकर विभाग को निर्देश दिया है कि पिछले छह साल में *एनडीटीवी* के खिलाफ दाखिल सभा शिकायत पर प्रगति रिपोर्ट दाखिल करे। हाईकोर्ट के इस आदेश के बाद प्रणय राय और *एनडीटीवी* की मुश्किलें बढ़नी तय हैं। जानकारी के लिए बता दें कि उनके खिलाफ बीजेपी नेता सुब्रमण्यम स्वामी, वयोवृद्ध और बहुचर्चित वकील राम जेठमलानी (अब दिवंगत), पूर्व वित्त मंत्री यशवंत सिन्हा, भारत के पूर्व मुख्य न्यायाधीश आरसी लाहोटी और आईआरएस अधिकारी एसके श्रीवास्तव की ओर से भी शिकायत दर्ज की जा चुकी है। महत्वपूर्ण सवाल यह है कि 2010 में देश के इन सम्मानजनक नागरिकों की ओर से प्रणय राय और *एनडीटीवी* के खिलाफ दाखिल गंभीर शिकायत पर ईडी, सेबी और आयकर विभाग ने कार्रवाई क्यों नहीं की? जवाब साफ है ये तमाम विभाग वित्त मंत्रालय के अधीन हैं और चिदंबरम, प्रणब मुखर्जी (अब दिवंगत) व अरुण जेटली (अब दिवंगत) संग प्रणय राय के संबंध जगजाहिर हैं।

2 मई 2016 में एनडीटीवी के शेयरधारक (एनडीवी फ्रॉड किताब से)

Table 2. Fraudulent trades/shares sales & purchase to hoodwink shareholders, tax authorities, SEBI and MIB

Books / Balance Sheet of RRPR Holding Pvt. Ltd.							
Date	Particulars from RRPR Holding Pvt. Ltd Books/Filings	No. of Shares	Cost per Shares (Rs.)	Total cost of acquisition Rs	Cumulative Balance of Shares held	% age of stake in NDTV	Comments/ Explanations/ Notes
3-Mar-08	Purchased in open offer	97,95,434	438/ 98	429,99,99,618	97,95,434	15.54	Financed with India Bulls Loan with a misstatement in the Offer Document that Promoters had the resources in Dec 2007
14-Jul-08	Sold	(38,03,728)	446	1,69,73,38,496	59,91,706	9.55	As agreed in a covert understanding / binding agreement with Goldman Sachs on 7.3.2008 in violation of SEBI Disclosure and Takeover Regulations
8-Aug-08	Sold	(12,49,985)	409	51,07,03,247	47,41,721	7.56	- Same as above - In addition, a covert agreement to appoint a Goldman nominee on the Board of NDTV.
3-Aug-09	Purchased from Mrs. Radhika Roy	57,81,841	4	2,31,27,364	1,05,23,562	16.78	Once again part of an illegal & covert agreement (dated 21.07.2009) to sell 26% stake in NDTV to VCPL. These were done to facilitate VCPL to get 26% in RRPR Holdings and transfer of ownership of RRPR to VCPL.
3-Aug-09	Purchased from Dr. Prannoy Roy	57,81,842	4	2,31,27,388	1,63,05,404	26	- Same as above - VCPL paid Rs. 350 crores for a 26% stake in NDTV at a valuation of 1346 crores vs. market price of 795 crores.
8-Mar-10	Shares sold to Mrs. Radhika Roy	(34,78,925)	4	1,39,15,700	1,28,26,479	20.45	All the March 8[th], 2010 trades were done to pass illegal gains (as established by Income Tax Dept) to Radhika Roy and Prannoy Roy
8-Mar-10	Shares sold to Dr. Prannoy Roy	(34,78,925)	4	1,39,15,700	93,47,554	14.5	- same as above -
8 Mar 2010	Purchased from joint A/c	48,36,850	140	67,71,59,000	1,41,84,404	22	These same day trades of buying and selling with a price differential of over 98% from market price. All done only to generate illegal (hawala) gains for Radhika Roy and Prannoy Roy. This enabled them to siphon VCPL money into personal accounts.
8-Mar-10	Purchased from Mrs. Radhika Roy	23,14,762	140	32,40,66,680	1,64,99,166	28.6	
8-Mar-10	Purchased from Dr. Prannoy Roy	23,14,762	140	32,40,66,680	1,88,13,928	29.19	

सत्ता संग प्रणय राय के संबंध के प्रभाव, उनका मनी लॉन्ड्रिंग, हवाला और शेयर धारकों संग धोखाधड़ी का खेल तब तक सामने नहीं आता, जब तक एनडीटीवी के शेयर धारक जैन और दत्त की कंपनी QSL की शिकायत पर कुंडली मारे जांच एजेंसी के खिलाफ हाईकोर्ट की सख्ती नहीं होती। व्यवस्था संग प्रणय राय की ताकत देखिए...शेयर धारकों के पैसे का गबन कर पूरी कंपनी पर खुद पत्नी संग काबिज हो गए। शेयर धारकों के पंख कतर कर एनडीटीवी प्राइवेट

लिमिटेड कंपनी के आधे से ज्यादा शेयर पर पति-पत्नी काबिज हो गए। कंपनी राधिका राय प्रणय राय (आरआरपीआर) प्राइवेट लिमिटेड के हवाले हो गई। यह सब कुछ महज एक पेज के लेटर पैड पर तैयार कर लिया। प्रणय राय की साजिश के खिलाफ तमाम शेयरधारकों ने सेबी, ईडी, आयकर विभाग समेत दिल्ली पुलिस की आर्थिक अपराध शाखा में अनगिनत शिकायतें कीं।

इन शिकायतों की जांच के बाद ही यह सामने आया कि किस तरह प्रणय राय ने सत्ता और नौकरशाही में अपने प्रभाव के कारण तमाम नियमों की धज्जियां उड़ाते हुए छोटे शेयरधारकों की हिस्सेदारी का गबन कर कंपनी पर अपना पूरा अधिकार जमा लिया। जांच एजेंसी में दाखिल शिकायत के मुताबिक प्रणय राय ने विदेशी पूंजी हासिल करने के लिए मॉरिशस रूट का सहारा लिया। 2007 में इसके लिए आरआरपीआर ने बेनामी शेयरधारक तैयार किए। दो विदेशी निवेशकों के मार्फ़त गैर कानूनी तरीके से कंपनी में निवेश हुआ। यह स्टॉक एक्सचेंज कानून का खुल्लम खुल्ला उल्लंघन था। कायदे से उम्मीद की जा रही थी कि सेबी दूसरे शेयरधारकों के हितों की रक्षा करेगी, लेकिन वित्त मंत्रालय की इस पर भी चुप्पी रही। बदले दौर में सेबी की सक्रियता बढ़ी। लाइव ल़ॉ की 25 दिसंबर, 2020 की रिपोर्ट के मुताबिक शेयर धारकों से संवेदनशील जानकारी छुपाने के आरोप में सेबी ने राधिका राय व प्रणय राय, उनकी कंपनी RRPR पर 27 करोड़ का जुर्माना लगाया।

मामला इतने भर का नहीं था। अक्टूबर 2008 में एक बड़ी साजिश के तहत आरआरपीआर कंपनी के नाम आईसीआईसीआई बैंक से 375 करोड़ का लोन हासिल कर लिया गया। पति-पत्नी के नाम से बनी शेल कंपनी आरआरपीआर के एकाउंट में एनडीटीवी प्राइवेट लिमिटेड के नाम से लोन हासिल कर लिया गया। कहीं से भी यह आवाज नहीं उठी कि उस दौर में केवी कामथ के अधीनस्थ आईसीआईसीआई बैंक ने पति-पत्नी की एक कंपनी को बिनी किसी कागजात के इतनी बड़ी लोन की रकम कैसे दे दी और एक ऐसी कंपनी को, जिसका कोई उत्पादकीय पैसे के लेनदेन का व्यापार नहीं। तमाम नियम-कानूनों को ताक पर रखते हुए, राय दंपति को उपलब्ध कराए गए ये विशेष अनुदान पूर्ण रूप से आरबीआई के नियम कानून का उल्लंघन था। लेकिन, यह सब हुआ और जब बात सामने आई तो अगस्त 2009 में आईसीआईसीआई के साथ आरआरपीआर

ने एक समझौता कर लिया जिससे बैंक को 50 करोड़ का घाटा हुआ। यह अपने आप में एक अनोखा मामला है, जो सवाल पैदा करता है कि एक बैंक को इतना बड़ा घाटा हुआ, लेकिन उसकी जांच आरबीआई ने सीबीआई से नहीं कराई ! जबकि नए कानून के मुताबिक निजी बैंक भी भ्रष्टाचार निरोधक कानून के दायरे में आते हैं। अपनी किताब एनडीटीवी फ्रॉड में श्री अय्यर लिखते हैं कि जुलाई 2009 में आईसीआईसीआई बैंक का मुकेश अंबानी के रिलायंस ग्रुप संग एक सौदा हुआ जिसके बाद कंपनी की अप्रत्यक्ष हिस्सेदारी एनडीटीवी में हो गई। यह सब कंपनी एक्ट कानून का उल्लंघन है, जिसे सूचना प्रसारण मंत्रालय और सेबी ने नजरअंदाज किया। दिसंबर 2012 में यह सामने आया कि एनडीटीवी में दिल्ली के व्यवसायी महेंद्र नहाता की हिस्सेदारी है। नहाता को पूरी दुनिया मुकेश अंबानी के सहयोगी के रूप में जानता है। वे अक्सर मुकेश अंबानी संग देखे जाते हैं।

देश इस बात से अनजान था कि सरकार की साठ-गांठ से बैंकों को किस तरह से कंगाल किया जा रहा था। बिना दस्तावेज के सत्ता से साठ-गांठ रखने वालों को, उसकी शेल कंपनियों के माध्यम से निजी तौर पर कभी न चुकाने वाली रकम लोन के रूप में दिया जा रहा था। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने 6 फरवरी, 2018 को लोक सभा में राष्ट्रपति के अभिभाषण पर धन्यवाद ज्ञापन के दौरान जो खुलासा किया उससे पूरा देश हैरान रह गया। प्रधानमंत्री के उस भाषण से देश की लगभग 95 प्रतिशत लोगों को पता चला कि NPA (Non performing asset) क्या है? प्रधानमंत्री ने देश को बताया कि 10 साल तक यूपीए सरकार ने बिना किसी दस्तावेज के बैंकों से ऐसे लोगों को लोन दिलाया जिसकी ब्याज तक की वापसी बैंक को नहीं हुई। मूलधन तो लौटा ही नहीं। प्रधानमंत्री तो नोटबंदी को लेकर विपक्ष के लगातार हमले के जवाब में खुलासा कर रहे थे कि बैंक के हालात क्यों बदतर थे? क्योंकि पिछली सरकार ने आपसी हित साधने के लालच में बैंकों को कंगाल कर दिया। लोग बैंक से लोन लेकर गायब हो गए सत्ता की मदद से। प्रधानमंत्री के द्वारा पेश आंकड़ों के मुताबिक जब यूपीए सरकार 2004 में सत्ता में आई थी तो लगभग 15 लाख करोड़ रुपये NPA बैंक को कर्जदारों से लेने थे, लेकिन यूपीए 2 कार्यकाल में यह रकम 52 लाख करोड़ पार कर गई। प्रधानमंत्री का संकेत साफ था कि यह खबर मीडिया की पहुंच से बाहर थी। बैंकों को इस बदहाली से बचाने के लिए जरूरी था कि बैंकों के पास पैसा वापस आए।

एनडीटीवी के खिलाफ आयकर और सेबी की जांच से यह भी साफ हो गया कि प्रधानमंत्री जिस NPA की बात कर रहे हैं उसमें भारतीय मीडिया मुगलों की क्या भूमिका थी। कैसे आरआरपीआर जैसी शेल कंपनी को बिना जांच-पड़ताल के 375 करोड़ के लोन मिल गए, जिसे आप ऊपर पढ़ चुके हैं।

जून 2006 से अक्टूबर 2008 के बीच यह देखा गया कि मीडिया के अंदर विदेशों से शेल कंपनियों के द्वारा पैसा आया। जांच में सामने आया कि इस दौरान मॉरिशस, नीदरलैंड, यूके व दुबई समेत तीस से ज्यादा देशों 150 मिलियन डॉलर से ज्यादा पैसा आए। यह पूर्ण रूप से आयकर विभाग व प्रवर्तन निदेशालय के नियमों का उल्लंघन था। मोदी सरकार की सख्ती के बाद फर्जी विदेशी कंपनियों द्वारा पैसे के लेनदेन का मामला सामने आने पर ज्यादातर फर्जी कंपनियां अब बंद हो गई हैं। *एनडीटीवी* के ख्याति प्राप्त चेहरे बरखा दत्त, विक्रम चंद्रा व सुपर्णा सिंह जैसे लोग इन्हीं विदेशी कंपनियों में शेयरधारक व निदेशक थे। आरोप है ये तमाम कंपनियां बस कागज पर थीं जो किसी होटल व दुकान से चलाई जा रही थीं।

आरोप है फर्जी विदेशी कंपनियों की आर में मनी लॉन्ड्रिंग व हवाला के कारोबार से एनडीटीवी ने पांच सौ करोड़ से ज्यादा के टैक्स की चोरी की। लेकिन, सेबी व सूचना-प्रसारण मंत्रालय ने प्रणय राय और राधिका राय मीडिया कंपनी की आड़ में की गई इस चोरी के धंधे पर आंख मूंद कर चुप्पी साध ली।{14}

जब संजय दत्त और संजय जैन की शिकायत पर दिल्ली पुलिस और आयकर विभाग ने दिसंबर 2013 में जांच शुरू की तो पाया कि 2008 से 2009 के बीच *एनडीटीवी* ने अपनी एक फर्जी विदेशी कंपनी के सहारे 584.46 करोड़ रुपये हासिल किए। इसके बदले *एनडीटीवी* ने एनबीसीयू नामक कंपनी को अपना दो शेयर दिया। कुछ ही दिन बाद उस कंपनी ने भारी घाटे में अपना शेयर महज 58 करोड़ में एक दूसरी कंपनी को बेच दिया। कमाल है कि एक अंतरराष्ट्रीय कंपनी को इतना बड़ा घाटा हुआ, लेकिन उसने कहीं कोई मामला दर्ज नहीं करवाया! आयकर विभाग के मुताबिक खेल इससे भी बड़ा था। सच यह था कि 58.46 करोड़ में जिसे शेयर बेचा गया था वह भी *एनडीटीवी* की एक फर्जी कंपनी थी। लिहाजा, इस खेल से प्रणय राय की कंपनी को 642.54 करोड़ की आय हुई। [15]

मनी लॉन्ड्रिंग, हवाला और बैंकों से गैरकानूनी तरीके से लोन हासिल करने का *एनडीटीवी* का गोरखधंधा लगातार जारी था। आपने पीछे पढ़ा कि 2008-

2009 वित्तीय वर्ष में प्रणय राय ने आईसीआईसीआई बैंक के साथ कैसे 375 करोड़ का लोन चुटकी में हासिल कर लिया। यह सिलसिला 2009-2010 में भी जारी रहा। इस बार बारी इंडिया बुल की थी। *एनडीटीवी* ने इस बार पांच सौ करोड़ का लोन हासिल कर लिया। यह सब तब, जबकि आईसीआईसीआई बैंक के साथ धोखाधड़ी से लोन हासिल करने का मामला सामने आ चुका था जिसमें साफ हो चुका था कि प्रणय राय को फायदा पहुंचाने के लिए आरबीआई के तमाम नियम कानून की धज्जियां उड़ा दी गई थीं। ये वह दौर था जब केंद्र की यूपीए सरकार भ्रष्टाचार में तल्लीन थी। सूचना प्रसारण मंत्री के रूप में अंबिका सोनी और मनीष तिवारी का एनडीटीवी के दफ्तर में आना जाना सामान्य गतिविधि थी। चार साल बाद जुलाई 2014 में कई पीड़ित शेयर धारकों ने हाईकोर्ट का दरवाजा खटखटाया। ईडी, सेबी व आयकर विभाग ने इस बाबत कई मामले दर्ज किए हैं। कानून के लंबे हाथ अब *एनडीटीवी* और उसके प्रमोटर पर। पूरा मामला अब दिल्ली हाईकोर्ट में है। सवाल अहम है कि जब एक मीडिया चैनल की आड़ में लूट का इतना बड़ा धंधा चल रहा था तो तमाम सरकारों ने अब तक आंख क्यों मूंद रखी थी। यह सब भारत सरकार में प्रणय राय की पैठ के कारणभर से नहीं था, बल्कि नौकरशाही संग, ईडी, सेबी और आयकर विभाग के आला अधिकारियों के घर से नक्कारे साहबजादों को पत्रकार और न्यूज प्रेजेंटर बना देने के शातिर प्रयोग का परिणाम था।

प्रवर्तन निदेशालय की गिरफ्त में एनडीटीवी

2014 में केंद्र में मोदी सरकार के आने के बाद अधिकारियों नें हाईकोर्ट के आदेश पर अमल शुरू कर दिया। प्रणय राय के मामले में कार्रवाई शुरू हो गई। 2015 की शुरुआत में ही ईडी ने एनडीटीवी 2030 करोड़ रुपये के विदेशी मुद्रा विनिमय कानून के उल्लंघन के मामले में दोषी पाया। लेकिन, फेमा कानून के तहत प्रणय राय को नोटिस भेजे जाने से पहले ही राजनीति और ब्यूरोक्रेसी में बैठे उनके शुभ चिंतक उनके लिए फिर ढाल बन गए। राजन कोच उस समय ईडी के मुखिया थे। यूपीए सरकार में आशीर्वाद पाए राजन कोच के तारणहार मोदी सरकार में भी थे। कांग्रेस नेता के वरिष्ठ नेता दिग्विजय सिंह के रिश्ते में भाई, राजन कोच का एनडीए कार्यकाल में भी लगातार कार्यकाल बढ़ रहा था। ऐसा क्यों हो रहा था यह समझने

के लिए काफी है कि राजनीति में नेताओं के बीच दलगत दुराव आम जनता में दिखने के बावजूद उनके आपसी भाईचारा के हित कैसे सधते हैं ! सरकार बदलते ही चिदंबरम के बाद वित्त मंत्रालय सीधे अरुण जेटली के पास थे लेकिन प्रणय राय पर शिकंजा आसान नहीं था। प्रणय राय के कर्मों से पर्दा जितना हटता गया, चिदंबरम के सफेद कपड़े पर दाग उतने ही दिखने लगे। एनडीए सरकार के मंत्री के लिए भी शायद इसकी चिंता ज्यादा थी।

वक्त बदला, सोशल मीडिया में सवाल दागे जाने लगे कि सबूत होने के बावजूद ईडी कार्रवाई क्यों नहीं कर रही? यह सब इसलिए, क्योंकि दिल्ली हाइकोर्ट की सख्ती के बाद भी ईडी कार्रवाई नहीं कर रही थी। इसी बीच प्रधानमंत्री कार्यालय की सख्ती के बाद चिदंबरम के बहादुर सिपाहियों को बाहर कर ईमानदार और सख्त अधिकारी हंसमुख अधिया को रेवेन्यू सेक्रेटरी और दिल्ली पुलिस के साख वाले अधिकारी करनैल सिंह को ईडी का मुखिया बनाया गया। इसके बाद हफ्ते भर के अंदर नवंबर 2015 को ईडी ने 2030 करोड़ रुपये की हेराफेरी में एनडीटीवी को नोटिस भेज कर जवाब मांगा। [16]

जांच में कई चीजें साफ दिखने लगीं कि 2जी मामले से जुड़े एअरसेल मैक्सेस मामले में *एनडीटीवी* की भूमिका संदिग्ध है जिसमें तत्कालीन वित्त मंत्री पी. चिदंबरम के बेटे कार्ति चिदंबरम और उनकी कंपनी की भूमिका थी। इतनी बड़ी साजिश के कारण ही आरबीआई ने अपने बैंकों संग ठगी पर भी चुप्पी लाद रखी थी। यह वही दौर था जब बरखा दत्त आरबीआई के गवर्नर रघुराम राजन का विशेष साक्षात्कार कर रही थीं। अब ईडी की जांच में सामने आए हैं कि किस तरह एनडीटीवी का शेल कंपनियों के माध्यम से विदेशों से पैसे का विनिमय होता था। इसमें एनडीटीवी म़ॉरिशस मीडिया, एनडीटीवी वर्ल्ड वाइड नेटवर्क, एनएमपीएनसी समेत दर्जनों कंपनियों के नाम से विदेशी मुद्रा के लेनदेन के धंधा को अंजाम मीडिया के साख वाले पेशे के बैनर तले दिया जा रहा था।

एनडीटीवी के खिलाफ अदालत में चल रहे मामले फेमा के तहत हैं जिसमें उन पर भारी जुर्माना लगाया जा सकता है। पूरे मामले में अहम शिकायतकर्ता और बीजेपी के वरिष्ठ नेता सुब्रमण्यम स्वामी ने अगस्त 2016 में प्रधानमंत्री को पत्र लिखकर मांग की थी कि इस मामले की जांच सीबीआई से भी कराया जाए। साथ ही उनकी मांग फेमा के मामले को प्रिवेंसन ऑफ मनी लॉन्ड्रिंग एक्ट (पीएमएलए)

में बदल दिया जाए। यदि ऐसा होता है तो इस मामले में कंपनी के प्रमोटर को तीन साल तक की सजा हो सकती है। यह ईडी का विशेषाधिकार है कि वह किसी भी समय फेमा के केस को पीएमएलए में बदल सकती है। सुब्रमण्यम स्वामी दलील देते हैं कि एनडीटीवी ने ज्यादातर विदेशी मुद्रा की उगाही लंदन की शेल कंपनियों के माध्यम से की है, लिहाजा उन पर पीएमएलए के मामला दर्ज कर व सीबीआई जांच के द्वारा शिकंजे में कसा जाना चाहिए। इस मामले को गंभीर मानते हुए स्वामी ने प्रधानमंत्री मोदी को चिट्ठी लिख कर कार्रवाई की मांग की है। इसके जवाब में 13 फरवरी, 2018 को प्रणय राय ने प्रधानमंत्री को चिट्ठी लिखकर कर शिकायत करते हुए कहा, 'स्वामी हमारे खिलाफ झूठा माहौल बना रहे हैं। उनका उद्देश्य एनडीटीवी को चुप कराने का है।

सपोर्ट.. स्वामी ने लिखी पीएम को चिट्ठी [17]

एनडीटीवी पर आयकर विभाग द्वारा 642 करोड़ रुपये का जुर्माना

2017 की शुरुआत में ही पी. चिदंबरम के बेटे कार्ति चिदंबरम की मुश्किलें बढ़ीं एअर सेल मेक्सिस मामले में कार्ति भी जेल गए। कार्ति के जेल जाते ही चिदंबरम भी अदालतों में जमानत के लिए भागते नजर आए। दोनों पिता-पुत्रों के खिलाफ 19 जुलाई, 2018 को सीबीआई ने पूरक आरोप पत्र दाखिल कर दिया।[18] तय सी बात है कि खुद मुश्किलों में फंसे चिदंबरम अब *एनडीटीवी* के बचाव के हालत में नहीं रह गए। यह साफ होने लगा कि खुद प्रणय राय भ्रष्टाचार के शिकंजे में हैं। धीरे-धीरे प्रणय राय के सभी आपराधिक रिकार्ड सामने आने लगे। जांच में पाया गया कि विदेशों में शेल कंपनी बना कर विदेशी मुद्रा हासिल करने के लिए टैक्स चोरी की साजिश रची गई। इसके लिए विभाग ने कंपनी के शेयरधारक विक्रमचंद्रा व केवीएल नरसिंहा राव को भी नोटिस भेजा। आयकर विभाग के मुताबिक एनडीटीवी ने यूपीए सरकार के कार्यकाल में 642 करोड़ रुपये अमेरिका से बरमुडा से नीदरलैंरड से भारत के रास्ते हासिल किया। प्रणय राय की टीम ने ईडी को इस मामले में पूछे गए सवाल का कोई संतोषजनक जवाब नहीं दिया।

विभागीय जांच के बाद सामने आया कि यूपीए-1 सरकार के समय अमेरिकी कंपनी जनरल इलेक्ट्रिक (जीई) भारतीय रेलवे से सोलह सौ करोड़ रुपये की डील की

ताक में थी। लालू यादव उस समय रेलमंत्री थे और वह अपने संसदीय क्षेत्र मधेपुरा में रेल इलेक्ट्रिक इंजन की फैक्ट्री लगाना चाहते थे। जबकि, सच यह थी कि जीई डीजल फैक्ट्री लगाती थी। जीई ने भारतीय रेल को फर्जी दस्तावेज दिए थे। जीई का एनडीटीवी में शेयर था। समझा जा सकता है कि एनडीटीवी को अपने हजारों छोटे शेयरधारकों की चिंता क्यों नहीं थी। दरअसल, जीई को सोलह हजार करोड़ रुपये का ठेका योजना आयोग के सदस्य मोंटेक सिह अहलुवालिया ने दिलवाया था। अहलुवालिया की पुत्र-वधु उसी *एनडीटीवी* में काम करती थीं। अहलुवालिया के अलावा इसमें कई केंद्रीय मंत्रियों की भी भूमिका थी। बिना वित्त मंत्री के सहयोग से इतनी बड़ी डील कतई संभव नहीं थी, लेकिन यह अंजाम तक नहीं पहुंचा, क्योंकि उस दौरान 2जी घोटाला सामने आने के बाद देश में भ्रष्टाचार के आंदोलन की सुगबुगाहट शुरू को गई थी।

लेकिन, जांच में सामने यह आया कि *एनडीटीवी* ने जीई से 525 करोड़ रुपये हासिल की थी। यह रकम एनडीटीवी ने सर्कुलेशन रूट से हासिल किया था। अमेरिका से बरमुडा वहां से भारत होते हुए एनडीटीवी के अकाउंट में। एनडीटीवी ने कभी नहीं सोचा था कि आठ साल पुराने मामले की आंच सुलगेगी, जो उसे जला देगी। आयकर विभाग के मुताबिक एनडीटीवी पर 525 करोड़ रुपये की आयकर चोरी का मामला बनता है। [19] जिसके लिए आयकर विभाग ने *एनडीटीवी* को दोषी पाया है।

प्रणय राय के सामने एनडीटीवी नामक उनका साम्राज्य बिखरने लगा

आपने पीछे पढ़ा कि पिछले कुछ वर्षों में *एनडीटीवी* में काम कर रहे पत्रकारों व गैर पत्रकारों की छंटनी का दौर लगातार जारी है। बिना टीआरपी के अपने कर्मचारियों को मोटी सैलरी देकर सरकारी नौकरी वाला सुकून देने का दंभ भरने वाले एनडीटीवी के अंदर ऐसा क्या हो गया कि छंटनी के लिए कतार लगाए जाने लगे। पीछे पढ़े तथ्यों संग संदर्भ यह बताने के लिए काफी है कि सरकार, सत्ता और ब्यूरोक्रेट में गहरी पैठ से तैयार अपने विशाल साम्राज्य को बदलते वक्त में प्रणय राय खुद लुटने लगे। आप पीछे यह भी पढ़ चुके हैं कि 1998 में सीबीआई ने दूरदर्शन के साथ धोखाधड़ी के मामले में *एनडीटीवी* के खिलाफ जो मामला दर्ज किया था,

यूपीए 2 के आखिरी कार्यकाल खत्म होने से पहले ही बंद कर दिया गया। जानकार मानते हैं कि चिदंबरम संग प्रणय राय के संबधों के कारण ही यह संभव हो पाया।

आरोप है कागज के एक टुकड़े पर पति-पत्नी के नाम से 2008 में आरआरपीआर (राधिका राय-प्रणय राय) कंपनी बनाकर एनडीटीवी के नाम लूट का धंधा शुरू किया था। दिसंबर 2015 में आयकर विभाग ने अपनी जांच में पाया कि *एनडीटीवी* के नाम पर 2008 में ही फर्जी तरीके से आईसीआईसीआई बैंक से आरआरपीआर के लिए 375 करोड़ रुपये का लोन बिना किसी सबूत के हासिल करने वाले राय दंपति ने 48 घंटे के अंदर लोन की इस रकम से 92 करोड़ रुपये निजी एकाउंट में जमा कर लिए। आईटी विभाग के मुताबिक इसमें से 21 करोड़ प्रणय राय के अकाउंट में और 71 करोड़ उनकी पत्नी राधिका राय के निजी एकाउंट में जमा कर दिए गए। पति-पत्नी की एक निजी कंपनी, आरआरपीआर के बिनी किसी व्यावसायिक रिकार्ड के आईसीआईसीआई बैंक द्वारा 375 करोड़ का लोन रातों-रात दिए जाने पर आरबीआई और वित्त मंत्रालय की चुप्पी प्रणय राय को यह ताकत दे रहा था कि 19 प्रतिशत के ब्याज से हासिल मोटे लोन को वह बिना ब्याज के अपने निजी खाते में जमा करने लगे।

यह भ्रष्टाचार का ऐसा मामला है जो सवाल खड़ा करता है कि आरबीआई के द्वारा संचालित कोई बैंक कैसे 375 करोड़ रुपये का लोन किसी ऐसी कंपनी को दे सकती है, जिसके पास आय का कोई जरिया नहीं है! क्या सीबीआई को इसमें आईसीआईसीआई बैंक और उस से लाभ कमाए राय दंपति की भूमिका की जांच नहीं की जानी चाहिए! एक पेपर पर तैयार बिना किसी आय के जरिया वाली कंपनी आरआरपीआर को एक बैंक मोटा लोन दिए जा रहा था जिसे कंपनी के निदेशक अपने एकाउंट में जमा किए जा रहे थे। यह मामला पहली बार तब सामने आया था जब वरिष्ठ पत्रकार एमजे अकबर ने 4 दिसंबर, 2011 को *संडे गार्जियन* में विस्तार से खबर छापी थी। अकबर को ये सबूत तब हाथ लगे जब चिदंबरम वित्त मंत्रालय से गृहमंत्रालय की जिम्मेदारी निभाने चले गए। तब वित्त मंत्रालय प्रणब मुखर्जी के पास था। प्रणब मुखर्जी और चिदंबरम के बीच उस दौर के तनावपूर्ण संबंध पत्रकार अकबर के लिए फायदेमंद रहा। कई उद्योगपति व शेयरधारक, जो बदलते दौर में *एनडीटीवी* से ठगी का शिकार होने पर निराश थे, खबर के स्तंभ बन गए। अक्सर रिपोर्टर व संपादक को उसके सोर्स अपने फायदे

के लिए इस्तेमाल करते हैं! पत्रकार के अंदर हंगामेदार खबर को लेकर हद तक दीवानगी, सोर्स के हित को जहां साधता है, पत्रकार को संतुष्टि दे जाता है।

आयकर विभाग की जांच के बाद यह भी सामने आया कि अक्टूबर 2008 में *एनडीटीवी* से 92 करोड़ की चोरी के बाद भी राय दंपति चैन से नहीं बैठा। ईडी और दिल्ली पुलिस के हवाले से आयकर विभाग को जो दस्तावेज मिले उसके मुताबिक मार्च 2010 में प्रणय राय ने आरआरपीआर के अकाउंट से सिंडिकेट बैंक की हौजखास शाखा, दिल्ली के चेक नंबर 84219 से अपने निजी खाता नंबर1006971 में 54 करोड़ रुपये ट्रांसफर कर लिए। बैंकिंग नियम कानून को इस तरह से लगातार धज्जियां उड़ाई जा रही थीं, लेकिन सरकार आंख मूंदे बैठी थी।[20] दुनिया के किसी भी देश में ऐसा होता तो प्रमोटर कब का हवालात की हवा खा रहा होता, लेकिन शायद भारत में न्याय की चक्की की रफ्तार का अंदाजा अपराध के हर खिलाड़ी को है!

कहते हैं कि समय की मार भारी होती है। नवंबर 2016 के हाईकोर्ट के आदेश के बाद सेबी और आयकर विभाग हरकत में आया। जांच एजेंसियों ने ठंडे बस्ते में पड़े क्वांटम सिक्योरिटी प्राइवेट लिमिटेड समेत *एनडीटीवी* के छोटे शेयर धारकों की शिकायत पर संज्ञान लेना शुरू कर दिया। 12 जनवरी, 2017 को जस्टिस संजीव सचदेवा की कोर्ट के निर्देश के बाद ईडी, सेबी और आयकर विभाग को सिर्फ शेयर धारकों के शिकायत पर कार्रवाई नहीं करनी है। दिल्ली हाईकोर्ट के आदेश के मुताबिक इन जांच एजेंसियों को भाजपा नेता सुब्रमण्यम स्वामी, सुप्रीम कोर्ट के पूर्व न्यायाधीश आरसी लाहोटी वरिष्ठ वकील राम जेठमलानी और पूर्व वित्त मंत्री यशवंत सिन्हा समेत आयकर अधिकारी एसके श्रीवास्तव की शिकायत की भी जांच करनी है।

एसके श्रीवास्तव वही आयकर अधिकारी हैं जिनका आरोप है कि एनडीटीवी के दबाव में चिदंबरम ने निलंबित करवा दिया था। श्रीवास्तव की गलती यह थी कि इन्होंने अपने अधीनस्थ आयकर अधिकारी और एनडीटीवी में काम कर रहे पत्रकार अभिसार शर्मा की पत्नी सुमना सेन की करतूतों का खुलासा किया था। अभिसार की पत्नी की कहानी आप पीछे पढ़ चुके हैं। एक समय पागल करार दिए जा चुके आयकर अधिकार श्रीवास्तव बाद में नोएडा में कमिश्नर बने। 6 जनवरी, 2018 को 'भड़ास फॉर मीडिया' से बात करते हुए उन्होंने कहा कि एनडीटीवी को

लूट की छूट सिर्फ इसलिए थी, क्योंकि उसमें तत्कालीन वित्त मंत्री पी. चिदंबरम और उनके बेटे कार्ति चिदंबरम का पैसा लगा है। श्रीवास्तव के मुताबिक उनके पास पूरे सबूत थे कि एनडीटीवी को कैसे गैरकानूनी तरीके से मदद की जा रही है। जिस अधिकारी पर एनडीटीवी के खिलाफ जांच की जिम्मेदारी थी वही बिक गई एनडीटीवी के हाथों। भड़ास वेबसाइट के संपादक यशवंत को दिए साक्षात्कार में श्रीवास्तव ने कहा कि वह अपने वकील संग कुछ बात कर रहे थे कि एनडीटीवी ने उसका स्टिंग कर लिया और उसे भारत सरकार के खिलाफ साजिश बता दिया। श्रीवास्तव कहते हैं- "चूंकि पूरे मामले में पी. चिदंबरम की भूमिका थी, इस लिहाज से जिस वित्त मंत्री के मातहत मेरे जैसे दो हजार अधिकारी काम करते हैं, उसने मुझसे निजी दुश्मनी पाल ली। उस दौर में हर फाइल तत्कालीन वित्त मंत्री पी. चिदंबरम तक गई। हर घोटाले में उनकी भागीदारी थी।"

अदालत की सख्ती और न्याय के पहिये की रफ्तार प्रणय राय पर शिकंजा कसता रहा। इसी वजह से आयकर विभाग ने *एनडीटीवी* पर 525 करोड़ रुपये का पेनाल्टी लगाया था। ईडी पहले ही 2030 करोड़ रुपये का नोटिस भेज चुकी है। साल 2018 तो एनडीटीवी के लिए परेशानी लेकर ही आया। साल की शुरुआत में ही आयकर विभाग ने आय से जुड़ी जानकारी छुपाने के दोष में एनडीटीवी पर 436.80 करोड़ रुपये का जुर्माना लगा दिया। आयकर विभाग ने आयकर कानून की धारा 271(1)(सी) के तहत वर्ष 2009-2010 के लिए यह आर्थिक जुर्माना लगाया। एनडीटीवी की परेशानी खत्म होने का होने का नाम नहीं ले रही। आयकर अपीलिएयट ट्रिब्यूनल (आईटीएटी) के आदेश के मुताबिक एनडीटीवी ग्रुप ने शेल कंपनियों के जरिये 642.54 करोड़ रुपये का घालमेल किया है। ट्रिब्यूनल के मुताबिक कंपनी और उसके प्रमोटर्स ने 2007-2008 और 2009-2010 के बीच 1,100 करोड़ रुपये के काले धन को सफेद किया।

22 जुलाई, 2017 की मीडिया रिपोर्ट के मुताबिक आईटीएटी, यानी आयकर अदालत ने अपने फैसले में कहा है "प्रणय राय 642.54 करोड़ रुपये की टैक्स चोरी और मनी लॉन्ड्रिंग के लिए व्यक्तिगत रूप से जिम्मेदार हैं। मुंबई के आयकर अदालत ने अपने आदेश में कहा कि 2009 में कॉरपोरेट अफेयर मंत्रालय और एनडीटीवी के प्रमोटर प्रणय राय ने विदेशी सब्सिडी कंपनियों के अंकेक्षित लाभ हानि खाते, बैलेंस शीट और वार्षिक रिपोर्ट को एनडीटीवी की वार्षिक रिपोर्ट

के साथ नत्थी न कर इन विदेशी कंपनियों के वित्तीय लेनदेन को जानबूझ कर छुपाने का काम किया है। आयकर अदालत ने अपने फैसले में कहा कि एनडीटीवी और उसके प्रमोटर्स ने 2007-08 से लेकर 2009-10 तक 1100 करोड़ रुपये के काले धन को वैध बनाया। इससे 642.54 करोड़ रुपये के काले धन को वैध बनाया गया। [21] आयकर अदालत के फैसले और टिप्पणी, ईमानदारी और नैतिकता के पैरोकार, भारतीय पत्रकारिता को नया आयाम देने वाले एशिया के रूपक मर्डोक के रूप में जाने जानेवाले प्रणय राय की असलियत को बयां करता है।

अच्छे दिनों में उनके साथ काम करने वाले विक्रम चंद्रा व बरखा दत्त जैसे नामचीन पत्रकार बदलते दौर में उनके व्यापारिक साथी भी बन गए, 2जी के हिस्सेदार भी, लेकिन राय के कानूनी शिकंजे में फसने के साथ ही वे सब उनका साथ छोड़ गए। मामले को नजदीक से देखने वाले आयकर अधिकारी एसके श्रीवास्तव कहते हैं कि प्रणय राय जैसे लोगों को पत्रकार कहना ही गलत है। जब वे विजय मालिया संग बीयर का धंधा करते हैं तो उनकी निष्ठा या तो बीयर संग होगी या पत्रकारिता संग! *एनडीटीवी* के मामले को नजदीक से देखने वाले आयकर आयुक्त श्रीवास्तव के मुताबिक पत्रकारिता मुनाफे का धंधा नहीं है, लेकिन प्रणय राय के पास गोआ में समंदर के किनारे कई एकड़ में कोठी है। दिल्ली व देहरादून से लेकर दक्षिण अफ्रीका तक अरबों की उनकी जायदाद है। वे सवाल करते हैं कि पत्रकारिता यदि उत्पादन और आर्थिक मुनाफे का व्यवसाय नहीं है तो प्रणय राय जैसे पत्रकारों ने अरबों की संपत्ति कैसे अर्जित कर ली ! [22] फिलहाल शिकंजे में तो प्रणय राय ही हैं। श्रीवास्तव और श्री अय्यर जैसे विशेषज्ञ संदेह जताते हैं कि यदि सरकार ने थोड़ी भी लापरवाही की तो प्रणय राय, विजय माल्या व ललित मोदी की तरह पलक झपकते विदेश भाग जाएंगे। सरकार हाथ मलती रह जाएगी और प्रणय राय व राधिका राय दक्षिण अफ्रीका में अपने अरबों के साम्राज्य पर ऐश करते हुए भारतीय कानून व्यवस्था को ठेंगा दिखाते रहेंगे।

चतुर्थ अध्याय

वेब लड़ाके

अप्रैल 2018 में दुनिया भर की मीडिया में, डेटा चोरी करने के एक मामले ने सनसनी पैदा कर दी। यह सनसनी ब्रिटेन के अखबार 'द गार्जियन'' के 'स्टिंग ऑपरेशन' में अमेरिकी राष्ट्रपति चुनाव में कैम्ब्रिज एनालिटिका के गंदे खेल के खुलासे से हुआ। सोशल मीडिया के सहारे आम आदमी का निजी डेटा (जानकारी) चोरी करने में महारत हासिल करने वाली कंपनी 'कैम्ब्रिज एनालिटिका' को रातों-रात दुनिया ने कुछ यूं जाना, जिसकी कल्पना अब तक किया जाना संभव नहीं था। किसी निजी कंपनी द्वारा आम नागरिक के डेटा चोरी से कोई सरकार गिराई या अपने पसंद की सरकार को बनाई जा सकती है! आरोप यह लगाया जाने लगा कि डोनाल्ड ट्रम्प को जनवरी 2017 में अमेरिकी राष्ट्रपति चुने जाने में कैम्ब्रिज एनालिटिका ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई! यह भरोसा करना मुमकिन नहीं था, लेकिन 'द गार्जियन' ने अपने एक स्टिंग ऑपरेशन में इस बात को साबित किया कि राष्ट्रपति चुनाव में डोनाल्ड ट्रंप को जितवाने के लिए कैम्ब्रिज एनालिटिका ने आम अमेरिकी का डेटा चोरी कर उसके बारे में सारी जानकारियां इकट्ठा कर उनके विचार को प्रभावित करने का काम किया। एएनआई की 21 मार्च, 2018 की रिपोर्ट के मुताबिक इसके लिए 'कैम्ब्रिज एनालिटिका' ने आम अमेरिकी की निजी जानकारी चोरी की। लगभग 5 करोड़ फेसबुक यूजर्स का डाटा अवैध तरीके से चोरी कर कैम्ब्रिज एनालिटिका ने ट्रंप के पक्ष में माहौल बनाया।

फेसबुक के मालिक मार्क जुकरबर्ग ने अप्रैल के दूसरे हफ्ते में अमेरिकी कांग्रेस के समाने में सफाई देते हुए बार-बार माफी मांग कर संदेश दिया कि जाने अंजाने में ही फेसबुक यूजर्स के निजी डाटा को कैम्ब्रिज एनालिटिका ने चोरी कर अपने हित में इस्तेमाल कर, व्यावसायिक फायदा हासिल कर लिया। जुकरबर्ग ने अमेरिकी कांग्रेस के सामने सफाई देते हुए कहा... "कैम्ब्रिज एनालिटिका ने जो कुछ किया उसे चिन्हित किया जा चुका है और कार्रवाई भी हो चुकी है। 2007 में फेसबुक जैसे बना, लगभग उसी तरीके से 2013 में कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के शोधार्थी छात्र एलेक्जेंडर कोगन ने एक एप बनाया। तीन लाख लोगों ने उस एप को इंस्टाल किया। हमने उसे अपना प्लेटफॉर्म दिया, जहां से उसने डेटा चोरी कर ली। 2015 में हमें 'द गार्जियन' के पत्रकार से जानकारी मिली कि कोगन ने यह डेटा कैम्ब्रिज एनालिटिका से साझा कर लिया। यह हमारे सिद्धांत के खिलाफ था कि यूजर की सहमति के बिना उसका डेटा लिया जाए। जानकारी मिलते ही हमने तुरंत कोगॉन और कैम्ब्रिज एनालिटिका से कहा कि वह फेसबुक से हासिल डेटा को डिलीट करे, लेकिन हमें जानकारी मिली कि उनने ऐसा नहीं किया तो हमने उन्हें अपने प्लेटफार्म पर प्रतिबंधित कर दिया"।(1) अमेरिकी कांग्रेस के सामने फेसबुक के मालिक की इस सफाई ने साबित कर दिया कि बदलते दौर में आम आदमी के डेटा चोरी के मायने क्या हैं!

'द गार्जियन' के स्टिंग में कैम्ब्रिज एनालिटिका के अधिकारियों ने यह भी बताया कि अमेरिका के अलावा भारत, नाइजीरिया, केन्या, चेक रिपब्लिक और अर्जेंटिना जैसे दुनिया के कई देशों के 200 से ज्यादा चुनावों के लिए काम किया। कैम्ब्रिज एनालिटिका के इस खेल में भारत का नाम भी सामने आया। आरोप लगा कि आम भारतीय के निजी डाटा को भी चुराया गया, ताकि किसी राजनीतिक पार्टी को फायदा पहुंचाया जा सके।[2] यूं तो फेसबुक ने कैम्ब्रिज एनालिटिका को अपने वॉल से हटा दिया है, लेकिन अमेरिकी चुनाव में फेसबुक के राजनीतिक और व्यावसायिक इस्तेमाल की गंभीरता को देखते हुए भारत सरकार ने फेसबुक को आगाह किया कि यदि उसने देश की चुनाव प्रक्रिया को किसी भी अवांछित तरीके से प्रभावित करने का प्रयास किया तो उसे कड़ी कार्रवाई का सामना करना पड़ेगा। अमेरिका के नियामक द्वारा फेसबुक के खिलाफ प्रयोगकर्ताओं की गोपनीयता के संभावित उल्लंघन की जांच की जा रही है। अमेरिकी कांग्रेस द्वारा फेसबुक के

मालिक मार्क जुकरबर्ग को बुलाकर फटकारने और फेसबुक द्वारा कांग्रेस के सामने माफी मांगने के बाद पूरी दुनिया को यह पहली बार एहसास हुआ कि सोशल मीडिया या वेब मीडिया पर डाटा चोरी कर आपकी सोच को प्रभावित किया जा सकता है। इतना प्रभावित कि सोशल मीडिया के माध्यम बने वेब मीडिया के चक्रव्यूह में फंसकर अमेरिका जैसे विशाल लोकतांत्रिक देश की सत्ता बदल दे !

डाटा चोरी के आरोप में फंसे कैम्ब्रिज एनालिटिका पर भारत की सबसे पुरानी राजनीतिक पार्टी कांग्रेस के साथ संबंध होने के भी आरोप लगाए गए! खुद कंपनी के सीइओ किस्टोफर वायली ने यह स्वीकार किया। जब भारत सरकार को इस बात की सूचना मिली कि दुनिया में सबसे बड़े फेसबुक यूजर्स भारतीयों के डाटा भी चोरी करने का अधिकार कभी कैम्ब्रिज एनालिटिका को दे दिया गया था, तो सरकार की बेचैनी बढ़ गई।[3] सूचना प्रौद्योगिकी और कानून मंत्री रवि शंकर प्रसाद ने 12 अप्रैल, 2018 को बेहद तल्ख भाषा में फेसबुक के मालिक मार्क जुकरबर्ग को चेतावनी दी कि यदि भारतीयों के डेटा चोरी के आरोप में दम है तो उनके खिलाफ कार्रवाई होगी। दुनिया भर में फेसबुक के माध्यम से विशाल साम्राज्य तैयार कर चुके जुकरबर्ग ने अप्रैल 2018 के दूसरे हफ्ते में अमेरिकी कांग्रेस के सामने माफी मांगते हुए कहा 'आपके डेटा को सुरक्षित रखना हमारी जिम्मेदारी है। यदि हम ऐसा नहीं कर सकते तो हमें आपकी सेवा करने का कोई हक नहीं। जो गलती हुई, उसे ठीक किया जा चुका है।['4]

सवाल यह है कि पूरी दुनिया में आम आदमी को अभिव्यक्ति का एक विशाल मंच देने वाले जुकरबर्ग ने ऐसा क्या अपराध किया जिसके कारण दुनिया के सबसे पुराने लोकतंत्र में सत्ता बदलने की साजिश का आरोप उन पर लग गया और सबसे बड़े लोकतंत्र के सूचना प्रौद्योगिकी और कानून मंत्री को उन्हें धमकाने की जरूरत हो गई! क्या फेसबुक के माध्यम से आम आदमी का डेटा चोरी करना इतना बड़ा अपराध है, जिसे कभी गंभीरता से लिया ही नहीं गया !

'द गार्जियन' अखबार 2015 में अपनी एक रिपोर्ट में जब यह खबर छापी कि फेसबुक द्वारा आम अमेरिकी का डेटा चोरी किए जाने के कारण ही डोनाल्ड ट्रंप के पक्ष में माहौल बनाया गया तो अपने तरह की सोशल मीडिया पर चलाए गए इस मुहिम के कारण ही ओबामा चुनाव हार गए। इस खबर ने अमेरिका में खलबली मचा दी। गार्जियन की रिपोर्ट के मुताबिक फेसबुक और कैम्ब्रिज एनालिटिका में

एक समझौता था। इसका फायदा उठाते हुए कैम्ब्रिज एनालिटिका ने फेसबुक यूजर के भाव, उसकी रुचि और सोच का डेटा तैयार कर उसके विचार को प्रभावित करने का प्रयास किया। 'द गार्जियन' अखबार और 'चैनल 4' की रिपोर्ट के मुताबिक फेसबुक और कैम्ब्रिज एनालिटिका में करार के मुताबिक एनालिटिका को डेटा डिलीट करना था, लेकिन उसने ऐसा नहीं किया। दरअसल, फेसबुक के मालिक जुकरबर्ग के मुताबिक 2007 में फेसबुक के वजूद में आने और 2013 तक दुनिया में अपना साम्राज्य फैलाने के दौरान अमेरिका के ही कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के छात्र एलेग्जेंडर कोगान ने एक 'एप' बनाया। कुछ ही दिनों में तीन लाख लोग उस से जुड़ गए। इतनी बड़ी संख्या में जुड़े लोगों को हमने अपने प्लेटफॉर्म पर स्थान दिया। यहीं से कोगान की कंपनी ने फेसबुक यूजर्स के डेटा चुरा लिए। जब 'द गार्जियन' से इस खबर को छापा तो फेसबुक की सख्ती के बाद कोगान की कंपनी को फेसबुक ने प्रतिबंधित कर दिया। लेकिन, तब तक बड़ी संख्या में अमेरिकियों के डेटा चोरी किए जा चुके थे।

भारत में भी राजनीतिक दलों ने बदलते दौर में सोशल मीडिया की महत्ता को समझा। भाजपा और कांग्रेस समेत ज्यादातर दलों ने अपने डेटा एनालिटिक्स डिपार्टमेंट तैयार किया। कांग्रेस पार्टी ने अपने डेटा एनालिटिक्स डिपार्टमेंट का हेड अमेरिका में अपना डंका बजा चुके प्रवीण चक्रवर्ती को बनाया। राहुल गांधी ने प्रवीण चक्रवर्ती के साथ फोटो जारी कर जब इस बात की घोषणा की तो एक बात और सामने आई कि प्रवीण को डेटा चोरी के एक मामले में कैलिफोर्निया की अदालत से लाखों डॉलर का जुर्माना हो चुका है। थामस बिसेल v/s बीएनपी केस नंबर 76/97 में जज मार्लिन पटेल की अदालत ने चक्रवर्ती पर यह कार्रवाई की थी। देश की सबसे बड़ी पार्टी के लिए प्रवीण चक्रवर्ती की महत्ता साबित करता है कि सोशल मीडिया के इस दौर में डेटा विशेषज्ञों के सहारे लोगों के विचार को प्रभावित करने के मायने क्या हैं। बदलते वक्त में इसी मायने को दशकों से भारतीय पत्रकारिता में धमक जमा चुके मीडिया मठाधीशों ने भी जाना।[5]

वक्त बदले, हालात बदले, जनता के मिजाज बदले, लेकिन सालों तक सेकुलरिज्म और समाजवाद के नाम पर खास उद्देश्य के लिए पत्रकारिता करने वाले पत्रकारों ने अपनी पत्रकारीय निष्ठा नहीं बदली। सोशल मीडिया के इस दौर में उन पत्रकारों को यह लगने लगा कि मोबाइल पर अपना डाटा खर्च कर, दिन भर व्यस्त

रहने वाले भारत के युवाओं समेत एक विशाल समूह को अपनी ओर खींचने के लिए वेब पत्रकारिता से बेहतर कोई विकल्प नहीं हो सकता। लोगों के ड्राइंग रूम से लेकर बेडरूम ही नहीं, गुसलखाने तक में भी वेब मीडिया की पहुंच ने नई मीडिया क्रांति ला दी। डेटा चोरी से लाइक, कमेंट और शेयर के सहारे आम आदमी के मिजाज को पढ़ने के बाद इसे प्रभावित करने के सोशल मीडिया के नए सजीव होते ताकत ने नवीन मीडिया को एक नई ताकत और नई उम्मीद दे दी। टेलीविजन से उबते आमजन ने पाया कि 2014 के बाद यकायक वेब चैनल की बाढ़-सी आ गई। वेब चैनलों के माध्यम से खबरों को अपने तरीके से ट्विस्ट कर परोसने के इस धंधे में बहुत से पत्रकार खप गए। द वायर, द क्विंट, द प्रिंट, द कारवां जैसे वेब चैनलों ने एक नई दुनिया बसा ली। तथ्यों और साक्ष्यों से पुष्ट-अपुष्ट, खास उद्देश्य से प्रेरित एक-एक खबर ने हर वेबसाइटों को अपनी पहचान दे दी।

मेन स्ट्रीम मीडिया से आए खास विचारधारा से प्रभावित संपादकों के वेबसाइटों को बिजनेस घरानों समेत बॉलीवुड स्टारों तक की ओर से फंडिंग मिलने लगी, लेकिन इन वेबसाइटों ने आम आदमी से चंदा की मांग कर यह दर्शाने का प्रयास भी किया कि उनकी पत्रकारिता सिर्फ लोकहित के लिए है। सेकुलरिज्म की रक्षा के लिए है। खास विचारधारा के लोगों को अपना डेटा खर्च कर इन वेब साइटों पर अपने टेस्ट की खुराक मिलने लगी। पत्रकारिता के इस धंधे में विवाद के अपने ही मायने हैं, टीवी पत्रकारिता में जहां इससे टीआरपी की रेस में शरीक होने का अवसर मिलता है, वहीं वेब की दुनिया में हिट्स का कारोबार चलता है। इस कारोबार ने न जाने कितनी वेबसाइटों का वजूद खड़ा कर दिया। हिट्स, लाइक, कमेंट और शेयर से आमजन के मिजाज को पढ़ने के इस माध्यम ने पत्रकारिता की नई पौध को जमीन दे दी। इस पौध ने अपने विचार आमजन में फलीभूत करने की मानो बड़ी जिम्मेदारी ले ली। अमेरिका से लेकर भारत तक दुनिया के सबसे पुराने और सबसे बड़े लोकतंत्र की जमीन इन नई पौधे से हिलने लगी। सवाल यह है कि क्या सचमुच पत्रकारिता के इस नए पौध में इतनी ताकत है? भारतीय मीडिया इस बदलते दौर में खुद अपने ही नए स्वरूप से अचंभित है।

कुलभूषण पर द क्विंट

बरखा दत्त, राजदीप सरदेसाई समेत कई अंग्रेजीदां पत्रकारों पर यह आरोप लगता रहा कि वह अक्सर कश्मीर मसले पर पाकिस्तान के रुख के हिमायती नजर आते

हैं। एक बार का वाक्या न सिर्फ सोशल मीडिया पर वायरल हुआ, बल्कि खुद प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने अपने भाषण में पत्रकार का नाम लिए बिना कहा कि पाकिस्तान के तत्कालीन प्रधानमंत्री नवाज शरीफ भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह के लिए 'देहाती औरत' शब्द का प्रयोग कर मजाक बना रहे थे और भारतीय महिला पत्रकार वहां अपनी आपत्ति दर्ज करने के बदले ठहाके मार रही थी। यह भाव इस संदेश को पुख्ता करता है कि कैसे भारतीय पत्रकारिता के एक वर्ग के लिए पत्रकारीय निष्ठा और देश कोई मायने नहीं रखता। लेकिन, पाकिस्तान के प्रति भारतीय नामचीन पत्रकारों की यह निष्ठा यहीं तक थी, ऐसा नहीं है। सीएनएन आईबीएन के सर्वेसर्वा रहे राघव बहल ने जब टीवी पत्रकारिता के बाद नए युग की पत्रकारिता में कदम रखा तो वेब की दुनिया में 'द क्विंट' को लॉन्च किया। 'द क्विंट' की पाकिस्तान के जेल में सालों बंद कुलभूषण जाधव वाली स्टोरी ने इस संदेह को और पुख्ता किया कि एक नई वेबसाइट को चर्चा में लाने के लिए किस तरह से राष्ट्रहित से सौदा किया गया।

पूरा भारत, पाकिस्तान के जेल में जासूसी के आरोप में बंद अपने बेटे कुलभूषण को इंसाफ दिलाने के लिए परेशान था। पाकिस्तान की सैन्य अदालत के मुताबिक कुलभूषण भारत का जासूस था जो पाकिस्तान में आतंकी वारदात को अंजाम देने में लिप्त था। पाकिस्तान के सेना प्रमुख जावेद बाजवा ने 10 अप्रैल, 2017 को कुलभूषण जाधव की मौत की सजा को मंजूरी दे दी थी। पाकिस्तान सरकार के मुताबिक भारतीय रॉ के एजेंट, नौसेना के जवान जाधव को बलूचिस्तान के माशकेल इलाके से 3 मार्च, 2016 को गिरफ्तार किया गया था, जबकि भारत का मानना है कि जाधव नौ सेना के जवान तो थे, लेकिन रिटायर्ड हो चुके थे। भारत की विदेश मंत्री सुषमा स्वराज अंतरराष्ट्रीय मंचों पर कुलभूषण के साथ पाकिस्तान सरकार के अत्याचार को पुरजोर तरीके से रख रही थी। पाकिस्तान सरकार द्वारा जारी एक वीडियो ने उनकी पोल खोल दी थी कि कैसे कुलभूषण पर अत्याचार कर वही बुलवाया गया, जो वहां की जांच एजेंसी चाहती थी। इससे अलग पाकिस्तान सरकार के अमानवीयता पूर्ण नाटक को दुनिया के सामने रखकर भारत सरकार, पाकिस्तान के मानवाधिकार कानून की पोल खोल रही थी। भारत, दुनिया को बता रहा था कि कैसे कुलभूषण की पत्नी और मां को मानवीयता के नाम पर उनसे मिलवाने के बहाने अत्याचार किया गया। कुलभूषण की मां की पारंपरिक

साड़ी उतरवाकर सलवार-कुर्ते पहनाए गए, सेंडल तक उतारे गए। यह सब तब, जब भारत से पाकिस्तान पहुंचने के बाद घंटों उनकी जांच-पड़ताल हो चुकी थी। इतना सब होने के बाद भी कुलभूषण को अपनी मां और पत्नी से शीशे में कैद कर मिलाया गया। मां को अपने बेटे को पास में खड़े रह कर छूने का एहसास तक नहीं होने दिया। पाकिस्तान सरकार के इस रवैये के कारण दुनिया भर में उनकी भद पिट रही थी। उसी वक्त 'द क्विंट' वेबसाइट ने ऐसी खबर छापी जिसने पाकिस्तान के आरोप को बल दे दिया और भारत को ही कठघरे में खड़ा कर दिया।

Loose Lips sinks Ships, यानी बड़बोलापन जहाजों को डुबो देता है। एएनआई की संपादक स्मिता प्रकाश ने द क्विंट की कुलभूषण मामले की गई नादानीपूर्ण पत्रकारिता पर यह टिप्पणी की थी। उन्होंने आगे अपनी ट्वीट में लिखा था, 'This article damages India's case on Kulbhushan like no other so far.'

आखिर उस रिपोर्ट में ऐसा क्या था जिसे पुख्ता किए बिना भारतीय पत्रकार ने अपनी वेबसाइट पर लिखकर अपने ही देश की मिट्टी पलीद कर दी? क्विंट के चंदन नंदी का वह लेख इतना हंगामाखेज था कि वेबसाइट को वह लेख वापस लेना पड़ा। क्विंट ने एक फर्जी कहानी गढ़ कर वापस ले ली, लेकिन वेब की दुनिया में हजारों हिट पाकर उसने अपने हित को साध लिया। अगर आप उस लिंक पर या क्विंट की साइट पर जाकर चेक करेंगे तो लिखा आएगा, ''The Quint is Rechecking the Kulbhushan Jadhav Story'' इस लेख को पढ़कर आपको लगेगा कि किसी हिंदुस्तानी पत्रकार ने नहीं, बल्कि किसी पाकिस्तानी पत्रकार ने लिखा है, आलम यह है कि इस लेख को पढ़कर पाकिस्तान इतना खुश है कि क्विंट ने भले ही यह लेख अपनी साइट से हटा लिया है, लेकिन पाकिस्तान की मशहूर वेबसाइट डिफेंस डॉट पीके ने लगा रखा है।

भारतीय टीवी जगत में बड़ा नाम हासिल करने वाले राघव बहल ने टीवी 18 ग्रुप को बेच कर एक नई वेब कंपनी की नींव डाली जिसका नाम 'द क्विंट' दिया गया। राधव बहल की टीम वेब जगत में अपने ऑपरेशंस यहीं से चला रही है, सीएनबीसी आवाज के पूर्व संपादक संजय पुगलिया के पास इसकी कमान है।

वरिष्ठ पत्रकार और एएनआई की संपादक स्मिता प्रकाश का मानना है कि इस लेख ने कुलभूषण मामले में इंडिया के पक्ष को इतना नुकसान पहुंचा दिया है

जितना कि अब तक किसी ने नहीं तो ये वाकई में सच है। इतने गैरजिम्मेदाराना तरीके से इसे लिखा गया है कि खुद क्विंट प्रबंधन को इस लेख को वापस लेने को मजबूर होना पड़ा।

आखिर ऐसा क्या छाप दिया था 'द क्विंट' ने जिससे देश का अहित हो गया! दरअसल, 6 जनवरी, 2018 को क्विंट में छपे उस लेख की हेडिंग थी- ''Two Ex RAW Chiefs did not want Kulbhushan Jadhav recruited as spy'' इस लेख की हेडिंग पढ़कर एक बात तय है कि लेखक ने यह मान लिया है कि कुलभूषण जाधव एक स्पाई, यानी जासूस है। हेडिंग अपने आप में बताती है कि रॉ के दो पूर्व चीफ नहीं चाहते थे कि कुलभूषण जाधव को रॉ का जासूस बनाया जाए। बाकी की कहानी अंदर लिखी है कि कैसे ऐतराज के बावजूद कुलभूषण को हायर किया गया, उसके दो पासपोर्ट बने, कैसे उसकी गिरफ्तारी के बाद उसका रिकॉर्ड मिटा दिया गया। पाकिस्तान दरअसल यही चाहता था। भारत के किसी प्रभावशाली संपादक के नेतृत्व में चलने वाली वेबसाइट ने पाकिस्तान के पक्ष को मजबूत ढाल दे दिया।

पत्रकारिता का एक आधारभूत सिद्धांत है कि किसी भी खबर के दोनों पक्षों को सामने रखा जाए। खबर को आमजन तक भेजने से पहले पुख्ता सबूत तैयार किया जाए। सिर्फ किसी सोर्सेज की सुनी कहानी के आधार पर कभी खबर तैयार नहीं होती। लेकिन, यहां पूरी कहानी, रिपोर्टर ने अपने सोर्सेज के जरिए, लिखी है, कोई सबूत नहीं है और न ही किसी का ऑफिशियल बयान है। एक बार मान भी लिया जाए कि यह सही है तो क्या कोई भी पत्रकार इतने संजीदा और सीक्रेट इश्यू पर भारत सरकार के खिलाफ स्टैंड ले सकता है? वह भी तब, जब उसके पास सबूत नहीं है और पाकिस्तान इस लेख को इंटरनेशनल कोर्ट ही नहीं, कई इंटरनेशनल मंचों पर इस्तेमाल करके भारत की फजीहत कर सकता है !

साफ है अति उत्साह या खोजी पत्रकारिता के जुनून में लिखी गई इस स्टोरी में देश हित को ताक पर रख दिया गया है। पाकिस्तान के पास कुलभूषण जाधव के खिलाफ कोई पुख्ता सबूत नहीं थे, लेकिन अब यह लेख उस दिशा में उसकी मदद कर सकता है ऐसे में कुलभूषण जाधव की रिहाई और जिंदगी बचने की सारी उम्मीदें भी खत्म हो सकती हैं। कल को इस रिपोर्टर और क्विंट प्रबंधन पर भी सवाल उठ सकते हैं।

दिलचस्प बात यह है कि भारत सरकार के अंतरराष्ट्रीय कोर्ट जाने के कारण ही कुलभूषण की जिंदगी बची हुई है। अंतरराष्ट्रीय कोर्ट ने पाकिस्तान द्वारा कुलभूषण की मौत की सजा पर रोक लगा रखी है। लेकिन, अंतरराष्ट्रीय अदालत में भारत की ही एक वेबसाइट की रिपोर्ट न सिर्फ भारत के पक्ष को कमजोर करेगी, बल्कि पाकिस्तान के इस बात पर मुहर लगा सकती है कि भारत की खुफिया एजेंसी पाकिस्तान के आंतरिक सुरक्षा को तबाह कर सकती है। बस कल्पना किया जा सकता है कि वेब पत्रकारिता के नाम पर किस तरह से पेशा को मजाक बनाने वाले पत्रकारों ने देश को भी अंतरराष्ट्रीय पटल पर मजाक का पात्र बना दिया।

'द क्विंट' ने यह काम पहली बार नहीं किया। मई 2017 में कुख्यात अंतरराष्ट्रीय आतंकी ओसमा बिन लादेन के महिमामंडन वाली एक स्टोरी क्विंट ने की थी। उस स्टोरी में क्विंट ने दुनिया भर में हजारों निर्दोषों को मौत की घाट उतारने वाले ओसामा को एक पिता और पति के रूप में उसके चरित्र का बखान किया था।

'द कारवां'

द कारवां की एक रिपोर्ट जो पत्रकारिता की धरातल पर खबर होने के किसी पैमाने में नहीं टिकता, उसे खबर बता कर एनडीटीवी ने नाटकीय अंदाज में पेश किया। कारवां की उसी रिपोर्ट को वेब पोर्टल 'द वायर' ने सीरीज के रूप में चलाया। प्रणय राय के चैनल एनडीटीवी के प्राइम टाइम नामक शो के एंकर ने जब कारवां की रिपोर्ट का विशलेषण करते हुए कहा कि 'दिल्ली की पूरी मीडिया डरी हुई है। डर मुझे भी है। डर जज बृजमोहन लोया के परिवार को भी है। तो क्या डर के मारे जीना छोड़ दें।' सोशल मीडिया की सुर्खियों में रहने वाले NDTV के एंकर रवीश कुमार पांडे ने जब अपनी भाव-भंगिमा लपेटते हुए यह कहा- "सत्ता से पत्रकारों का ऐसा डर कि कोई अखबार एक खबर नहीं छापता और आप मेरा प्राइम टाइम अपने ड्राइंग रूम में सोफे के पीछे से डरते हुए देख रहे हैं।" इस विशलेषण ने देश को यह जानने के लिए जिज्ञासु बना दिया कि आखिर कारवां वेब ने ऐसा क्या छाप दिया जिसे छापने की हिम्मत कोई पत्रकार जुटा ही नहीं पाया।

दरअसल, एक वेब पत्रिका "द कारवां" ने रिपोर्टर निरंजन टाकले के हवाले से खबर छापा कि गुजरात के बहुचर्चित सोहराबुद्दीन एनकाउंटर मामले की सुनवाई कर रहे जिस जज गोपाल लोया की मौत 2017 में हार्ट अटैक से बताई गई थी,

वह हत्या है! यह मुद्दा सुर्खियों में इसलिए बना, क्योंकि जज लोया जिस मामले की सुनवाई कर रहे थे उस मामले में तत्कालीन भाजपा अध्यक्ष फिर देश के गृहमंत्री बने अमित शाह को सीबीआई ने अभियुक्त बनाया था। सुप्रीम कोर्ट के आदेश और निगरानी में उस मामले की सुनवाई गुजरात के बाहर महाराष्ट्र में चल रही थी। इस मामले में अमित शाह को लोअर कोर्ट से लेकर हाईकोर्ट और सुप्रीम कोर्ट ने दोषमुक्त कर दिया था। तीन साल से इस मामले पर चुप्पी थी। जब दिसंबर 2017 में गुजरात में चुनाव का मौसम आया तो कारवां में बिना तथ्यों की पड़ताल किए खबर की नुमाइश शुरू कर दी। अमित शाह के खिलाफ मामला तब बनाया गया था जब पिछली बार 2012 में गुजरात में विधानसभा का चुनाव होना था।

कारवां की इस कहानी के मुताबिक जज लोया की बहन तीन साल बाद कह रही है... "जिस रात जज लोया की हार्ट अटैक से मौत हुई थी उस रात उनके भाई अपने एक साथी जज की बेटी की शादी में शामिल होने नागपुर गए थे। रात में पार्टी से गेस्ट हाउस लौटने के बाद देर रात को लोया को दिल का दौरा पड़ा। दो साथी जज तुरंत ऑटो से नजदीकी अस्पताल ले गए। वहां उनकी मौत हो गई। उनका आरोप है कि यह एक साजिश थी। उनका वक्त पर इलाज ढंग का नहीं हुआ। फिर लाश को ड्राइवर के साथ एंबुलेंस से जज लोया के घर भेज दिया गया। हार्ट अटैक को हत्या साबित करने के लिए कारवां ने बस जज लोया की बहन के एक बयान के आधार पर खबर छाप दिया। यह दिखाया गया कि जानबूझ कर उन्हें ऑटो में ले जाया गया, जबकि गाड़ियां उपलब्ध थीं।

पत्रकारिता के उस आधारभूत सिद्धांत को धता बताते हुए जिसके मुताबिक इस खबर को पुख्ता किए जाने के लिए रिपोर्टर को जज लोया के दोनों साथी जज, जिस गेस्ट हाउस में वे ठहरे थे, उसके केयर टेकर, जज लोया का इलाज करने वाले डॉक्टर और उससे भी आगे जज लोया की पत्नी या बेटे से बात करना चाहिए था। लेकिन, इतनी गंभीर खबर को बस एक महिला के बयान के आधार पर छाप दिया गया। अगले ही दिन एनडीटीवी ने बिना अपने रिपोर्टर से इस मामले की पड़ताल कराए बिना विशलेषण कर दिया।

जज लोया की मौत को हत्या साबित करते हुए भाजपा अध्यक्ष अमित शाह को सवालों के घेरे में लेने के लिए सवाल किया जाने लगा...

1 जस्टिस लोया को ऑटो से अस्पताल क्यों लाया गया?

2 उनके लिए प्रोटोकॉल का इस्तेमाल क्यों नहीं किया गया?

3 उनके घर वालों को क्यों नहीं बुलाया गया?

4 गेस्ट हाउस की गाड़ियों का इस्तेमाल क्यों नहीं किया गया?

इन सवालों का जवाब ढूंढ़ना तो बहुत आसान था, लेकिन भ्रम पैदा करने के लिए सवालों के जवाब नहीं ढूंढ़े जाते, बस सवाल खड़े किए जाते हैं। जज लोया लोअर कोर्ट के जज थे। अदालत की थोड़ी-सी भी समझ रखने वाला पत्रकार यह जानता है कि लोअर कोर्ट के जज, जस्टिस नहीं, एक सरकारी अधिकारी होते हैं! बस न्यायिक अधिकारी! उसका कोई प्रोटोकॉल नहीं होता। वह कोई हाईकोर्ट या सुप्रीम कोर्ट का न्यायमूर्ति नहीं, जिसके पास असीमित अधिकार हैं। एक पत्रकार जब जज और न्यायमूर्ति में अंत नहीं समझेगा, प्रोटोकॉल के मायने नहीं जानेगा तो खबर की व्याख्या कैसे कर पाएगा? जज लोया की मौत को हत्या साबित करने की पत्रकारीय साजिश के लिए भी तथ्यों की सूझबूझ की जरूरत थी।

लेकिन, 'कारवां' मैग्जीन और एनडीटीवी द्वारा बिना तथ्य के सुर्खी के रूप में तैयार किया। उस खबर की पड़ताल की इंडियन एक्सप्रेस ने।

'इंडियन एक्सप्रेस' ने अगले ही दी अपने पांच से छह रिपोर्टरों को इस बेहद गंभीर और संवेदनशील खबर की तहकीकात के लिए लगाया। यह जानते हुए कि खबरों को समझने के लिए न सिर्फ पत्रकार के लिए पढ़ना-लिखना परमावश्यक है, एक रिपोर्टर के लिए इसके साथ ग्राउंड पर जाकर तथ्यों और सबूतों को इकट्ठा करना जरूरी होता है। तभी 'खबर' स्टोरी नहीं न्यूज होती है, बाकी फरेब करने के लिए तो घर बैठे ही खबर तैयार की जा सकती है।

'कारवां' मैग्जीन उस खबर को बिना पुख्ता किए एनडीटीवी के रवीश कुमार ने वही काम किया। उन्होंने सवाल उठाया कि जज बृजगोपाल लोया को नागपुर के गेस्ट हाउस में जब सीने में दर्द हुआ तो प्रोटोकाल का पालन नहीं हुआ (प्रोटोकाल जज के लिए नहीं होता, सिर्फ हाईकोर्ट या सुप्रीम कोर्ट के जस्टिस के लिए होता है। लोया जस्टिस नहीं, न्यायिक अधिकारी थे। उन्हें ऑटो से अस्पताल ले जाया गया। यह जानते हुए कि इस देश का मेडिकल सिस्टम कैसा है! यह जानते हुए कि इसी देश के रेलमंत्री ललित नारायण मिश्र को बम विस्फोट में घायल होने पर बिहार के

समस्तीपुर से राजधानी पटना जाने में एक दिन लग गए और उनकी मौत हो गई। खैर, फरेब के लिए माहौल तो बनाना था, लेकिन क्या बना देखिए..

कारवां की खबर के बाद इंडियन एक्सप्रेस अखबार की पड़ताल के मुताबिक:-

1. तीस, नवंबर 2014 की देर रात शादी की पार्टी के बाद जज लोया नागपुर के रवि भवन गेस्ट हाउस में सोने गए तो सुबह चार बजे उन्हें सीने में तेज दर्द हुआ। रिपोर्ट के मुताबिक साथी जज श्रीधर कुलकर्णी और श्रीराम मधुसुदन रेड्डी, डिप्टी रजिस्ट्रार विजय कुमार दो एंबेसडर कार से जज बृजमोहन लोया को लेकर नजदीक के अस्पताल ले गए। अखबार की रिपोर्ट के मुताबिक यह पूरा तथ्य मुंबई हाइकोर्ट के नागपुर बैंच के जस्टिस सुनील शुक्रे और जस्टिस भूषण गोयल के बयान के आधार पर हैं।

यहां यह झूठ साबित होता है कि जज लोया को ऑटो से अस्पताल ले जाया गया। लापरवाही के कारण वक्त पर उन्हें अस्पताल नहीं पहुंचाया गया, जिसे एक साजिश की तरह पेश किया गया।

2. कारवां की रिपोर्ट के मुताबिक जज लोया का "ईसीजी" नहीं हुआ।

अखबार की रिपोर्ट.......डुंडे अस्पताल की ईसीजी दिखाते हुए अस्पताल के डायरेक्टर कहते हैं.. सुबह लगभग पौने पांच से पांच बजे के बीच मरीज लोया को अस्पताल लाया गया। हमारे यहां ट्रामा सेंटर चौबीसों घंटे काम करता है। यहां ट्रामा सेंटर के दो रेजिडेंट डॉक्टर ने मरीज को देखा। मरीज की हालत की गंभीरता को भांपते हुए हमने शहर के बड़े अस्पताल मेडिट्रीना के लिए रेफर कर दिया। अस्पताल के एमडी डॉक्टर समीर और अस्पताल के रिकार्ड के मुताबिक यहां पहुंचने से पहले उनकी मौत हो गई थी।

कारवां ने यह साबित करने का प्रयास किया कि जब जज लोया की तबियत खराब हुई तो न तो उन्हें वक्त पर अस्पताल पहुंचाया गया, न ही उनका उचित इलाज हुआ।

3. अखबार कहता है कि मुबई हाईकोर्ट के जूनियर जस्टिस गवई के मुताबिक उनके पास जस्टिस सुनील शुक्रे का फोन आया और तुरंत अस्पताल पहुंचने को कहा। मैंने ड्राइवर का इंतजार किए बिना खुद अपनी कार लेकर मेडिट्रीना

अस्पताल पहुंचा। जस्टिस शुक्रे के बयान के हवाले से अखबार लिखता है कि दोनों जस्टिस, मैं और जस्टिस गवई अस्पताल पहुंचे, तभी मुख्य न्यायाधीश के सचिव को भी फोन पर जानकारी दी, लेकिन सभी प्रयास बेकार चले गए। उन्हें बचाया नहीं जा सका। सुबह छह बजे उनकी मौत हो गई।

4. 'कारवां' और 'एनडीटीवी' का पत्रकार नाटकीय अंदाज में कहता है कि लाश रिसीव करने वाला अनजान था। अब गायब है। वो रिश्तेदार कहां हैं? जज की लाश को एंबुलेंस में लावारिस लातूर भेज दिया गया। इन पत्रकारों ने बिना किसी पड़ताल के इतनी गंभीर मामले को उठा कर पूरे सिस्टम को बदनाम कर दिया। जज लोया के दोनों सहकर्मी साथी का चरित्र हनन किया यह कहते हुए कि उन्होंने अपने मित्र की बिगड़ती सेहत की कोई खबर नहीं ली। तबीयत बिगड़ने के बाद वे कहां गए, पता ही नहीं। समझा जा सकता है कि यह कितना गंभीर मामला है। यह आरोप किसी के मानवीयता पर भी सवाल करता है। आखिर कोई पढ़े-लिखे समाज के सबसे जिम्मेदार, न्यायिक के पेशे का व्यक्ति इतना अमानवीय कैसे हो सकता है! लेकिन, 'कारवां' ने बिना पड़ताल के खबर तैयार करते समय इन मानवीय पहलुओं का भी ख्याल नहीं रखा। जज लोया के साथी न्यायमूर्तियों को अनैतिक साबित कर एक तरह से उनकी मानहानि की।

5. लाश प्रशांत राठी ने रिसीव किया। उसने अखबार को बताया कि मौसाजी रुकुमेश जकोतिया का फोन आया कि नागपुर में अंकल लोया मेडिट्रीना अस्पताल में भर्ती हैं। जल्दी पहुंचो। जब तक मैं पहुंचा, उनकी मौत हो चुकी थी। प्रशांत के हवाले से अखबार लिखता है कि हमें पहुंचने में वक्त लगा। उस समय लगभग सात-आठ जज अस्पताल में थे। जस्टिस भूषण और जस्टिस गवई संग थे। उन्होंने हमें कहा कि पोस्टमार्टम हो गया है। मेरे सामने दुबारा पंचनामा हुआ। 10 बजकर 55 मिनट पर मैंने साइन किया। प्रशांत के हवाले से अखबार लिखता है कि लाश को लातूर ले जाना था। लाश के साथ दो पुलिस अफसर और एक सिपाही भी साथ गए थे।

जबकि, 'कारवां' और 'एनडीटीवी' की रिपोर्ट में बिना सबूत के संदेह को बढ़ाने के लिए खबर प्लांट की गई कि जज लोया की लाश को लावारिस तरीके से नागपुर से लातूर उनके घर भेज दिया गया, एक ड्राइवर संग। आगे जस्टिस गवई के हवाले से अखबार लिखता है 'हमने जिला जज केके सोनवाल को निर्देश दिया

कि दो जज को लाश के साथ लातूर भेजा जाए। जस्टिस गवई के मुताबिक एंबुलेंस एअर कंडिशंड था जिसमें बर्फ की सिल्लियां भी रखी गई थीं। साथ में एंबेसडर से दो जज योगेश राग्ले और स्वयं चोपड़ा एंबुलेंस के साथ लातूर गए। दोनों जज के साथ एक कांस्टेबल भी था। वे लातूर पहुंचने के बाद जज लोया के पिता से मिले और अंतिम संस्कार में भी शामिल हुए।

अब 'कारवां' की रिपोर्ट को समझिए जिसे 'एनडीटीवी' ने हू-बहू अपने प्राइम टाइम प्रोग्राम में उतार कर रख दिया। उस रिपोर्ट में पत्रकारिता के बेसिक का पालन न करते हुए सिर्फ जज लोया की बहन के बयान के आधार पर स्टोरी पैदा कर देश भर में माहौल बनाने का प्रयास किया गया कि जज लोया को बचाया जा सकता था, यदि उनका वक्त पर इलाज होता। लेकिन, साथी जज तक उस समय गायब हो गए जब उन्हें इलाज की जरूरत थी। उनकी लाश को लावारिस भेज दिया गया। यह सब इसलिए, क्योंकि हर कोई इस मामले से जुड़े भाजपा अध्यक्ष अमित शाह से डर रहे थे, क्योंकि जज लोया सोहराबुद्दीन एनकाउंटर मामले की सुनवाई कर रहे थे जिसमें अमित शाह अभियुक्त बनाए गए थे। इस पूरे मामले की सुनवाई सुप्रीम कोर्ट की निगरानी में चल रही थी। सुप्रीम कोर्ट के आदेश के बाद ही अमित शाह से जुड़े इस मामले की सुनवाई गुजरात के बदले महाराष्ट्र ट्रांसफर कर दिया गया था, जहां से बाद में अमित शाह को बरी कर दिया गया। कारवां की इस रिपोर्ट को इंडियन एक्सप्रेस ने पत्रकारीय धर्म का पालन करते हुए इन्वेस्टिगेटिव जर्नलिज्म किया, जहां यह साबित हुआ कि कारवां ने बिना किसी तथ्य और साक्ष्य के एक गुमराह करने वाली कहानी बनाई, जो पत्रकारिता के आधारभूत सिद्धांत के खिलाफ था। उस रिपोर्ट को बस एक व्यक्ति की सुनी-सुनाई बात के आधार पर तैयार कर लिया गया, जिसका पूरे मामले से कोई लेना-देना नहीं था। 'कारवां' की इस कहानी को एनडीटीवी और द वायर बेब पोर्टल ने जो हवा दी, वह बस राजनीतिक बहस का ही मुद्दा नहीं बना, सुप्रीम को भी राजनीतिक मंच के रूप में इस्तेमाल किया जाने लगा।

भारत के मुख्य न्यायाधीश की अध्यक्षता वाली पीठ के सामने एक जनहित याचिका दाखिल कर जज लोया की मौत को साजिश बताते हुए इसकी एसआईटी जांच की मांग की गई। तीन महीने तक मामले की सुनवाई करते हुए मुख्य न्यायाधीश जस्टिस दीपक मिश्रा की पीठ ने 19 अप्रैल, 2018 को जज लोया की

मौत के मामले की एसआईटी जांच की कांग्रेस नेता तहसीन पूनावाला की जनहित याचिका को खारिज करते हुए कहा कि जनहित याचिका का ऐसा दुरुपयोग का यह ऐसा मामला है जिसके लिए याचिकाकर्ता को दंडित किया जाना चाहिए। यह पूरा मामला राजनीतिक है। राजनीतिक लड़ाई कोर्ट में लड़ने के लिए नहीं होता। इसे राजनीतिक मंच से लड़ा जाना चाहिए। सुप्रीम कोर्ट ने यह भी कहा कि जज लोया की मौत पूर्णतः प्राकृतिक है। यह मेडिकल रिपोर्ट से भी साफ है। बावजूद जज लोया के तीन जस्टिस साथियों समेत नागपुर हाईकोर्ट के न्यायमूर्ति की रिपोर्ट को न स्वीकारने का कोई कारण नहीं बनता। यह जनहित याचिका पूर्ण रूप से जजों की निष्ठा पर संदेह का ऐसा मामला है, जिससे आम आदमी का अदालत पर भरोसा कम होगा। ऐसी जनहित याचिका की परंपरा खत्म होनी चाहिए। सुप्रीम कोर्ट ने पूरे मामले में मीडिया रिपोर्ट पर तो कोई टिप्पणी नहीं की, लेकिन सर्वोच्च अदालत की इस पूरे मामले में की गई सख्ती साबित करता है कि पत्रकारिता का इस्तेमाल कैसे राजनीतिक टूल्स के लिए किया गया। हजारों सच को झुठला कर खुद के सच को साबित करने के लिए एक बयान को आधार बनाकर सनसनी पैदा करने की यह परंपरा पत्रकारिता का हित तो कतई नहीं साध सकती।

द वायर

लंबे समय तक 'द हिंदू' के संपादक रहे सिद्धार्थ वरदराजन ने मई 2015 में वेब की दुनिया में अपना कदम रखते हुए 'द वायर' नामक के वेबसाइट को लॉन्च किया। दो साल के अंदर 'वायर' पर अरबों रुपये की सिविल और आपराधिक मानहानि के 11 केस दर्ज हो गए। 'द वायर' के एडिटर इन चीफ सिद्धार्थ वरदराजन अपने वेब पेज पर खुद ही इसका बखान करते हैं। वे खुद लिखते हैं, उन पर अडानी ग्रुप के अलावा भाजपा के राज्य सभा सदस्य और जी ग्रुप के मालिक सुभाष चंद्रा ने भी मानहानि का केस दर्ज कर रखा है। 24 दिसंबर, 2017 को प्रकाशित रिपोर्ट 'the golden touch of Jay Amit Sah' में वायर ने आरोप लगाया था कि मोदी सरकार के आने के बाद भाजपा अध्यक्ष अमित शाह की संपत्ति में 16 हजार गुणा बढ़ी। अमित शाह के बेटे जय शाह ने इस रिपोर्ट को दुर्भावना से प्रेरित बताते हुए अदालत में अपराधिक और सिविल मानहानि का मुकदमा दर्ज करते हुए

शिकायत की कि यह रिपोर्ट सिर्फ उनके पिता की साख को नष्ट करने की साजिश है, जो बिना किसी साक्ष्य के आधार पर है।

जय शाह ने 'द वायर' के खिलाफ सौ करोड़ की मानहानि का मुकदमा ठोंक दिया। अपनी साख बचाने के लिए जय शाह ने जो मुकदमा दाखिल किया उस केस से वेब लड़ाकों की दुनिया में 'द वायर' को वह सनसनी मिली, जिसकी शायद उसे चाह थी। लेकिन, सौ करोड़ की मानहानि का मामला जब सुप्रीम कोर्ट तक पहुंचा तो 'द वायर' के संपादक वरदराजन की परेशानी बढ़ गई। अपने पोस्ट के माध्यम से जनता की दरबार में गुहार लगाने लगे कि उन्हें परेशान किया जा रहा है। खुद संपादक ने बाकायदा एक पोस्ट 'द वायर' पर लिखा कि सत्ता की ताकत के बल पर उन्हें कुचलने का प्रयास किया जा रहा है, लेकिन हम हार नहीं मानने वाले हैं। वायर ने इसके लिए एक मुहिम चलाया जिसमें पत्रकार उर्मिलेश यादव और रवीश कुमार पांडे के संग वायर के ही वरिष्ठ संपादक वेणु ने जय शाह द्वारा मानहानि का केस दर्ज करने को पत्रकारिता पर हमला बताया गया। सवाल यह है कि जो कानून किसी पत्रकार को सवाल उठाने की हैसियत देता है, वही कानून तो एक नागरिक को अपने आत्म सम्मान से जीने का हक देता है। यदि किसी को लगता है कि गलत साक्ष्य के द्वारा किसी मीडिया हाउस ने उनके आत्म सम्मान को ठेस पहुंचाया है तो वे मानहानि का दावा कर सकते हैं। जय शाह ने भारतीय कानून के उसी व्यवस्था के तहत अपनी मानहानि के खिलाफ मामला दर्ज करवाया है। यदि 'द वायर' की खबर में दम है तो मानहानि का मुकदमा गिर जाएगा। यही "द वायर" की असली जीत होगी, लेकिन इसके बदले वह खुद को विक्टेमाइज करने के लिए लगातार जय शाह के बहाने उनके पिता अमित शाह को कठघरे में लेने का प्रयास करता रहा। सवाल यह है कि सत्य सिर्फ एक वेबसाइट बोल रहा है, इसका क्या पैमाना है!

क्या मीडिया को ही सिर्फ किसी पर सवाल उठाने की ठेकेदारी है? आम या खास को यदि लगता है कि उसके ऊपर लगे आरोप गलत हैं और उसे मीडिया नहीं मानता तो पीड़ित को अदालत जाने का अधिकार तो इसी देश के कानून से मिलता है। फिर मीडिया को यह अधिकार कहां से मिलता है कि उसने जो लिख दिया, वही सच है!

अपनी मानहानि को लेकर जय शाह ने अदालत में की शिकायत....

इस लेख में मुझ पर झूठे, अपमानजनक और बदनाम करने वाले इल्ज़ाम लगाए गए हैं, जिससे लोगों के दिमाग में यह बात आए कि मेरी व्यापारिक 'सफलता' की वजह मेरे पिता अमित भाई शाह का राजनीतिक पद है।

मेरे सभी व्यापार पूरी तरह से वैध हैं और व्यावसायिक क़ानून के दायरे में हैं, इस बात की पुष्टि मेरे टैक्स रिकार्ड्स और बैंक ट्रांज़ैक्शन से होती है। मेरे द्वारा एनबीएफसी या नॉन-फंडेड क्रेडिट सुविधा या सहकारी बैंक से लिए गए कर्ज़ पूरी तरह से वाणिज्यिक शर्तों पर क़ानून के अनुसार लिए गए थे। ये कर्ज़ ब्याज की व्यावसायिक दर के अनुसार नियत समय में चेक द्वारा चुका दिए गए हैं। मैंने सहकारी बैंक से क्रेडिट सुविधा लेने के लिए अपनी पारिवारिक संपत्ति गिरवी रखी थी।

मेरे वकील ने मेरे सभी कानूनी लेन-देन की जानकारी इस वेबसाइट के लेखक को दी थी, साथ ही उनके पूछे हर सवाल का जवाब विस्तार से दिया गया था, क्योंकि मेरे पास छिपाने के लिए कुछ नहीं है।

क्योंकि इस वेबसाइट द्वारा एक पूरी तरह तोड़-मोड़कर लिखे गए लेख में बिल्कुल झूठे इल्ज़ाम लगाए गए हैं, जिससे मेरी छवि को नुकसान पहुंचा है, मैंने इस न्यूज़ वेबसाइट के लेखक, संपादक/संपादकों और मालिक/मालिकों के ख़िलाफ़ 100 करोड़ रुपये का मानहानि का मुकदमा दायर करने का फैसला लिया है। यह मुकदमा अहमदाबाद में दायर किया जाएगा, जहां मैं रहता हूं, बिज़नेस करता हूं और जहां ये घटना घटी।

अगर कोई भी इस बताए गए लेख में लगाए गए इल्ज़ामों को दोबारा प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रकाशित/प्रसारित करता है तो वह व्यक्ति/संस्थान भी इसी अपराध/ सिविल लायबिलिटी का दोषी होगा।

जय अमित शाह

2

वायर ने मई 2016 में आरटीआई एक्टिविस्ट पुष्कर शर्मा की रिपोर्ट को अपनी वेब साइट पर छाप दिया। पुष्कर शर्मा ने अपने आरटीआई के हवाले से एक रिपोर्ट तैयार की थी जिसमें भारत सरकार के आयुष मंत्रालय के हवाले से कहा गया था.. वी डॉन्ट रिक्रूट मुस्लिम: मोदी गवर्मेंट, आयुष मिनिस्ट्री। यह खबर 11 मई, 2016 को द मिली गजट नामक पत्रिका में छपी थी, जिसे द वायर ने अपने वॉल पर जगह दी तो हंगामा मच गया। पुष्कर शर्मा की इस रिपोर्ट पर प्रेस काउंसिल ऑफ इंडिया ने स्वत: संज्ञान लिया जिसके बाद जालसाजी की धारा 420, धार्मिक आधार पर शत्रुता को बढ़ावा देने की धारा 153ए, धोखाधड़ी के उद्देश्य से जालसाजी करने की धारा 468 के तहत केस दर्ज कर गिरफ्तार कर लिया। पुष्कर शर्मा की गिरफ्तारी के वाद 'द वायर' ने वह खबर तो हटा ली, लेकिन लगातार उसकी गिरफ्तारी के विरोध में मिली गजट के संपादक और दूसरे पत्रकार के हवाले से रिपोर्ट छापी जिसमें यह दर्शाने का प्रयास किया गया कि भारत सरकार के दबाव में पुलिस ने एक पत्रकार को गिरफ्तार कर पत्रकारिता पर हमला किया है। जबकि, भारत सरकार की दलील थी कि पुष्कर शर्मा ने आरटीआई तो दाखिल किया था, लेकिन उसके जवाब में भारत सरकार के आयुष मंत्रालय साफ कहा था कि किसी भी तरह की बहाली में मजहब का कोई आधार नहीं होता। बावजूद इसकी खबर को मनगढ़ंत तरीके से छापा गया।

14 मई, 2016 दिल्ली पुलिस ने आरटीआई जवाब से कथित तौर पर जोड़-तोड़ कर खबर प्रकाशित करने के आरोप में पत्रकार पुष्कर शर्मा को गिरफ्तार कर लिया। पुष्कर शर्मा ने अपनी रिपोर्ट में दावा किया था कि सरकार मुसलमानों से भेदभाव कर रही है और आयुष मंत्रालय में उनको योग प्रशिक्षक की नौकरी देने से इंकार किया गया। जालसाजी, फर्जीवाड़ा और धर्म-नस्ल के आधार पर विभिन्न समूहों के बीच रंजिश को बढ़ावा देने आदि के आरोपों में दिल्ली पुलिस ने पुष्कर शर्मा को गिरफ्तार कर लिया।

यह खबर 11 मई, 2016 को अंग्रेजी भाषा के पाक्षिक अखबार 'मिल्ली गजट' में रिपोर्ट 'वी डोंट रिक्रूट मुस्लिम: मोदी गवर्नमेंट आय़ुष मिनिस्ट्री की हेडिंग के साथ छपी। आप पढ़ चुके हैं कि द वायर ने उस रिपोर्ट की बिना पड़ताल के

अपने वेब पर जगह दे दी। पुष्कर शर्मा की गिरफ्तारी के बाद उस पोस्ट को हटा लिया गया, लेकिन गिरफ्तारी की खबर को लगातार वेब पर जगह दी गई।

दिल्ली पुलिस ने यह कार्रवाई प्रेस काउंसिल ऑफ इंडिया द्वारा लिए गए स्वतः संज्ञान के बाद की थी। सवाल फिर यही है, एक पत्रकार सरकार की नीतियों को अपने तरीके से पेश कर सरकार की मानहानि करने की हैसियत पा ले, लेकिन उसकी साजिशपूर्ण कहानी के खिलाफ कानून सम्मत कार्रवाई हो तो इसे मीडिया पर हमला का मुद्दा बना दिया जाए!

दिल्ली पुलिस के मुताबिक स्टिंग करने की धमकी देकर सरकारी अधिकारियों से जबरन वसूली की कोशिश के आरोप में शर्मा को 2009 में गिरफ्तार किया गया था। आयुष मंत्रालय ने शर्मा की 'गलत रिपोर्टिंग' की निंदा की थी। उस रिपोर्ट में दावा किया गया था कि भारत सरकार योग शिक्षकों की बहाली के लिए न तो मुस्लिमों का आवेदन लेती है, न ही इस पद के लिए किसी मुस्लिम को चुना जाता है। सरकार ने पुष्कर शर्मा की रिपोर्ट को समाज के विभिन्न तबके के बीच खाई पैदा करने और वैमनस्य बढ़ाने तथा भरोसा खत्म करने के मकसद से तैयार करने का आरोप लगाया था। ऐसी खबरों का पत्रकारिता के किसी भी माध्यम से जोड़ना पेशे की साख को दागदार करता है। यहां तो पहले से ही दागी व्यक्ति की रिपोर्ट को प्रश्रय इसलिए दिया गया, ताकि सरकार के खिलाफ सनसनी पैदा की जा सके। ऐसी खबरों को लेकर यदि मीडिया पर मानहानि हो और उस मानहानि को पत्रकारिता पर हमला बताया जाने लगे तो पत्रकारिता लगातार हमले का शिकार होती रहेगी, कोई बचाव में आएगा, इसकी उम्मीद पालना भी मुमकिन नहीं होगा।

द प्रिंट

अंग्रेजी पत्रकारिता के बड़े नाम हैं शेखर गुप्ता और बरखा दत्त। एनडीटीवी में लंबी पारी खेलने के बाद बरखा दत्त और इंडियन एक्सप्रेस के संपादक पद पर लंबे समय तक पत्रकारिता और भारतीय राजनीति की बारीकियों को समझने के माहिर पत्रकार शेखर गुप्ता ने देश के नामीगिरामी व्यावसायिक समूह टाटा के सहयोग से जनवरी 2016 में वेब की दुनिया में कदम रखते हुए 'द प्रिंट' लॉन्च किया। चारा घोटाले के लगातार चार मामले में अलग-अलग अदालतों से अपराधी साबित हो चुके लालू यादव के प्रति प्रिंट और उसके संपादक शेखर की हमदर्दी काबिले गौर

है। दुर्भाग्य है कि यह हमदर्दी इन पत्रकारों के लिए अदालत की नजर में घोषित अपराधी के लिए भी यूं ही बनी रही। लालू को जब दिसंबर 2017 में तीसरी बार सजा हुई तो द प्रिंट ने अदालत की नजर में घोषित एक अपराधी के प्रति हमदर्दी रखते हुए लिखा.. 'चूंकि अधिकतर क्षेत्रीय दलों में पीढ़ीगत बदलाव आ रहा है, लालू इन दलों की एकता की चाबी हो सकते हैं लिहाजा उन्हें सलाखों पीछे जाना पड़ा। शेखर ने अपने रिपोर्ट की हेडिंग ही बना .....क्या निचली जाति के नेता ज्याद भ्रष्ट होते हैं?

भ्रष्टाचार के मामले में सजायाफ़्ता अपराधी के प्रति हमदर्दी दर्शाते हुए शेखर गुप्ता ने अपनी कलम को यहीं तक नहीं रोका....जब लालू यादव को चारा घोटाला मामले में रांची की अदालत से सजा हुई तो सवाल उठाया कि क्या भ्रष्टाचार की कोई जाति होती है? वो सवाल करने के बाद खुद ही निष्कर्ष पर भी पहुंच गए कि बड़े बड़े मामले का मुल्यांकण तो यही कहता है। द प्रिंट के एडिटर इन चीफ, शेखर गुप्ता ने यह सवाल तब उठाया था जब चारा घोटाला के एक मामले में कोर्ट ने लालू को सजा सुना दी। लेकिन उसी मामले में बिहार के पूर्व मुख्यमंत्री जगन्नाथ मिश्र को बरी कर दिया। इतने नामचीन पत्रकार ने तथ्य पर कोई ध्यान नहीं दिया कि चारा घोटाले का ये वो मामला था जो सीधे लालू के कार्यकाल के दौरान हुआ था बाकी दो में लालू के साथ जगन्नाथ मिश्र को भी सजा हुई। लेकिन शेखर को खबरों से खेलना था भ्रम का महौल बनाना था इसीलिए उन्होंने सवाल किया.. क्या भ्रष्टाचार और अपराध का जाति अथवा संप्रदाय से कोई संबंध होता है? क्या जातियों के क्रम में जो जितना नीचे होता है उतना ही भ्रष्टाचार के मामले से उसके जुड़ने (अथवा उसमें पकड़े जाने) की संभावना ज्यादा हो जाती है? ऐसे सवालों की पड़ताल जरूरी है। क्या ये भाषा और ऐसी व्याख्या किसी पत्रकार की हो सकती है?

शेखर गुप्ता ने अपनी ही खबर से खुद को काटा, लेकिन अपनी चाह के मुताबिक निष्कर्ष पर भी पहुंच गए। उन्होंने 2जी के आरोपी करुणानिधि की बेटी कनीमोली और ए. राजा को दलित होने की सजा बताया जो अदालत से बरी हो गए। सुखराम, जयललिता को ऊंची जाति का बताया जिन्हें सजा हुई। वे खुद कहते हैं मायावती, मुलायम सिंह भ्रष्टाचार के बड़े मामले में आरोपी होने के बाद भी कभी अदालत या थाने का चक्कर तक नहीं लगाए, लेकिन इस मामले में

शेखर को जाति दिखती है। 24 दिसंबर, 2017 को लिखे अपने लेख में शेखर खुद साबित नहीं कर पाए कि वे कहना क्या चाहते थे, लेकिन लालू यादव को अदालत द्वारा दोषी साबित किए जाने पर एक अपराधी के लिए उनकी हमदर्दी इस कदर थी कि पूरे भारतीय क्रिमिनल जस्टिस सिस्टम को जातिवादी करार दिया।

लालू यादव एक समय खुद को किंग मेकर कहते थे। नब्बे के दशक के मध्य का वही काल था जब किंग मेकर की अकड़ में रहने वाले लालू के खिलाफ सीबीआई ने आरोपपत्र दाखिल किया और वे जेल भेजे गए। यह वह दौर था जब लालू की पार्टी के सहयोग से दिल्ली की सरकार चल रही थी। लालू खुद दावा करते थे कि देवेगौड़ा, फिर इंद्रकुमार गुजराल को प्रधानमंत्री उन्होंने ही बनाया। तब से लेकर दो दशक तक लालू का कोर्ट का चक्कर चलता रहा, लेकिन अब वे लालू, चारा घोटाला के दो से ज्यादा मामले में सजायाफ़्ता अपराधी हैं। लालू, हमेशा से अपने चुटीले अंदाज के कारण मीडिया की सुर्खियों में रहते थे, लेकिन अदालत के फैसले के बाद और ढलती उम्र ने लालू के उस अंदाज को अब अतीत की याद बना कर रख दिया। बावजूद इसके वे लालू यादव थे जो मीडिया संग अपने बेहतर संबंधों के कारण कभी भी अभियुक्त की तरह टीवी स्टूडियो में पेश नहीं किए गए। सालों तक भारतीय राजनीति में खुद को किंगमेकर घोषित करने वाले लालू को बेहद नजदीक से जानने वाले किसी पत्रकार को उनकी जाति के आधार पर उसे बेचारा घोषित करना ही चौंकाने वाला नहीं था! अदालत की नजर में दोषी लालू के लिए 'द प्रिंट' और उसके एडिटर इन चीफ की हमदर्दी ऐसी रही. मानो उनके जेल जाने मात्र से देश में मोदी सरकार के खिलाफ खड़ा होने वाले मोर्चा की हवा निकल गई।

'द प्रिंट' ने 2जी मामले में अभियुक्तों के बरी होने और लालू को सजा होने पर लिखा... 'पिछले सप्ताह ही सीबीआई अदालतों ने क्षेत्रीय दलों के नेताओं से जुड़े मामलों में दो फैसले सुनाए। इन फैसलों को सुनाने का समय महत्वपूर्ण है। खासकर उन विपक्षी दलों के लिए, जो 2019 के आम चुनाव से पहले अपना घर ठीक कर रहे थे।'

'द प्रिंट' का दर्द यहीं खत्म नहीं होता! वह आगे लिखता है... 2जी मामलों पर फैसले ने द्रविड़ मुनेत्र कडगम (द्रमुक) खेमे में खुशी की लहर फैलाई। उस पर लगे अछूत के तमगे को अदालत के फैसले ने हटा दिया, लेकिन चारा घोटाले में

लालू को मिली सजा ने पूरे विपक्ष को मायूस कर दिया। यह मायूसी विपक्ष की थी या 'द प्रिंट' की, समझना थोड़ा मुश्किल है। लेकिन, प्रिंट की हमदर्दी लालू के साथ उसकी बेटी मीसा पर आय से अधिक संपत्ति को लेकर मामला दर्ज होने को लेकर भी दिखा, जिसे वेबसाइट ने कोढ़ में खाज की संज्ञा दी।

लालू के अपराध अदालत में साबित होने के बाद भी 'द प्रिंट' की हमदर्दी किस कदर एक अपराधी के प्रति है इस बात से समझा जा सकता है। यह पत्रकारिता का कौन सा मूल्य है? एक सजायाफ़्ता अपराधी के लिए 'द प्रिंट' की हमदर्दी इस बात को लेकर ज्यादा रही कि दूसरी पार्टी के बड़े जैसे नेताओं, सोनिया गांधी, मुलायम, ओमप्रकाश चौटाला और राम विलास पासवान (अब दिवंगत) ने कुल मिलाकर मार्गदर्शक की भूमिका अपना ली है, लालू वह नहीं कर पाए।

लालू पर अपराध साबित होने पर भी 'द प्रिंट' ने इस बात की व्याख्या नहीं की कि लालू का अपराध क्या था? लालू की राजनीति की व्याख्या करने के संदर्भ में शेखर गुप्ता के वेब को यह भी बताना चाहिए था कि लालू के राज को बिहार में जंगल राज क्यों कहा जाता रहा? लेकिन 'द प्रिंट' ने इसकी व्याख्या भी नहीं की कि बिहारी सबसे ज्यादा प्रवासी हुए, वह बिहार के लालू युग की ही बात है। लालू यादव का ही वह दौर था जिसमें बेरोजगार बिहारी रोजगार की तलाश में देश के हर हिस्से में फैल गए। फिर बिहार के बाहर, 'बिहारी' शब्द एक गाली बनता चला गया, लेकिन 'द प्रिंट' ने उनकी व्याख्या पोस्टर ब्वॉय के रूप में की। भारतीय राजनीति में लालू के भविष्य की चिंता करते हुए 'द प्रिंट' ने आगे व्याख्या की...अब भाजपा और नीतीश कुमार ने पिछड़ों और दलितों के वोट में कुछ हद तक सेंध लगा दी है और कोई भी पार्टी अपने दम पर अब सरकार नहीं बना सकती। इसी वक्त विपक्षी दलों को लालू जैसे करिश्माई नेता की जरूरत है। न केवल बिहार, बल्कि उत्तर भारत के दूसरे राज्यों में भी।

सजायाफ्ता लालू के प्रति 'द प्रिंट' वेब की पूरी व्याख्या यह संदेश दे रहा है कि पत्रकारिता का यह स्वरूप एक सजायाफ़्ता अपराधी के लिए किस कदर हमदर्दी रखता है! इस संदेश में संदेह बड़ा है कि पत्रकारिता के पेशे में आखिर ऐसा क्यों होता रहा है।

पांचवा अध्याय

सोशल मीडिया से बदली भारतीय राजनीति

मीडिया, जिसे यह भ्रम था कि वह जो छापेगा और दिखाएगा, वही सच माना जाएगा। मीडिया का यह भ्रम अब भय में बदल रहा है। हर न्यूज चैनल बदलते दौर में कहीं-न-कहीं वायरल सच के बहाने सोशल मीडिया की खबरों की पड़ताल करने लगा है। सोशल मीडिया पर खबरें, मेनस्ट्रीम मीडिया से पहले आने लगीं। हर हाथ में मोबाइल ने समझ-बूझ वाले आम आदमी को अभिव्यक्ति का बड़ा मंच दे दिया जिसके कारण मेनस्ट्रीम मीडिया को अपना वजूद संकट में नजर आने लगा। लेकिन, सोशल मीडिया पर किसी का कोई नियंत्रण नहीं होने के कारण अफवाह का बाजार गर्म होता रहा। यह अलग बात है कि सोशल मीडिया पर झूठ ज्यादा देर तक नहीं फैलाया जा सकता है, लेकिन उससे बड़ा सच है कि फोटोशॉप के सहारे कई बार झूठी खबरों ने सोशल मीडिया की विश्वसनीयता को सवालों के घेरे में रखा है। यही कारण है कि 9 मार्च, 2018 को *इंडिया टुडे* कॉनक्लेव के उद्घाटन-भाषण में *टीवी टुडे* ग्रुप के मुखिया अरुण पुरी ने यूपीए सुप्रीमो सोनिया गांधी के सामने कहते हैं कि सोशल मीडिया दोधारी तलवार है। यह ट्रोल का हथियार है। इसका बढ़ता प्रभाव खतरनाक है। साल 2017 के जुलाई महीने में यकायक एनडीटीवी के मालिक प्रणय राय, जानमाने पत्रकारों संग गृहमंत्री राजनाथ सिंह से नार्थ ब्लॉक के उनके सरकारी दफ्तर में मिलकर शिकायत करते हैं कि सोशल मीडिया का बढ़ता प्रभाव समाज के लिए खतरनाक है। लिहाजा इस पर नियंत्रण जरूरी है।

सन 2013 में दिल्ली में आम आदमी पार्टी की सरकार और मई 2014 में, केंद्र में नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में आजाद भारत की पहली गैर कांग्रेसी पूर्ण बहुमत की सरकार बनाने में सोशल मीडिया की भूमिका की ताकत का अहसास राजनेताओं को हो चुका था। लेकिन, तब मेनस्ट्रीम मीडिया को शायद यह अहसास नहीं था कि सत्ता को हिलाने की जो ताकत सोशल मीडिया ने हासिल कर ली है, वही ताकत लोकतंत्र के चौथे स्तंभ की बुनियाद हिला देगा। लेकिन, बदलते दौर में लुटियन राजनीति और लुटियन पत्रकार दोनों को अब सोशल मीडिया की ताकत का एहसास हो चुका था। एहसास यह भी कि राजनीतिक सत्ता मेनस्ट्रीम मीडिया पर तो नियंत्रण कर सकता है, लेकिन सोशल मीडिया के समर को नियंत्रण करना आसान नहीं था।

अब राजनेताओं से ज्यादा सोशल मीडिया का खौफ मेनस्ट्रीम मीडिया को अंदर तक हिलाने लगा है। मुट्ठी भर पत्रकारों के अंदर, सत्ता संग खेलने और उसकी ताकत में अपनी ताकत का जो एहसास था, वह टूट रहा था। सालों से मीडिया के अंदर सत्ता को हिला देने और उसी सत्ता के अंदर उनकी पैठ, उनके भ्रम को यकीन में बदल दिया था कि वे जो चाहेंगे, वही होगा। बदलते दौर में, लगातार बढ़ती सोशल मीडिया की ताकत का एहसास सरकार को भी हुआ। उस सरकार को, जिसने अपनी सत्ता की ताकत मीडिया को दिया था और उसके बदले मीडिया उसकी दरबारी बन गई।

वह 2004 का दौर था। सत्ता की आदी कांग्रेस लंबा वनवास खत्म कर केंद्र की सरकार में वापस आ गई थी। सरकार में रहे बिना कांग्रेस बिन पानी मछली की तरह थी। कांग्रेस के सत्ता से बाहर रहने के कारण भारतीय मीडिया का एक बड़ा वर्ग सत्ता की संजीवनी की ताकत को भलीभांति समझ चुका था। यह वह दौर था, जब भारत में इलेक्ट्रानिक मीडिया, बॉलीवुडी ग्लैमर सरीखे रोमांच के साथ जवान हो रही थी। चौथे स्तंभ को मिला ये बॉलीवुडी ग्लैमर, टीवी मीडिया को ताकतवर भी बना रहा था। ताकतवर इस कदर कि टीवी के पत्रकार तय करने लगे कि भारत सरकार के प्रधानमंत्री अपने मंत्रिमंडल में किसे मंत्री बनाएं और किसे नहीं। जनता के चुने प्रतिनिधि को मीडिया की ताकत का एहसास होने लगा। नामचीन पत्रकार तय करने लगे कि मनमोहन सरकार के मंत्रिमंडल में मंत्री कौन होंगे! पीछे आप नीरा राडिया टेप की बातचीत में इसे समझ चुके हैं।

गोधरा दंगा को भारतीय मीडिया ने ऐसे पेश किया मानो इससे पहले देश में कभी कोई दंगा हुआ ही नहीं। इसके बाद भी कोई दंगा मीडिया में वह स्थान नहीं पा सका! गुजरात के सोहराबुद्दीन एनकाउंटर और इशरत जहां एनकाउंटर की हर रिपोर्ट की ब्रेकिंग और इसे खबर में बनाए रखने का ठेका मानो कुछ चुनिंदा चैनलों ने ले रखा था। आतंकी होने के बाद भी सोहराबुद्दीन और इशरत को भारतीय मीडिया मीडिया के बड़े वर्ग ने पीड़ित की तरह पेश किया। यह भारतीय मीडिया का नया रूप था। सेकुलरिज्म की नई परिभाषा मीडिया ने तय कर लिया। इतना ही नहीं, सुप्रीम कोर्ट के आदेश को भी टीवी मीडिया ने खबर के रूप में अपने ढंग से ट्विस्ट करना शुरू कर दिया। सोहराबुद्दीन, इशरत एनकाउंटर और गोधरा दंगा से संबंधित हर खबर मीडिया के लिए तय हेड लाइन, गुजरात के तत्कालीन मुख्यमंत्री "मोदी को झटका" के रूप में पेश किया जाने लगा। मोदी को टारगेट करते-करते मीडिया कब उन्हें हीरो बना गई, उसे पता ही नहीं चला। दूसरी तरफ कॉमनवेल्थ घोटाला, 2जी घोटाला, कोयला घोटाला से लेकर कई घोटाले में सरकार के साथ मीडिया के एक वर्ग के शामिल होने का सच सामने आने के बाद सत्ता के भ्रष्टाचार के खेल में मीडिया की हिस्सेदारी सामने आने लगी। लेकिन, वक्त बदल चुका था। फेसबुक और ट्विटर के कारण ये खबरें मर ही नहीं पाईं। गांव-गांव तक सरकार के भ्रष्टाचार की पोल खोलने में सोशल मीडिया ने अहम भूमिका निभाई।

शुरुआत में मीडिया का एक बड़ा वर्ग इन माध्यमों पर खूब सक्रिय रहा। लेकिन, इस सोशल साइट ने जब तेजी से सरकार के अंदर भ्रष्टाचार की सूचना को फैलाने की ताकत आम आदमी को दे दी तो मीडिया की सत्ता को चुनौती महसूस होने लगी। माडिया को पता ही नहीं चला कि उसने कब खबर छुपाने और दिखाने के फैसले की शक्ति को गंवा दिया। सोशल साइट ने सोशल मीडिया का रूप ले लिया और जिसे मीडिया कहा जाता था, उसे मेन स्ट्रीम मीडिया का नाम से दिया जाने लगा, जिसे खबरों की बाजीगरी का गुमान था। फिर मेनस्ट्रीमें मीडिया पर खबर क्या चलेगी, यह सब सोशल साइट की गतिविधि से तय होने लगा? जनता के मिजाज का लिटमस पत्र सोशल मीडिया बन गया, वही तय करने लगा कि जनता देखना क्या चाहती है? कई मीडिया हाउस ने कोशिश की थी कि वह अपनी मर्जी से खबर दिखाएंगे, लेकिन वे मजबूर होते रहे।

पांच साल बाद 2009 में जब कांग्रेस दुबारा केंद्र की सत्ता में आई तो सोशल मीडिया न सिर्फ मध्य वर्ग के घर आंगन में घुस गया, बल्कि मोबाइल फोन के माध्यम से उसके जीवन का हिस्सा बनता चला गया। बीतते वक्त में यूपीए-2 की सरकार के भ्रष्टाचार से त्रस्त जनता ने सोशल साइट के माध्यम से अन्ना आंदोलन को ताकत दी। अन्ना आंदोलन से जुड़े लोगों ने सबसे पहले सोशल मीडिया को ही अपना हथियार बनाया। अरविंद केजरीवाल की टीम में सामाजिक सरोकार से जुड़े युवकों के साथ-साथ टेक्नोक्रेट युवाओं की फौज थी। इस टीम ने जन लोकपाल लागू किए जाने के साथ-साथ केंद्र की सरकार के अंदर के भ्रष्टाचार को सोशल मीडिया पर ऐसे हथियार बनाया कि मेनस्ट्रीम मीडिया की मजबूरी हो गई, उस आंदोलन की 24 घंटे की रिपोर्टिंग! सोशल मीडिया की इसी ताकत ने दिल्ली में आम आदमी की सरकार बना दी।

उसी सोशल मीडिया के दौर में ही इस बात का खुलासा हुआ कि किस तरह मेन स्ट्रीम मीडिया ने 2002 दंगा में गुजरात के मुख्यमंत्री के खिलाफ मुहिम बनाया। फिर नई-नई साजिश को अंजाम दिया। किताब के अलग-अलग हिस्से में आपको विस्तार पूर्वक तथ्यों संग जानकारी दी गई है। सोशल मीडिया ने उस नेता को हीरो बना दिया, जिसे मीडिया दशक से ज्यादा समय से खलनायक बना रखा था। सोशल मीडिया ने आम आदमी को वह मंच दे दिया जो अब तक खास लोगों के पास था। हर किसी को अपना स्क्रीन मिल गया, जहां से अपनी अभिव्यक्ति दुनिया के सामने रख सकता है। इस एहसास ने आम आदमी को लोकतंत्र के एक स्तंभ होने का सम्मान, अधिकार और जिम्मेदारी दे दी। जाति और मजहब के नाम पर रिपोर्टिंग कर मीडिया ने अपने बुनियादी सिद्धांत की हत्या कर दी। आप इसे आगे विस्तार से पढ़ेंगे। सच छुपाने और खबरों को तोड़-मरोड़ कर पेश करने के कारण मेन स्ट्रीम मीडिया ने अपनी वो साख खो दी जो उसकी एकमात्र ताकत होती है। साख खोने से मेन स्ट्रीम मीडिया का पतन होने लगा और सोशल साइट पर उसके लिए #प्रोस्टिट्यूट# और #खबरंडी# जैसे अपमानजनक शब्द प्रयोग किए जाने लगे। मेन स्ट्रीम मीडिया को बेपर्दा करने की सोशल साइट की ताकत ने मीडिया के वजूद को चुनौती दे दी है। अपने वजूद को मिली चुनौती से घबराई मीडिया अब यह शिकायत कर रही है कि सोशल मीडिया बिना खबरों की पुष्टि के भ्रम फैलाने का काम करती है।

अब तो फेसबुक के पोस्ट, स्टेटस और ट्विटर की ट्वीट से खबरें ब्रेक होने हैं और बनने लगी हैं। पहली खबर सोशल मीडिया में फ्लैश होते ही उसे लेकर रिपोर्टर रिसर्च करता है, छानबीन करता है, संबंधित लोगों से बातचीत करता है और फिर पुख्ता खबर अखबारों में जहां प्रकाशित होता है, वहीं न्यूज चैनलों पर प्रसारित होता है। ऐसा इसलिए भी हुआ क्योंकि पिछले एक दशक में यह सामने आया कि किस तरह मीडिया के एक वर्ग ने खबरों को दबाने और दिखाने के लिए सौदा कर लिए। लेकिन, मीडिया के स्वयंभू आज भी यह मानने को तैयार नहीं कि उनकी सत्ता उनके पैरों तले खिसक गई है। वह सोशल साइट के खिलाफ लगातार गृहमंत्री से लेकर राष्ट्रपति तक गुहार लगा रहे हैं। मेनस्ट्रीम मीडिया की यह बेचैनी और सोशल साइट को नष्ट करने की उसकी साजिश उसके वजूद के संकट का भय दिखा रहा है। इसे सलीके से समझने के लिए हम दिल्ली में आम आदमी पार्टी की सरकार के निर्माण की प्रकिया को याद करते हुए समझने की कोशिश कर सकते हैं।

सन 2013 में अल्पमत के बाद 2015 में दिल्ली में प्रचंड बहुमत के साथ आम आदमी पार्टी की सरकार बन गई ! आजाद भारत में यह पहली बार हुआ कि जन आंदोलन से निकलकर बनी एक पार्टी ने विधानसभा के लगभग सभी सीटों पर कब्जा कर विपक्ष को लगभग खत्म कर दिया। किसने सोचा था कि दुनिया इतनी सिमट जाएगी, इतनी कि मानव की मुट्ठी में समा जाएगी। आज इंटरनेट से सूचना और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में सोशल मीडिया के द्वारा वह क्रांति आई है जिसकी कल्पना भी शायद कुछ सालों पहले तक मुश्किल थी। तकनीक से ऐसी क्रांतियां हमेशा ही हुई हैं जिन्होंने मानव सभ्यता की दिशा मोड़ दी हैं, लेकिन सोशल मीडिया ने न सिर्फ भारतीय समाज, बल्कि भारतीय राजनीति को भी हाईटेक कर दिया है।

राजनीति में शुरू से कूटनीति, व्यवहारिकता और प्रोफेशनलिज्म हावी रहता था, लेकिन आज तकनीक हावी है। पहले अस्सी के दशक तक राजनेताओं की एक छवि एवं लोकप्रियता होती थी, जो कि उनके संघर्ष एवं जनता के लिए किए गए कार्यों के आधार पर बनती थी, किंतु आज समां कुछ यूं है कि पेशेवर लोगों द्वारा सोशल मीडिया का सहारा लेकर नेताओं की छवियों को गढ़ा जाता है और उन्हें लोकप्रिय बनाया जाता है। सोशल मीडिया पर नेताओं के फॉलोअर्स की

संख्या ही उसकी राजनीतिक ताकत को प्रमाणित करने लगी है। भारतीय राजनीति में नरेंद्र मोदी, राहुल गांधी या अरविंद केजरीवाल सरीखे नेताओं की लोकप्रियता भी सोशल मीडिया पर उनके फॉलोअर्स तय करने लगी हैं। आज नरेंद्र मोदी के फॉलोअर्स की संख्या बॉलीवुड के किसी सुपरस्टार या भारतीय क्रिकेट के किसी भी स्टार से बहुत बुहत ज्यादा है। इतनी कि किसी भी स्टार, मेगा स्टार या सदी के नायक या महानायक से उनकी तुलना नहीं।

पहले परंपरागत राजनीतिक कार्यकर्ता घर-घर जाकर नेता का प्रचार करते थे और आज आईटी सेल से जुड़े पेशेवर लोग राजनेता और अपने क्लाइंट अर्थात् ग्राहक की छवि आपके सामने प्रस्तुत करते हैं। राजीव गांधी अस्सी के दशक में ही कंप्यूटर तकनीक और इक्कीसवीं सदी की बात करते थे। भारत में चुनावों के लिए पेशेवर लोगों का इस्तेमाल पहली बार राजीव गांधी ने किया था, जब उन्होंने अपनी पार्टी की चुनावी सामग्री तैयार करने और विज्ञापनों का जिम्मा विज्ञापन एजेंसी "रीडिफ्यूजन " को दिया था।

प्रशांत किशोर जैसे लोग बदले दौर में राजनीति के वैज्ञानिक दौर में राजनीतिक दलों के लिए तारणहार बनकर उभरे हैं। सोशल मीडिया और प्रशांत किशोर के तड़के का प्रभाव सबसे पहले 16 मई, 2014 को आम चुनावों के नतीजों के बाद सामने आया, जब नरेंद्र मोदी भारतीय राजनीति के नए शिखर पुरुष बन कर उभरे थे। उसके बाद 2015 के बिहार विधानसभा चुनावों में जिस प्रकार नीतीश कुमार ने कुछ माह पूर्व के लोकसभा चुनावों की तर्ज पर जीत दर्ज की वह एक प्रोफेशनल साइंटिफिक एप्रोच के साथ सोशल मीडिया के रथ पर सवार होकर विजेता के रूप में उभरने की कहानी है।

मोदी की 'चाय पर चर्चा', 'अबकी बार मोदी सरकार' नीतीश के लिए "बिहारी बनाम बाहरी", "बिहार में बहार हो नीतिशे कुमार हो" और अब 'पंजाब में कैप्टन' अमरिंदर सिंह के लिए 'काफी विद कैप्टन' तथा 'पंजाब का कैप्टन' जैसे नारों का सोशल मीडिया पर वायरल हो जाना अपने आप में राजनीति के व्यवसायीकरण तथा सोशल मीडिया की ताकत का एहसास दिलाने के लिए काफी है।

इसका सबसे पहला सफल प्रयोग 2008 में यूएस के राष्ट्रपति चुनावों में बराक ओबामा द्वारा किया गया था। दरअसल, 2007 तक ओबामा अमेरिकी राजनैतिक परिदृश्य में एक अनाम सीनेटर थे, उनकी टीम ने जिस प्रकार डाटाबेस

तैयार किया, 2008 के चुनाव इतिहास बन गए। इन चुनावों के नतीजों पर सोशल मीडिया का इतना अधिक प्रभाव देखने को मिला इन चुनावों को "फेसबुक इलेक्शंस ऑफ 2008" कहा गया। तो यह समझा और कहा जा सकता है कि सोशल मीडिया ने वैश्विक स्तर पर एक क्रांति को जन्म दिया है, एक ऐसा तूफान, जिसमें जो इस तकनीक से जुड़ा, वह पार लग गया और जिसने इस तकनीक को कमतर आंका, पिछड़ गया।

आज सभी भारतीय राजनेता इस बात को समझ चुके हैं, शायद इसीलिए जहां 2009 तक शशि थरूर ही एकमात्र नेता थे, जो सोशल मीडिया पर सक्रिय थे, वहीं पांच साल बाद 2014 में केंद्र में मोदी सरकार और दिल्ली में आम आदमी पार्टी की सरकार की भूमिका के बाद 2018 आते-आते शायद ही कोई क्षेत्रीय या राष्ट्रीय नेता है जिसका फेसबुक और ट्विटर अकाउंट न हो।

पूर्व की सूचना की क्रांतियों की बात करें तो रेडियो को जन-जन तक पहुंचने में 38 साल लगे थे, टीवी को 14 साल, इंटरनेट को चार साल और फेसबुक को केवल नौ महीने (यह आंकड़े विकिपीडिया के आधार पर हैं)।

फरवरी 2015 के दिल्ली विधानसभा चुनावों के नतीजे भारतीय लोकतांत्रिक व्यवस्था में मील के पत्थर साबित हुए, जब आम आदमी पार्टी ने जीत के सभी रिकॉर्ड ध्वस्त कर दिए थे। इन नतीजों ने राजनीति में सोशल मीडिया की मौजूदगी को मजबूती प्रदान की थी। चुनाव का अधिकांश युद्ध फेसबुक और ट्विटर पर चला। दिल्ली में लगभग 13 मिलियन रजिस्टर्ड वोटर थे जिनमें लगभग 12.15 मिलियन ऑनलाइन थे। सोशल मीडिया की ताकत का अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि 15 अप्रैल, 2014 को आम आदमी पार्टी के संस्थापक अरविंद केजरीवाल ने ट्वीट किया कि राहुल और मोदी से लड़ने के लिए ईमानदार पैसा चाहिए, दो दिन में एक अपील पर एक करोड़ रुपये जमा हो गए।[1]

सोशल मीडिया आम आदमी और राजनेता दोनों के लिए एक लिंक बनकर उभरा है, जहां एक तरफ चुनाव प्रचार के लिए प्रिंट मीडिया और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के ऊपर राजनैतिक दलों की निर्भरता खत्म हुई, वहीं दूसरी तरफ आम आदमी को अपनी बात राजनेताओं तक पहुंचाने का एक सशक्त एवं प्रभावशाली माध्यम मिल गया। जो आम आदमी अपनी अभिव्यक्ति की जड़ें तलाशने में लगा था, उसे फेसबुक ट्विटर और वाट्सअप ने अपने विचारों को प्रस्तुत करने की न

सिर्फ आजादी प्रदान की, बल्कि एक मंच भी दिया जिसके द्वारा उसकी सोच देश के सामने आए।

सोशल मीडिया का सबसे बड़ा योगदान हमारे देश की आधी आबादी (महिलाएं) एवं हमारी युवा पीढ़ी को राजनीति से जोड़ने का रहा, क्योंकि इन दोनों ही वर्गों के लिए राजनीति हमेशा से ही नीरस विषय रहा है, लेकिन आज फेसबुक और अन्य माध्यमों से यह दोनों ही वर्ग न सिर्फ अपनी मौजूदगी दर्ज करा रहे हैं, अपितु अपने विचार भी रख रहे हैं।

18 से 22 वर्ष के वोटर, जो पहले अपने परिवार की परंपरा के आधार पर वोट डालते थे, आज उनकी खुद की सोच है। पसंद-नापसंद है। ट्विटर और फेसबुक के पेज शख्सियत केंद्रित है, न कि विचारधारा केंद्रित। पार्टी ब्रांड से ज्यादा व्यक्ति पर आधारित है, इसका सबसे बेहतरीन उदाहरण पिछले लोकसभा चुनावों में नरेन्द्र मोदी बनाम राहुल गांधी के बीच देखने को मिला था।

सोशल मीडिया का यह प्रभाव केवल राजनीतिक परिदृश्य में देखने को नहीं मिला। सामाजिक क्षेत्र में जो जागरूकता आई है, वह भी कम नहीं है। सितंबर 2014 में जब कश्मीर में बाढ़ की अब तक की सबसे बड़ी विभीषिका हो या अगस्त 2017 में केरल में बाढ़ से सौ साल की सबसे बड़ी तबाही का दर्द, सोशल मीडिया का जो रूप उभर कर आया, उसने आम आदमी के समाज में योगदान को नए आयाम दिए। जहां तक मेनस्ट्रीम मीडिया की पहुंच नहीं हो सकी, सोशल मीडिया ने वहां तक अपनी पहुंच बनाकर न सिर्फ लोगों के दर्द को सामने रखा, बल्कि सरकार और स्वयंसेवी संस्थाओं को राहत के लिए वहां तक पहुंचने के लिए प्रेरित किया।

बदलते वक्त में 'नरेंद्र मोदी एप' के माध्यम से पीएम मोदी जनता से सीधा संवाद कर सकते हैं। पूर्व रेलमंत्री सुरेश प्रभु ने देश के नागरिकों से सीधा संवाद स्थापित करने की शुरुआत की थी। रेलवे बॉगी से अपनी समस्या की शिकायत ट्वीट करते ही उसके समाधान के हजारों मामले ने आम आदमी का लोकतांत्रिक सरकार में भरोसा बढ़ाया। तब की विदेश मंत्री सुषमा स्वराज (अब दिवंगत) ने हमारे देश के एनआरआई के लिए स्वयं को सहज उपलब्ध कराया, वह हमारे अनेक नेताओं के लिए अनुकरणीय हो सकता है।

सोशल मीडिया और कानून व्यवस्था का मसला

इस मसले पर हर किसी का अपना नजरिया है। सोशल मीडिया ने आम आदमी को अभिव्यक्ति की आजादी का एक ऐसा मंच दिया जिसकी हाल के वर्षों तक कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। मेन स्ट्रीम मीडिया के लिए यह कई बार चुनौती बन कर सामने आया, क्योंकि यह दो-तरफा संवाद का एक नायाब जरिया साबित हुआ। लेकिन, अतिवादी लोगों की भीड़ द्वारा अफवाह फैलाकर समाज के सद्भाव को खराब करने के कई ऐसे मामले सामने आए जिसके कारण सोशल मीडिया का वजूद कई बार खतरे में आया। कई राज्य सरकारों ने कानून-व्यवस्था के नाम पर अनेकों बार जिला स्तर पर या राज्य स्तर पर भी सोशल मीडिया पर पर हफ्तों तक लगाम इसलिए लगाया, ताकि बिगड़े हालात में अफवाह के बाजार को सोशल मीडिया उत्तेजित कर स्थिति को नियंत्रण के बाहर न कर दे। राज्य सरकारों का यह फैसला अक्सर प्रदेश की शांति व्यवस्था के लिए निर्णायक रहा है।

सोशल मीडिया पर अतिवादी तत्वों के नियंत्रण के लिए शासन के दखल को जायज ठहराने की दलीलों से इतर इस मंच पर सक्रिय जमात इसे अभिव्यक्ति की आजादी पर कुठाराघात बताते रहे हैं, जबकि सामाजिक सरोकारों से जुड़े लोग मर्यादा की चारदीवारी तय करने में लगे हैं। कानून विशेषज्ञों का कहना है कि आईटी कानून के मौजूद होते हुए आईपीसी जैसे दूसरे कानूनों को हथियार क्यों बनाया जा रहा है? अगर ऐसा करना प्रशासन की मजबूरी है तो क्या यह नहीं माना जाए कि आईटी कानून निष्प्रभावी और कमजोर है।

हाल के वर्षों में धार्मिक और जातीय उन्माद फैलाने और सरकार के खिलाफ माहोल बनाने के आरोप में पुलिस ने सोशल मीडिया यूज़र के खिलाफ जो सक्रियता दिखाई है उससे देश भर में यह संदेश गया है कि सोशल मीडिया पर सक्रिय लोगों को टारगेट किया जा रहा है। गौरतलब है कि इन मामलों में आईटी कानून का शिकंजा काम नहीं आया, बल्कि अपराध कानून और जनप्रतिनिधित्व कानून को ढाल बनाकर मुखर विरोध को दबाने का सख्त संदेश दिया गया है। पुलिस की दलील है कि ऐसे मामलों में एहतियातन गिरफ्तारी करनी पड़ती है जिससे संदिग्ध आरोपी से पूछताछ कर सांप्रदायिक दंगा भड़काने या देश की सुरक्षा को खतरा पैदा करने जैसी साजिशों का पता लगाया जा सके।

आईटी मामलों के जानकार पवन दुग्गल का मानना हैं कि भारत में सोशल मीडिया का इस्तेमाल समाज के हर तबके से जुड़े लोग कर रहे हैं। इनमें अधिकांश लोग ऐसे स्मार्टफोन धारक हैं जो इसकी संवेदनशीलता से अंजान हैं और सिर्फ दूसरों की देखादेखी फेसबुक और ट्विटर पर सक्रिय हैं। इनके लिए यह विचारों की अभिव्यक्ति का यह खुला मंच है जिस पर किसी का कोई नियंत्रण नहीं है। ऐसे में आईटी कानून से अनभिज्ञ इन लोगों से अभिव्यक्ति की आजादी की सीमाओं का पालन करने की उम्मीद करना बेमानी है। सरकार को चाहिए कि इसकी बढ़ती लोकप्रियता के समानांतर उन कानूनी उपायों के प्रति भी लोगों को जागरूक करे जिनका इस्तेमाल विचारों के सैलाब को बेकाबू होने से रोकने में किया जा सकता है।

पवन दुग्गल का मानना है बदले हालात में भले ही सोशल मीडिया ने आम आदमी को बड़ी ताकत दी है, लेकिन इस पर नियमन की जरूरत है और इस संबंध में कानून बनने चाहिए। पवन दुग्गल के मुताबिक भारत को भी चीन जैसी कार्य नीति अपनानी चाहिए और सोशल मीडिया को भारतीय कानूनों के अंतर्गत लाना चाहिए। [2] पवन दुग्गल ऐसा इसलिए मानते हैं, क्योंकि हर वेबसाइट की दलील है कि हम भारत के बाहर हैं और भारतीय कानून को मानने को बाध्य नहीं हैं। लिहाजा आपको जो करना है आप कीजिए, हमें जो करना है हम करेंगे। दूसरी ओर चीन ने इन कंपनियों को साफ कर रखा है कि आपको चीन में आना है तो चीन के कानून के मुताबिक काम करना होगा। भारत में सोशल मीडिया इसीलिए अनियंत्रित है, क्योंकि यह भारतीय कानून के दायरे में नहीं है। इसीलिए अफवाहों का बाजार जब सोशल मीडिया गर्म करता है तो सरकार उस पर नियंत्रण नहीं कर पाती। जबकि, ट्विटर और फेसबुक के लिए भारत इतना बड़ा बाजार है कि वे भारत की शर्तो को नजरअंदाज नहीं कर सकते। देश के कानून व्यवस्था को तबाह करने के हिस्सेदार वेबसाइटों पर नियंत्रण सरकार की जिम्मेदारी है। कई बार सरकार ने कई वेबसाइटों पर कार्रवाई कर अपनी जिम्मेदारी निभाई है। लेकिन, इसके लिए एक ठोस कानून इसलिए जरूरी है, ताकि अभिव्यक्ति की आजादी के नाम पर देश की कानून व्यवस्था से कोई खिलवाड़ न कर सके।

सोशल मीडिया एक तरह से दुनिया के विभिन्न कोनों में बैठे उन लोगों से संवाद है जिनके पास इंटरनेट की सुविधा है। इसके जरिये ऐसा औजार पूरी दुनिया के लोगों के हाथ लगा है, जिसके जरिये वे न सिर्फ अपनी बातों को दुनिया के

सामने रखते हैं, बल्कि वे दूसरी की बातों सहित दुनिया की तमाम घटनाओं से अवगत भी होते हैं। यहां तक कि सेल्फी सहित तमाम घटनाओं की तस्वीरें भी लोगों के साथ शेयर करते हैं। इतना ही नहीं, इसके जरिये यूजर हजारों हजार लोगों तक अपनी बात महज एक क्लिक की सहायता से पहुंचा सकता है। अब तो सोशल मीडिया सामान्य संपर्क, संवाद या मनोरंजन से इतर नौकरी आदि ढूंढ़ने, उत्पादों या लेखन के प्रचार-प्रसार में भी सहायता करता है।

सोशल मीडिया ने हमारी जिंदगी बदल दी

पिछले दो दशकों में इंटरनेट का प्रभाव हम पर इस कदर हावी हुआ कि इसने हमारी जीवनशैली को ही बदल दिया है। बदलते दौर में हमारी जरूरतें, कार्य प्रणालियां, अभिरुचियां और यहां तक कि हमारे सामाजिक मेल-मिलाप और संबंधों का सूत्रधार भी काफी हद तक कंप्यूटर ही हो गया है। सोशल नेटवर्किंग या सामाजिक संबंधों के ताने-बाने को रचने में कंप्यूटर की भूमिका आज भी किस हद तक है, इसे इस बात से जाना जा सकता है कि आप घर बैठे दुनिया भर के अनजान और अपरिचित लोगों से संबंध बना रहे हैं। ऐसे लोगों से आपकी गहरी छन रही है, अंतरंग संवाद हो रहे हैं, जिनसे आपकी वास्तविक जीवन में अभी मुलाकात नहीं हुई है। इतना ही नहीं, यूजर अपने स्कूल और कॉलेज के उन पुराने दोस्तों को भी अचानक खोज निकाल रहे हैं, जो आपके साथ पढ़े, बड़े हुए और फिर धीरे-धीरे दुनिया की भीड़ में कहीं खो गए। मैं व्यक्तिगत रूप से मानता हूं कि चालीस पार के उम्र मैं रोज अपने उन दोस्तों के समूह संग संवाद कर पाता हूं यह असंभव सा काम सोशल मीडिया के कारण ही संभव हो पाया। फेसबुक ने उन साथियों को ढूंढ़ने में हमें मदद की, जिसके साथ हम क्लास रूम में अपना टिफिन और बेंच शेयर करते थे। वाट्सप ग्रुप आज हमारे लिए स्कूल के क्लास रूम सरीखे हैं। अपनों से जुड़ने की ये सोशल मीडिया की वह ताकत है जिसकी कल्पना बीते वर्षों में संभव नहीं था।

दरअसल, इंटरनेट पर आधारित संबंध-सूत्रों की यह अवधारणा यानी सोशल मीडिया को संवाद मंचों के तौर पर माना जा सकता है, जहां तमाम ऐसे लोग जिन्होंने वास्तविक रूप से अभी एक-दूसरे को देखा भी नहीं है, एक-दूसरे से बखूबी परिचित हो चले हैं। वहीं, दशकों से समयांतराल में गुम लोग बचपन और युवा काल के संगी-साथी से जुड़ पाने के अकल्पनीय सुख का एहसास कर पा रहे

हैं। इस मंच पर, अतीत की सुनहरी यादें, आपसी सुख-दुख, पढ़ाई-लिखाई, मौज-मस्ती, काम-धंधे सहित सपनों की भी बातें होती हैं।

दुनिया के दो अहम सोशल नेटवर्किंग साइट्स फेसबुक और ट्विटर जिसका मुख्यालय अमेरिका में है, पूरी दुनिया पर राज कर रहा है। फेसबुक की स्थापना 2004 में हार्वर्ड विश्वविद्यालय के छात्रों ने की थी। शुरुआत में इसका नाम फेसमाश था और जुकरबर्ग ने इसकी स्थापना विश्वविद्यालय के सुरक्षित कंप्यूटर नेटवर्क को हैक करके किया था। हार्वर्ड विवि में उन दिनों छात्रों के बारे में बुनियादी सूचनाएं और फोटो देने वाली अलग से कोई डायरेक्ट्री नहीं थी। कुछ ही घंटों के भीतर जुकरबर्ग का प्रयोग लोकप्रिय हो गया, लेकिन विवि प्रशासन ने इस पर गहरी आपत्ति जताई और जुकरबर्ग को विवि से बाहर का रास्ता दिखा दिया गया और उसके बाद फेसबुक ने क्या मुकाम हासिल किया, यह किसी से छुपा नहीं है।(3)

नेटवर्किंग की प्रसिद्ध कंपनी सिस्को ने दुनिया के 18 देशों में कॉलेज जाने वाले युवाओं में इस बात को लेकर कुछ वर्ष पहले एक अध्ययन किया था कि वे अपने संभावित कार्यालय में क्या-क्या चाहते हैं। भारत में 81 प्रतिशत युवाओं ने कहा कि वे लैपटॉप, टैबलेट या स्मार्टफोन के जरिये ही काम करना पसंद करेंगे।

ट्विटर इस दुनिया में 21 मार्च, 2006 को आया और तब से लेकर आज तक यह नित्य नई बुलंदियों को छू रहा है। पहले ट्विटर को केवल कंप्यूटर में प्रयोग किया जा सकता था, लेकिन अब यह टैबलेट, स्मार्टफोन आदि में भी डाउनलोड किया जा सकता है। फेसबुक से अलग ट्विटर को विशेष रूप से मारक कटाक्ष और कम शब्दों में खबर देने के लिए इस्तेमाल किया जा रहा है। हाल तक सिर्फ 140 शब्दों में लिखने की सुविधा थी, लेकिन पिछले दिनों इस पर लिखने की शब्द-सीमा को बढ़ाया गया है। ट्विटर के लिए अभी तक सत्तर हजार से भी अधिक प्लेटफार्म पर अलग-अलग एप्लिकेशंस बन चुकी हैं।

2011 में अरब में हुए आंदोलन में मीडिया खासकर इंटरनेट, मोबाइल तकनीक के अलावा फेसबुक और ट्विटर ने अहम भूमिका निभाई। लीबिया और सीरिया में भी यही हाल रहा। इन आंदोलनों के बाद इंटरनेट सेंसरशिप की प्रवृति जिस कदर बढ़ी है, वह शायद ही कभी देखने को मिली। इसके पक्ष में भले ही बहस की जाती रही, लेकिन हकीकत यह है कि अलग-अलग देशों में सेंसरशिप अपने विभिन्न अवतारों में मौजूद है। इंटरनेट पर नियंत्रण करने के लिए कहीं इंटरनेट को

ब्लॉक किया गया तो कहीं कॉपीराइट, मानहानि, उत्पीड़न और अवमानना को हथियार बनाया जा रहा है।

अमेरिका में इंटरनेट को सेंसर करने के लिए अमेरिकी कांग्रेस के सामने कुछ वर्ष पहले 'सोपा' और 'पीपा' नामक विधेयक लाया गया था और इसके विरोध स्वरूप अंग्रेजी विकिपीडिया कुछ वक्त के लिए गुल की गई थी। इंटरनेट पर निगरानी रख रही संस्थानों का दावा है कि सिर्फ अमेरिका में ही नहीं, बल्कि पूर्व एशिया, मध्य एशिया और मध्य-पूर्व और उत्तरी अफ्रीका ऐसे क्षेत्र हैं, जहां सरकार द्वारा इंटरनेट को सख्त किया जा रहा है। 2010 में ओपन नेट इनिशियेटिव ने विश्व के कुल 40 देशों की लिस्ट जारी की थी, जहां की सरकारें इंटरनेट फिल्टिरिंग कर रही हैं। वहीं, संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार परिषद ने इंटरनेट स्वतंत्रता संबंधी प्रस्ताव 5 जुलाई, 2012 को पारित कर दिया था और परिषद ने सभी देशों से नागरिकों की इंटरनेट पर अभिव्यक्ति की आजादी को समर्थन देने की अपील की थी।(4)

अंकुश लगाने के बाद भी लगातार बढ़ती जा रही है ताकत

अभिव्यक्ति की आजादी का बेहतरीन मंच बन चुका सोशल मीडिया कई बार सामाजिक तानेबाने को बिखेरने की भूमिका में आ जाता है। देश के किसी हिस्से में मजहबी दंगे हों या कश्मीर घाटी में अलगाववादी गतिविधियां, सामाजिक ताना-बाना बिगाड़ने वाले लोग सोशल मीडिया का सहारा लेते हैं। एक ओर जहां अभिव्यक्ति के तमाम विकल्प सामने आ रहे हैं, वहीं इस पर अंकुश लगाने की प्रक्रिया भी पूरे विश्व में किसी-न-किसी रूप में मौजूद है। जहां कहीं भी सरकार को आंदोलन का धुआं उठता दिखाई देता है, तुरंत सरकार की नजर सोशल मीडिया के विभिन्न प्लेटफार्म पर जाती है और सीधे तौर पर अंकुश लगाने से नहीं हिचकती। गौरतलब है कि ये सोशल मीडिया के प्लेटफार्म सिर्फ व्यक्तिगत जानकारियों के लिए ही प्रयोग में नहीं लाए जाते, बल्कि राजनीतिक और सामाजिक मामलों में लोगों की रुचि का भी काम करते हैं।

राजधानी दिल्ली में 2012 में हुए गैंग रेप को देश कभी नहीं भूल सकता। इस घटना ने पूरे भारत को हिला कर रख दिया। पूरे देश ने देखा, कैसे लाखों लोग दोषियों को सजा दिलाने के लिए भारत की संसद के सामने एकजुट होकर उठ खड़े हुए थे। बिना किसी नेता के नेतृत्व में ऐसा आंदोलन इससे पहले देश में कभी देखा नहीं गया। हजारों की भीड़, देश के हाई सिक्योरिटी जोन, संसद भवन और

राष्ट्रपति भवन के सामने बिना हिंसक हुए आंदोलित होकर भारत सरकार को घुटने के बल ला दिया। जन आंदोलन को देखते हुए सरकार ने बलात्कार के मामले में दोषियों पर सख्त कारवाई के लिए ठोस कानून बनाए। नाबालिगों के खिलाफ अपराध पर सख्ती लिए पॉस्को जैसे कठोर कानून बनाए। हत्या और बलात्कार जैसे गंभीर अपराध में नाबालिग होने की उम्र सीमा को अठारह साल से घटा कर सोलह साल कर दिया गया। इसकी एक खास वजह यह थी कि 16 दिसंबर के दिल्ली गैंग रेप मामले का मुख्य अभियुक्त 18 साल से कम होने के कारण ही जेल के बदले बाल सुधार गृह भेजा गया। पुराने कानून के मुताबिक उस बेहद घिनौने अपराध में भी उसे 3 साल से ज्यादा की सजा नहीं हो सकती थी। तीन साल की सजा पूरी करने पर वह रिहा कर दिया गया। आम आदमी में आक्रोश इसी बात को लेकर था जो सोशल मीडिया के कारण सामने आया। सरकार वह हिम्मत नहीं जुटा पाई कि दिल्ली में इंटरनेट सेवा बंद कर दे, क्योंकि सरकार को पता था कि यह आंदोलन किसी मजहब, जाति, समुदाय या प्रांत के नाम पर नहीं, बल्कि पूरी व्यवस्था के खिलाफ था। इस आंदोलन को पूर्णतः सोशल मीडिया ने शुरू किया और अंजाम तक पहुंचाया। इसी आंदोलन ने सही मायने में अन्ना आंदोलन को ताकत दी, क्योंकि देश में सरकार और व्यवस्था को लेकर भयंकर गुस्सा था। इस गुस्से को जारी रखने में सोशल मीडिया ने बड़ी भूमिका निभाई थी।

इतना ही नहीं, 2014 के लोकसभा चुनाव में सोशल मीडिया की पूरी ताकत देखने को मिली। हालांकि, अमेरिका में बराक ओबामा सोशल नेटवर्किंग साइट्स की ताकत का लोहा पहले ही दिखा चुके थे। भारत में नरेंद्र मोदी ने इसका भरपूर उपयोग किया और इसका फायदा भाजपा को भी मिला। नरेंद्र मोदी भले ही पूरे चार सौ से अधिक संसदीय क्षेत्र का दौरा किया, लेकिन उन्होंने फेसबुक, ट्विटर और यू-ट्यूब के जरिये जिस तरह लोकप्रियता हासिल की, वह एक नया इतिहास है। लोग उनके फेसबुक पर पोस्ट की गई बातों और तस्वीरों को पोस्ट करते, प्रतिक्रिया देते और उनकी लोकप्रियता में चार चांद लगाते रहे। आज हालात ये हैं कि सोशल मीडिया पर मोदी के फॉलोअर्स की संख्या को टक्कर देने वाला कोई राजनेता दूर-दूर तक नहीं ठहरता। ग्लैमर के दुनिया के बॉलिवुडी चमकते सितारे व स्टारडम की ठसक वाले क्रिकेटरों की चमक भी सोशल मीडिया पर मोदी के सामने फीकी नजर आती है। आज तक की एक रिपोर्ट के मुताबिक जून 2017

में विराट कोहली, सलमान खां को पीछे छोड़ते हुए सोशल मीडिया के सबसे बड़े स्टार हो गए थे, लेकिन वे नरेंद्र मोदी से काफी पीछे थे। विराट के फॉलोअर्स की संख्या सलमान को पीछा छोड़ते हुए साढ़े तीन करोड़ पार कर गई, वहीं नरेंद्र मोदी के फॉलोअर्स सवा चार करोड़ से ज्यादा थे। क्रिकेटरों को भगवान मानने और सिने स्टार के दीवाने भारतीयों के बीच कोई राजनेता इतना लोकप्रिय हो, यह अकल्पनीय था। सोशल मीडिया ने लोकप्रियता के नए पैमाने के सच को सामने लाकर रख दिया। यही कारण है कि बदलते दौर में राजनेता की जनता में लोकप्रियता का पैमाना सोशल मीडिया बन चुका है। मेनस्ट्रीम मीडिया में अपनी चमक बनाने के लिए जद्दोजहद करने वाले नेता जान गए हैं कि जनता की असली मीडिया अब दरअसल सोशल मीडिया हो चुकी है।

कांग्रेस पार्टी और गांधी परिवार के निकट रहे वरिष्ठ पत्रकार, पद्मश्री राजदीप सरदेसाई, न्यूज लॉन्ड्री के लिए मधु त्रेहान को दिए इंटरव्यू में स्वीकरते हैं कि राहुल गांधी जनता से नहीं जुड़ पा रहे हैं उसकी एक वजह उनका सोशल मीडिया से परहेज भी है। राजदीप के मुताबिक एक बार उन्होंने जब राहुल से यह जानना चाहा कि वे क्यों सोशल मीडिया से दूर हैं, जबकि नरेंद्र मोदी ने इसे ही अपनी ताकत बना रखी है? जवाब में राहुल ने कहा कि वह आभासी दुनिया के बदले अनुभूति की दुनिया में रहकर व्यक्ति-दर-व्यक्ति जुड़े रहने में भरोसा रखते हैं। राहुल गांधी की यह दलील देश की सबसे पुरानी राजनीति पार्टी की अपनी योजना हो सकती है, लेकिन आज की तारिख में चुनावी जीत के चाणक्य माने जाने वाले भाजपा के पूर्व राष्ट्रीय अध्यक्ष अमित शाह के बारे में कहा जाता है कि वह किसी उम्मीदवार को लोकसभा या विधानसभा के उम्मीदवार के रूप में योग्य मानने के लिए सोशल मीडिया में उसके फॉलोअर्स को एक बड़ा पैमाना मानते हैं। यही बदलते दौर की राजनीति है। [6]

यही कारण है कि राष्ट्रीय से लेकर क्षेत्रीय स्तर के नेता के पास अपना सोशल मीडिया टीम है जो उनके प्रमोशन का काम करती है। आम आदमी अपनी मीडिया के माध्यम से इसका टेस्ट करने में सक्षम हैं। कि सोशल मीडिया पर किए गए प्रमोशन में ही मोशन है। यही जनता की मीडिया की असली ताकत है।

सोशल मीडिया के इस दौर में 2014 उत्तराखंड में आई भीषण त्रासदी हो या फिर अप्रैल 2015 में नेपाल और बिहार में आए भूकंप, तमाम अखबार और टीवी

चैनलों ने खबरें जानने और प्रसारण करने के लिए सोशल मीडिया का सहारा लिया। यहां तक कि मेन स्ट्रीम मीडिया के माध्यमों में जो तस्वीरें या वीडियो दिखाए गए, वे इन्हीं सोशल मीडिया से लिए गए थे। तब तो प्रधानमंत्री सहित केंद्र सरकार के तमाम मंत्री प्रेस कांफ्रेंस करना तक भूल गए हैं और वे लोगों को तमाम जानकारी सोशल मीडिया के तमाम प्लेटफार्म के जरिये दे रहे हैं। गौरतलब है कि सालों से प्रधानमंत्री के सरकारी विमान से यात्रा करते हुए खास होने का एहसास पाले मीडिया मुगलों के विशेषाधिकार को भी नरेंद्र मोदी ने खत्म कर दिया। अब प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी अपने विदेशी प्रवास पर किसी मीडियाकर्मी को नहीं ले जाते, लेकिन उनके फेसबुक और ट्विटर एकाउंट पर दी गई जानकारी और फोटो सुर्खियां बनती हैं। सभी टीवी चैनल और अखबार प्रधानमंत्री के आधिकारिक सोशल मीडिया प्लेटफार्म के सहारे पाई खबरों को आमजन तक पहुंचाते हैं। इससे खबरों की पारदर्शिता और पुख्ता होने का भरोसा हमेशा कायम रहता है। यदि किसी खबर को तोड़ा-मरोड़ा जाता है तो प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी एप पर तथ्यों संग यह बात रख दी जाती है। ये बातें फिर फेसबुक के माध्यम से भी आमजन तक पहुंच जाती हैं। ऐसे में सोशल मीडिया पर लोकप्रिय किसी राजनेता या अभिनेता में यह भय खत्म होने लगता है कि मेनस्ट्रीम मीडिया उसकी साख खराब कर सकती है।

सोशल मीडिया के प्रभाव को देखते हुए दूसरे राजनीतिक दल भी यह फार्मूला अपनाने लगे हैं। यदि किसी भी राजनीतिक दल को यह लगता है कि मेनस्ट्रीम मीडिया उसकी खबरों को गलत ढंग से पेश कर रही है तो इस पर प्रेस कांफ्रेंस करना जब जरूरी समझती है तो करती है, वरना सोशल मीडिया पर अपना पक्ष तत्काल रख देती है।

बदलते दौर में यह सिर्फ केंद्र सरकार या राष्ट्रीय राजनीतिक दल की कार्य पद्धति नहीं है, बल्कि राज्यों में पक्ष और विपक्षी नेताओं की नोकझोंक भी इन्हीं सोशल मीडिया के विभिन्न प्लेटफार्म पर चलती रहती है। यहां तक कि किसी खिलाड़ी के मैच या पदक जीतने पर तमाम नेता सोशल मीडिया के माध्यमों से बधाई देते हैं फिर वह खबरें तमाम मीडिया में सुर्खियां पाती हैं। किसी फिल्म का फर्स्ट लुक भी अब इन्हीं सोशल मीडिया में पहली बार आता है। फिल्म अभिनेता और निर्माता अपनी फिल्मों का प्रचार-प्रसार के लिए इन्हीं माध्यमों का सहारा लेते हैं। इसके अलावा अपनी व्यक्तिगत जानकारियां और तस्वीरें भी यहां पोस्ट करते

हैं। इतना ही नहीं, किसी अखबार में उनके बारे में या फिर कोई और जानकारी प्रकाशित होने पर वे विरोध भी दर्ज कराते हैं। मसलन, दीपिका पादुकोण और उनके अंगों को लेकर टाइम्स ऑफ इंडिया में प्रकाशित खबरों को लेकर दीपिका पादुकोण ने कैसी प्रतिक्रिया जाहिर की थी और सोशल मीडिया पर कैसी लताड़ लगाई थी, यह किसी से छुपी हुई नहीं थी। वहीं, दीपिका की फिल्म 'माई च्वाइस' का यूट्यूब पर प्रसारण और फिर इसके बाद सामाजिक परिदृश्य में पक्ष और विपक्ष में बहस ज्यादा पुरानी नहीं है।

सोशल मीडिया किस तरह आम लोगों की आवाज बनकर सामने आ रहा है, इसका अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि 24 फरवरी, 2018 को बॉलीवुड की अभिनेत्री श्रीदेवी की मौत पर जब न्यूज चैनलों ने खबरों को 24 घंटे सिर्फ श्रीदेवी पर केंद्रित कर दिया तो सोशल मीडिया पर जम कर प्रतिक्रिया शुरू हो गई। सोशल मीडिया की प्रतिक्रिया को ध्यान में रखकर कई चैनलों ने सफाई दी कि हमने सिर्फ खबर दिखाई। श्रीदेवी की मौत को बेच कर पत्रकारिता का सौदा नहीं किया। सोशल मीडिया पर मीडिया के एक पक्ष का मजाक बनने पर दूसरे पक्ष का सामने आना साबित करता है कि मीडिया लिटमस पत्र के माध्यम से सोशल मीडिया पर जनता का मिजाज़ भांपने का भी काम करती है। आपको याद होगा 2013 में संजय दत्त के पैरोल पर छूटने के बाद लोगों में आश्चर्य भी था, गुस्सा भी और तमाम और जानकारियां भी कि उन्हें कैसे और क्यों पैरोल मिला। मेन स्ट्रीम चैनल पर जहां एक आपराधिक मामने में संजय दत्त को मिली छूट को भुनाया जा रहा था उनके फिल्मों के शॉट्स और बाइट के द्वारा वहीं सोशल मीडिया पर संजय दत्त की एक्टिंग से खासा लगाव रखने वाले भी आपराधिक मामले में, उनके ग्लैमर के कारण मिली विशेष छूट का विरोध कर रहे थे।

आम और खास के गुस्से का इजहार भी सोशल मीडिया पर..

12 मार्च, 2018 को समाजवादी पार्टी के सांसद नरेश अग्रवाल को बीजेपी में शामिल कर लिया गया। उसी नरेश अग्रवाल को, जिन्होंने कुछ ही महीने पहले संसद में भाजपाइयों की ओर इशारा करते हुए कहा था "यदि गाय माता है तो बैल आपका कौन है?" भाजपा समर्थकों ने इसे पूरे हिंदू समुदाय को अपमानित करने वाला बयान मानते हुए सोशल मीडिया पर हंगामा मचा दिया था। अग्रवाल इतने

पर नहीं रुके थे, बल्कि प्रधानमंत्री के लिए जातिसूचक शब्द के साथ-साथ भगवान राम का भी मजाक उड़ाया था। ऐसे नरेश अग्रवाल को भाजपा में शामिल किया जाना, मोदी समर्थक और विरोधी किसी को नहीं पचा। फिर तो सोशल मीडिया पर नरेश अग्रवाल ही छाए रहे। सोशल मीडिया पर नरेश अग्रवाल के ट्रोल होने से संकेत साफ था कि अग्रवाल को पार्टी में शामिल किए जाने का भाजपा नेतृत्व का फैसला आम आदमी को पसंद नहीं आया। जनता के मूड का इससे बेहतर थर्मामीटर हो ही नहीं सकता। जब पार्टी को यह एहसास हुआ तो उसी सोशल मीडिया पर यह संकेत दिया जाने लगा कि नरेश अग्रवाल के बीजेपी में शामिल किए जाने से उनके एक बेटे के विधान सभा में एक वोट के कारण मायावती को राज्यसभा में जाने से रोका जा सकता है। यह खबर ज्यों ही ट्रोल होना शुरू हुआ, भाजपा समर्थकों का मिजाज बदलने लगा। वही लोग, जो कुछ घंटे पहले तक सोशल मीडिया पर आहत दिख रहे थे, लिखने लगे कि यदि मायावती को रोकने का यह प्रयास है तो नरेश अग्रवाल का जहर हमें स्वीकार्य है। सोशल मीडिया पर यही स्वीकार्यता बाबू लाल कुशवाहा को पार्टी में शामिल करने को लेकर नहीं हो पाई थी। भाजपा को लग गया था कि कुशवाहा का दांव गलत हो सकता है। भाजपा ने कुछ ही दिनों बाद कुशवाहा को पार्टी से निकाल दिया था।

जहां तक गुस्से की बात है तो आतंकवादी याकूब मेनन को फांसी दिए जाने की तारीख तय हो जाने और उसके विरोध में फिल्म अभिनेता सलमान खान ने सिर्फ 49 मिनट के भीतर 14 ट्वीट किए थे। इसके बाद विरोध की जो आवाज सलमान खान के खिलाफ आई कि उन्होंने न सिर्फ छह ट्वीट के लिए माफी मांगे, बल्कि पुराने सभी ट्वीट को हटाने के लिए विवश होना पड़ा। उन्होंने एक ट्वीट में लिखा था, 'याकूब मेमन को फांसी दी, दिखाने के लिए उसके भाई को नहीं। एक बेकसूर को मारना इंसानियत का कत्ल है। किधर छिपा है टाइगर? यह कोई टाइगर नहीं है, बिल्ली है और हम एक बिल्ली को नहीं पकड़ सकते।' वहीं, माफी मांगते हुए सलमान खान ने लिखा, ''मेरे पिता ने फोन किया और कहा कि मुझे अपने ट्वीट वापस लेने चाहिए, क्योंकि उनसे गलतफहमी हो सकती है। मैं बिना शर्त किसी गलतफहमी के लिए माफी मांगता हूं। मैंने यह नहीं कहा था कि याकूब निर्दोष है। (7)

राजनीतिक बयानबाजी का अड्डा बना सोशल मीडिया

सोशल मीडिया अब राजनीति और बयानबाजी का अड्डा भी है और किस बात को किस रूप में मोड़ दिया जाएगा और किस रूप में लिया जाएगा, कोई नहीं जानता। बिहार के मुख्यमंत्री नीतीश कुमार ने ट्विटर पर 'आस्क नीतीश' आयोजन के तहत पूछे एक सवाल के जवाब में रहीम की कविता 'जो रहीम उत्तम प्रकृति, का करिसकत कुसंग। चंदन विष व्यापत नहीं, लिपटे रहत भुजंग' को पोस्ट किया। उस समय नीतीश और लालू बिहार में मिलकर सरकार चला रहे थे। इस ट्वीट को भाजपा ने मुद्दा बनाया और कहा कि नीतीश कुमार ने लालू प्रसाद को निशाना बनाया है। खुद को चंदन कहा और लालू को सांप। नीतीश के इस ट्वीट पर मेनस्ट्रीम मीडिया में न सिर्फ उन्हें बल्कि, उनके तत्कालीन राजनीतिक साथी लालू को भी सफाई देना भारी पड़ गया। सोशल मीडिया पर नीतीश के इस बयान के बाद भी उनके नाम से नीतीश कुमार के बदले चंदन कुमार ट्रोल होने लगा। नीतीश का ट्विटर पर यही कमेंट दोनों राजनीतिक साथी को आगे संग-संग चलने के मिजाज को बदलने के संकेत दे दिए। अब तक बड़े भाई और छोटे भाई की जोड़ी यह बयान देते नजर आते थे कि उनका गठबंधन अटूट है, लेकिन नीतीश कुमार के उस ट्वीट ने गठबंधन में दरार के संकेत दे दिए जो छह महीने के अंदर सही साबित हुए।

इसी तरह, केजरीवाल के यह कहने पर कि योगेंद्र यादव और प्रशांत भूषण लौटें तो अच्छा होगा। जवाब में योगेंद्र यादव ने ट्वीट किया कि सुन रहा हूं कि अरविंद हमारी वापसी पर खुश होंगे, लेकिन हमने तो कभी ईमानदार सियासत की राह छोड़ी ही नहीं थी। ऐसा तो उन्होंने किया। क्या वह वापस लौटेंगे? हम तो आज भी उसी रास्ते पर चल रहे हैं। आप ही भटके हैं अरविंद। इसलिए अब आप तय करें कि आदर्शों पर वापस आना है या सत्ता प्यारी है। वहीं, दिल्ली के मुख्यमंत्री अरविंद केजरीवाल गाहे-बगाहे ट्विटर के जरिये ही केंद्र सरकार पर बरसते रहते हैं।

राष्ट्रीय चैनलों और अखबारों के संपादकीय पेज पर सोशल मीडिया की धमक..

फेसबुक पर तथ्यों से मजबूत बेहतरीन पोस्ट सालों से अखबारों के संपादकीय पृष्ठ पर जगह बना चुका है। राष्ट्रीय दैनिक अखबार "हिंदुस्तान" ने इस परंपरा की

शुरुआत की। 'हिंदुस्तान' रविवार को छोड़कर सभी दिन अपने संपादकीय पृष्ठ पर साइबर संसार का कॉलम प्रकाशित करता है जिसमें फेसबुक वॉल लिखी किसी गंभीर और तथ्यपरक लेखन को प्रकाशित किया जाता हैं। बाद में 'प्रभात खबर' जैसे क्षेत्रीय अखबारों ने भी सोशल मीडिया के पोस्ट को अपने संपादकीय पेज पर छापना शुरू किया। आमजन में सोशल मीडिया के बढ़ते प्रभाव के कारण देश के लगभग सभी चैनलों ने सोशल मीडिया में चर्चित खबर और वीडियो को अपने आधे घंटे के बुलेटन के रूप में चलाना शुरू किया, ताकि आभासी दुनिया के लोगों को मेन स्ट्रीम मीडिया अपने संग जोड़ सके। इसकी शुरुआत 'एबीपी न्यूज' ने की। सोशल मीडिया की खबरों पर आधारित एबीपी न्यूज के शो "वायरल सच" की बढ़ती लोकप्रियता ने मेनस्ट्रीम मीडिया को इस कदर मजबूर किया कि आज लगभग सभी राष्ट्रीय चैनल आभासी दुनिया की खबर की सच्चाई जानने के नाम पर सोशल मीडिया की खबरें बेचते हैं, ताकि मेन स्ट्रीम मीडिया से दूर सोशल मीडिया की दुनिया में भ्रमण कर रहे दर्शकों को फिर से खुद को जोड़कर अपनी टीआरपी बढ़ सकें। जबकि, सच यह है कि मेनस्ट्रीम मीडिया जब भी गलत साबित हुआ, अपनी गलती कभी नहीं मानी।

मेनस्ट्रीम मीडिया का 2012 तक, एक अलिखित संविधान था कि वह अपने साथी मीडिया संस्था की झूठी या सच्ची खबर पर अपनी प्रतिक्रिया नहीं देता था। जिस मीडिया संस्था की खबर झूठी साबित होती थी वह भी कभी खबर को पुख्ता नहीं करती थी। लगभग दो दशक के अपने टीवी और प्रिंट मीडिया में फील्ड रिपोर्टिंग के अनुभव के आधार पर मैं कह सकता हूं कि बड़ी से बड़ी खबर गलत साबित हो जाने पर भी अखबारों ने अंदर के पेज पर 'भूल सुधार' नामक छोटा कॉलम तभी छापा, जब अखबार को कोई लीगल नोटिस भेजा गया। जब भारत में न्यूज टेलीविजन आया तो अखबारों से आए टीवी के संपादकों ने यह परंपरा टीवी न्यूज चैनलों पर भी जारी रखी।

आज दौर बदल चुका है। न्यूज चैनलों में सोशल मीडिया ने प्रतिस्पर्धा बढ़ा दी है। खबरों की बढ़ती प्रतिस्पर्धा और सोशल मीडिया पर, मेन स्ट्रीम मीडिया द्वारा खबरों को पक्षपात तरीके से या गलत तरीके से परोसने का मखौल उड़ाने से पता चलता है कि आखिर आम जनता का मिजाज क्या कह रहा है! सोशल मीडिया के इसी मिजाज को पढ़ने के लिए मेन स्ट्रीम मीडिया में न सिर्फ खुद को सच्चा और

प्रतिस्पर्धी चैनल को झूठा साबित करने की होड़ बढ़ी, बल्कि सोशल मीडिया की खबरों को अपुष्ट साबित करने की कोशिश रही। जबकि, सच यह है कि सोशल मीडिया पर झूठ आप ज्यादा देर तक परोस ही नहीं सकते। अतीत में फोटोशॉप के माध्यम से गलत खबर ट्रोल करने वालों को सोशल मीडिया के पाठकों ने कुछ घंटों में सही फोटो और पोस्ट के सहारे मात दी है।

बहरहाल, सोशल मीडिया दुनिया को बदल रही है। एक ओर जहां फेसबुक की मोबाइल फोटो शेयरिंग सेवा इंस्टाग्राम ने विज्ञापन दाताओं के लिए अपना प्लेटफार्म खोल दिया है, वहीं दुनिया में व्हाट्सएप यूजर की संख्या 90 करोड़ का आंकड़ा पार कर चुकी है। इतना ही नहीं, फेसबुक तो हर दिन नए रिकॉर्ड बनाने की ओर अग्रसर है और एक दिन में एक अरब से ज्यादा यूजर फेसबुक को देखते हैं और प्रयोग करते हैं।

सोशल मीडिया और राष्ट्रवाद का उभार

सोशल मीडिया के बढ़ते प्रभाव ने साबित कर दिया कि पत्रकारिता अब किसी की जागीर नहीं है। डिग्री हासिल कर पत्रकार होने का भ्रम तो पाला जा सकता है लेकिन, समाज और देश के प्रति जिम्मेदारी का भाव नहीं हासिल किया जा सकता है। सालों तक पत्रकारिता में पैसा था। रुतबा था। सत्ता के प्रति निष्ठा थी। सब कुछ था, लेकिन राष्ट्र गौण था। अखबार में छपी खबर अंतिम सत्य और टीवी पर दिखाया गया रिपोर्ट अटल सत्य की तरह पेश होता रहा है। इन खबरों के बीच आम आदमी बस मूक दर्शक रहा। सब कुछ एकतरफा था। हम और आप काउंटर सवाल नहीं कर सकते थे। आम आदमी के पास अपना विचार रखने के लिए न कोई प्लेटफॉर्म था, न कोई हैसियत थी। सोशल मीडिया ने आम आदमी को वही ताकत और हैसियत दी है।

राजनीति, दलों को लेकर विचार बनाने और बड़ी ही चपलता से अपनी पसंदीदा पार्टी के लिए सत्ता की राह तैयार करने के लिए मनगढ़ंत एग्जिट पोल भी टीवी चैनलों ने शुरू किए ! साख ही, पत्रकारिता की पहली और आखिरी पूंजी होती है। टीवी चैनलों की बढ़ती ताकत के दौर में पत्रकारिता वह साख ही खोने लगी। लगभग हर एग्जिट पोल बस तुक्का साबित होते रहे, जमीन पर फुस्स होते रहे, लेकिन सिलसिला जारी रहा। क्योंकि इस एग्जिट पोल में आम आदमी के अंदर कौतूहल पैदा करने की गजब की ताकत रही है। दरअसल, यह इंसानी

फितरत है, वरिष्ठ पत्रकार और राजनीतिक व आर्थिक विशेषज्ञ मनोहर मनोज कहते हैं "भविष्य को जानने की हमारे अंदर गजब की जिजीविषा होती है, यही टीवी चैनलों के बाजार को मजबूत करता है। टीआरपी हासिल करने के लिए यह जरूरी होता है। न्यूज चैनल इसके बिना नहीं चल सकता। यही खबरों की दुनिया का अर्थशास्त्र है।"

बदलते दौर में खबर को स्टोरी (कहानी) में गढ़ने के लिए मसाला लगाया जाने लगा। ये मसाला महंगाई बढ़ने की खबर में बनावटीपन लाने से लेकर दंगा फसाद की रिपोर्टिंग को जाति और मजहब से जोड़कर उन्माद फैलाने के लिए समाजिक समरसता का ताना-बाना को तोड़ने तक ही सीमित नहीं रहा, बल्कि देश की साख को दुनिया में चोटिल करने की सीमा तक को लांघना शुरू कर दिया।

पत्रकारिता की अपनी नैतिकता रही है और कुछ उसके अलिखित संविधान। फरवरी 2002 में गुजरात के गोधरा में साबरमती एक्सप्रेस में आगजनी के बाद भड़के दंगा के बाद की रिपोर्टिंग ने पत्रकारिता के उस पूरे चरित्र को ही चोटिल कर दिया। तब भारतीय टेलीविजन मीडिया अपने शैशव अवस्था में था। कुछ अलग कर गुजरने के जोश में गुजरात दंगा को बेचने के लिए इस कदर फरेब हुआ कि पत्रकारिता की पूरी साख प्रभावित होने लगी। ऐसा कहने के पीछे का तथ्य यह है कि केंद्रीय गृहमंत्रालय के आंकड़ों के मुताबिक आजाद भारत में अब तक करीब 25 हजार से ज्यादा दंगे हुए, उसमें से 11 हजार दंगे तो सिर्फ उत्तर प्रदेश में हुए। 2002 से पहले के गुजरात में भी दंगों का अपना इतिहास रहा है, लेकिन भारत सरकार के गृहमंत्रालय की रिपोर्ट के मुताबिक ही 2002 के बाद गुजरात में कोई दंगे नहीं हुए। जबकि, गुजरात के बाहर 2015 मुजफ्फरनगर दंगा के समय तक लगभग नौ हजार से ज्यादा दंगे हुए। मीडिया ने इसकी कभी सुध नहीं ली।

सन 1984 के सिख विरोधी दंगा में एकतरफा सिखों का नरसंहार हुआ। साढ़े तीन दशक बाद भी इसमें पीड़ितों को इंसाफ नहीं मिला। उस समय के कद्दावर कांग्रेसी एचकेएल भगत, सज्जन कुमार व जगदीश टाइटलर जैसे नेता इस मामले में आरोपी बनाए गए थे, लेकिन एक दिन के लिए भी जेल नहीं गए। न तो दोषी ठहराए गए, न ही निर्दोष साबित किए गए। बस, इन नेताओं की चाहत में मामला

सालों तक टलता रहा। भगत तो अब स्वर्ग सिधार गए हैं। बाकी नेता ने भी अब अपनी राजनीतिक जीवन का सफर लगभग तय कर लिया। मीडिया इस मामले को बहुत गंभीरता से नहीं लिया। मेन स्ट्रीम मीडिया की दलील रही है कि 1984 के समय टीवी मीडिया नहीं था। 2002 में टीवी मीडिया आया, इसीलिए गुजरात दंगा चर्चित रहा। और इसके लिए राज्य सरकार को कठघरे में लिया गया। लेकिन, यहीं मेनस्ट्रीम मीडिया खुद पर सवाल छोड़ती है कि 1987 के भागलपुर दंगा और 2015 के मुजफ्फरनगर दंगा के लिए राज्य सरकार को कठघरे में क्यों नहीं लिया गया। गुजरात दंगा के अलावा किसी भी दंगे में अपराधियों को सजा क्यों नहीं हो पाई। मोदी सरकार की सक्रियता के बाद बने फास्ट ट्रैक कोर्ट का परिणाम रहा 17 दिसंबर, 2018 को 1984 सिख विरोधी दंगा के 34 साल बाद दिल्ली के प्रभावशाली कांग्रेस नेता सज्जन कुमार को उम्रकैद की सजा हुई। सज्जन कुमार के बारे में एक आम धारणा रही कि वे नई दिल्ली के अशोक रोड स्थित अपने सरकारी निवास में हर साल संपादकों और पत्रकारों के लिए भोज आयोजित करते थे और अपने हाथों से खाना परोसते थे। आरोप है कि संपादकों से उनके संबंध ऐसे थे कि कोई भी पत्रकार उनके खिलाफ खबर नहीं लिख सकता था। 1984 सिख विरोधी दंगा को हवा देने के जुर्म में सजा पाने वाले अकेले नेता हैं सज्जन कुमार। बेहद गंभीर आरोपों के बाद भी सालों तक पत्रकारों के प्रिय रहे सज्जन कुमार का जेल जाना असंभव सा लगता था।

कभी 1984 का सिख विरोधी दंगे, भागलपुर दंगा या मुजफ्फरनगर दंगा में स्वयंसेवी संस्था और मीडिया ने गठजोड़ के रूप में काम नहीं किया। 84 दंगे में तो एकतरफा सिखों का कत्लेआम हुआ। दूसरे दंगों में बड़ी संख्या में मुसलमान मारे गए। इन दंगों के सालों बाद भी किसी की जवाबदेही तय नहीं हुई। दूसरी ओर कुछ स्वयंसेवी संस्था की मदद से टीवी चैनलों ने खुलेआम गुजरात दंगा में हिंदू द्वारा मुसलमानों को मारने में सरकार की भूमिका और साजिश पर रिपोर्टिंग करनी शुरू कर दी। जबकि, अब तक यह पत्रकारिता का आधारभूत सिद्धांत था कि सामाजिक सौहार्द को बनाए रखने के लिए किसी भी दंगा-फसाद की रिपोर्टिंग के समय जाति और मजहब को प्रदर्शित नहीं किया जाएगा। परंतु, यह सब खुलेआम हुआ। गुजरात दंगा पहला मामला था जिसमें खुलकर यह खबर बनाई गई कि हिंदुओं ने नरोदापाटिया सोसायटी में मुसलमानों की हत्या कर दी। दुनिया भर में

यही संदेश गया कि भारत के गुजरात प्रांत में हिंदुओं ने मुसलमानों का नरसंहार किया और वहां कि सरकार ने दंगाइयों का न सिर्फ साथ दिया, बल्कि उन्हें दंगा करने के लिए उकसाया।



कुतुबुद्दीन अंसारी, [हाथ जोड़े कुतुबुद्दीन अंसारी की तस्वीर पेश की गई यह कह कर कि दंगाइयों से गुहार करता रहा है, लेकिन वह पुलिस के सामने अपने घर को बचाने की गुहार लगा रहे थे। मीडिया ने इस तस्वीर का सच कभी नहीं बताया]

भारतीय मीडिया की इस तरह की रिपोर्टिंग के कारण दुनिया भर में भारत की बदनामी हुई। संकेत यह गया कि गुजरात में जो दंगा हुआ, वह हिंदुओं द्वारा मुसलमानों का एकतरफा नरसंहार था। मीडिया की बनाई देश की इस छवि के कारण दुनिया के कई देशों ने गुजरात के मुख्यमंत्री को अपने यहां वीजा देने से मना

कर दिया। भारतीय मीडिया ने इन खबरों को भी बड़े उत्साह के साथ चटकारे लगा कर चलाया, जबकि सच्चाई इससे अलग थी।



अशोक मोची [दंगे के दौरान अशोक मोची, अहमदाबाद में सड़क किनारे जूते सील रहे थे। किसी फोटोग्राफर ने उनसे अपना रॉड हाथ में लेने और पोज देकर फोटो खिंचवाने को कहा। भोलेपन में अशोक ने बस फोटोग्राफर के लिए पोज दे दिया। एसआईटी रिपोर्ट में दोनों तस्वीरों को किसी ढंग से दंगे से वास्ता नहीं पाया गया। मीडिया इन्हीं दो तस्वीरों से गुजरात दंगे को बदनाम करती रही, जिसका दंगे से कोई वास्ता नहीं था।]

गुजरात दंगा को दो दिन के अंदर नियंत्रित कर लिया गया था, लेकिन गोधरा में ट्रेन के अंदर 59 लोगों को जिंदा जला देने के बदले की आग कई शहरों में फैल चुकी थी। मीडिया पीड़ित और अपराधी के मजहब की पहचान कर दंगे की आग में घी डालने का काम कर रही थी। इतना ही नहीं, खबरों को उत्तेजक बनाने के

लिए फर्जी कहानी गढ़ी जा रही थी। इस दंगे की दो तस्वीर ने भारतीय समाज के लोकतांत्रिक व सर्वधर्म समभाव वाले तस्वीर को चोटिल किया। दुखद यह है कि ये दोनों तस्वीर भारतीय बनावटी मीडिया ने तैयार की, जो फर्जी थी। एक तस्वीर कुतुबुद्दीन अंसारी की थी जिसे दंगाइयों के सामने जिंदगी की याचना करते हुए हाथ जोड़े रोते हुए दिखाया गया, जबकि दूसरी तस्वीर अशोक मोची की थी जिसे हाथ में रॉड लिए दोनों हाथ उठाए दंगाइयों को मारने के लिए आगे बढ़ते दिखाया गया। अशोक अहमदाबाद की सड़क पर जूतों में पालिश करने वाला मोची हैं जो आज भी वही काम कर रहा है, सोशल मीडिया के दौर में गुजरात की सड़कों से ये खबर आई जिसमें अशोक ने बताया कि एक फोटोग्राफर ने उससे जैसे कहा वैसे उसने फोटो खिंचवा ली थी। इस फोटो के लिए रॉयटर के फोटोग्राफर को इनाम भी मिला। दूसरी तस्वीर अंसारी की थी जो शहर से में घूम रहे रैपिड एक्शन फोर्स के सामने मदद की गुहार लगाई थी। मीडिया द्वारा पेश इन दोनों बनावटी तस्वीर ने भारत के पूरे चरित्र को दुनिया में दागदार बना दिया था। ‘IBN7’ में ऋचा अनिरुध के एक खास शो “जिंदगी लाइव” कुतुबुद्दीन की कहानी तो बताई गई कि कैसे उसके तस्वीर का दुरुपयोग आज तक हो रहा है लेकिन अशोक मोची की तस्वीर की कहानी तो दुनिया ने सोशल मीडिया के युग में ही जाना कि ये दोनों तस्वीर मीडिया द्वारा बस गुजरात की तत्कालीन सरकार को बदनाम करने के लिए तैयार की गई थी। देश की सबसे प्रतिष्ठित मैग्जीन ‘इंडिया टुडे’ के कवर पेज पर दोनों फोटो ने जगह बनाई थी। देश का कोई भी अखबार संभवतः मैग्जीन या टीवी चैनल नहीं जिसने अशोक मोची और कुतुबुद्दीन अंसारी की इस तस्वीर से आग नहीं लगाई हो। दोनों को इस बात का दुख है कि भारतीय मीडिया ने उसका दुरुपयोग किया, लेकिन उनका पक्ष सोशल मीडिया के दौर में ही आम आदमी के सामने आया।

देश की प्रतिष्ठित पत्रिकाओं और अखबारों ने बिना पुख्ता किए इन तस्वीरों को अपने कवर पर छापा, उसके बाद दुनिया भर के अखबारों और टीवी चैनलों पर गुजरात और भारत की छवि एक दंगाई देश के रूप में पेश हो गई। बदलते दौर में सुप्रीम कोर्ट की बनी एसआईटी ने पाया कि इन दोनों फोटो का दंगा से कोई वास्ता नहीं था। ये फोटो फर्जी साबित हुए। न तो कुतुबुद्दीन अंसारी दंगा पीड़ित था, न अशोक मोची दंगाई, लेकिन इन्हीं दोनों युवकों की तस्वीर आज भी गुजरात

दंगा के प्रतीक के रूप में दुनिया भर में पेश किए जाते रहे। अदालत में यह सब कुछ साफ हो जाने के बाद भी भारतीय मीडिया ने दंगा के दौरान पेश की गई उन दोनों तस्वीर के पीछे का सच देश को नहीं बताया। सोशल मीडिया के बढ़ते प्रभाव में ही देश कुतुबुद्दीन अंसारी और अशोक मोची के सच को जान पाया। दुनिया आज भी उस सच को नहीं जान पाई, क्योंकि भारतीय मेनस्ट्रीम मीडिया ने कभी अपनी गलती स्वीकार ही नहीं की।

जिन्हें पत्रकार होने का गुमान था, खबरों से अपने मुताबिक खबरों के खिलाड़ी होने का अहंकार था, 2010 आते-आते, सोशल मीडिया के प्रभाव से उनका गुमान ढहने लगा, अहंकार चूर होने लगा। आम जनता को अपनी आवाज सोशल मीडिया के माध्यम से सरकार तक पहुंचाने की ताकत का एहसास होने लगा। यह एहसास बहुत बड़ा था। दिल्ली में अन्ना आंदोलन ने इस एहसास को चरम तक पहुंचा दिया। सोशल मीडिया की ताकत को ही जानिए कि मेनस्ट्रीम मीडिया को रामलीला मैदान में अड्डा जमाने को मजबूर कर दिया। हजारों की संख्या में लहराते राष्ट्र ध्वज और भ्रष्टाचार के खिलाफ हल्ला बोल ने आमजन को यह एहसास दिलाया कि उसके देश को दीमक की तरह राजनेता अपनी ताकत से चाट रहे हैं। राजनेताओं को यह एहसास था कि सब कुछ मैनेज किया जा सकता है, लेकिन वो जन-जन तक पहुंच चुका था।

यह एहसास भारतीय मानस को आजादी के दौर की याद दिलाने लगा। लोग रामलीला मैदान की तस्वीर फेसबुक और ट्विटर के माध्यम से शेयर करने लगे। सच तो यह था कि राष्ट्र ही हमारी पत्रकारिता का आधार था। आजादी के आंदोलन में भी पत्रकारिता अपनी इसी भूमिका में थी। लेकिन, बदले दौर में 'राष्ट्र' मीडिया से गौण होने लगा, जिसे सोशल मीडिया ने थाम लिया। बदले दौर में सोशल मीडिया ने मजबूर कर दिया मेनस्ट्रीम मीडिया को तो उस पर भी राष्ट्रवाद का कलेवर चढ़ने लगा। ज्यादातर चैनल देश के मिजाज को समझते हुए कहने लगा..हमारा पहला उद्देश्य राष्ट्रप्रथम। अर्णब गोस्वामी ने अपने चैनल रिपब्लिक पर इसकी शुरुआत की तो उनकी लोकप्रियता को देख कई चैनल उस राह पर चलने लगे। बदले दौर में सोशल मीडिया का मेन स्ट्रीम मीडिया पर बढ़ते प्रभाव के रूप में इसे देखा जाने लगा। सोशल मीडिया के दौर में लोगों को यह पता चलने लगा कि हमें जो कुछ दिखाया जा रहा है, वह पूरा सच नहीं है। मेनस्ट्रीम मीडिया

जो जिम्मेदारी छोड़ चुकी थी सोशल मीडिया ने उसे थाम लिया। झूठ और बनावट की रिपोर्टिंग का जवाब सोशल मीडिया से मिलना शुरू हो गया। सोशल मीडिया पर मेन स्ट्रीम मीडिया का वह पुराना झूठ भी बेपर्द होने लगा। भारत को दंगाई राष्ट्र साबित करने के लिए कुतुबुद्दीन अंसारी और अशोक मोची को मोहरा बनाए जाने की साजिश का सच लोगों के सामने आने लगा।

सोशल मीडिया की सबसे बड़ी खासियत यह है कि आप उन लोगों से जुड़ते चले जाते हैं जो आपकी तरह सोचते हैं। दरअसल, भारत की आत्मा में आध्यात्मिकता और सांस्कृतिक पुट है। इसलिए भारत का राष्ट्रवाद भी आध्यात्मिक और सांस्कृतिक है। भारत का राष्ट्रवाद पौराणिक काल से ही कभी विस्तारवादी नहीं रहा। भगवान राम ने लंका विजय के बाद उसे रावण के भाई विभिषण को सौंप दिया। यही भाव भारत की राष्ट्रीय आत्मा है। अरब और यूरोप के विस्तारवादी राष्ट्रवाद से हमारा राष्ट्रवाद बिल्कुल अलग था, लेकिन भारतीय वामपंथ की सोच देश की मेन स्ट्रीम मीडिया में पूर्ण रूप से हावी था। उसी विचार धारा ने भारतीय राष्ट्रवाद को एक बीमार मानसिकता के पोषक के रूप में पेश किया। सालों तक पोषित हो रही इस विचारधारा ने भारत के मूलभूत राष्ट्रवादी विचारधारा का ही दोहन कर लिया।

दुखद यह है कि दोहन वह लोग करने लगे जिनका भारत की जमीनी हकीकत से कोई सरोकार नहीं था। भारतीय मेनस्ट्रीम मीडिया में विदेशों से पढ़े-लिखे नौकरशाहों, राजनेताओं और सेना अधिकारियों के नवाबजादे ठूंसे जाने लगे। भारतीय अंग्रेजी मीडिया पर शोध करने वाले एनडीटीवी फ्रॉड के लेखक श्री अय्यर लिखते हैं कि ये वो नवाबजादे थे जो जीवन में दूसरे किसी पेशे के लायक नहीं थे। जीविका की तलाश में थे इसलिए उन्हें पत्रकार बना दिया गया, ताकि उनके नजदीकी रिश्तेदारों के सत्ता या सरकारी ओहदे में व्याप्त ताकत का इस्तेमाल किया जा सके।

यदि किसी आर्थिक या आपराधिक मामले पर मैनेजमेंट फंसने लगे तो भाई भतीजेवाद से उस बचाया जा सके। 'एनडीटीवी फ्रॉड' नामक चर्चित किताब के लेखक श्री अय्यर ने तथ्यों संग पेश किया कि 'एनडीटीवी' ने कैसे एक परंपरा शुरू की जिसमें मीडिया के अंदर सेना अधिकारी, राजनेता व केंद्रीय मंत्री के बच्चों व नजदीकी रिश्तेदारों को मीडिया में शामिल किया गया। ज्यादातर मीडिया हाउस में

पत्रकारों की बहाली के लिए कोई पैमाना नहीं तय किया गया। ऐसे में पत्रकार बने ज्यादातर कर्मचारियों का खबरों से सरोकार नहीं रहा। वे खबर बनाने के चक्कर में उसकी मूल आत्मा से ही खिलवाड़ करने लगे। सैकड़ों बार टीवी पत्रकारों ने बहस के दौरान यह अहसास कराया कि जिस विषय पर वे गेस्ट संग बहस कर रहे हैं उसकी समझ उनके पास खुद नहीं रही। सोशल मीडिया के दौर में उनके वीडियो खुब शेयर होने लगे जिसका मजाक एक पत्रकारों की सूझबूझ को लेकर उड़ाया जाने लगा। ऐसा ही एक मामला हजारों की संख्या में शेयर हुए जिसमें राष्ट्रीय चैनल का एक पत्रकार, इंसेफ्लाईटिस पर रिपोर्टिंग करने पूर्वी उत्तर प्रदेश के एक गांव के धान के खेत में खड़ा हो गया और कहना शुरू कर दिया "मैं इस वक्त धान के खेत में खड़ा हूं। धान मतलब गेहूं, गेहूं मतलब रोटी, जबकि धान खरीफ फसल है और गेहूं रबी फसल है। दोनों फसल के चरित्र और पैदावार में आसमान-धरती का अंतर है। गांव-देहात की जमीनी हकीकत को न समझने वाले पत्रकार जब राष्ट्रीय स्तर के किसी समस्या पर चोट मारने की चाह में उसकी व्याख्या करना चाहते हैं तो उस खबर पर उनकी अज्ञानता हावी हो जाती है। सोशल मीडिया के दौर में किसी पत्रकार की ऐसी अयोग्यता पूरे पेशे की साख को तार-तार कर देता है। दिलचस्प यह है कि वह रिकॉर्डेड फीचर स्टोरी थी। जो नेशनल चैनल पर एअर हुई। सोशल मीडिया पर यह खूब वायरल हुई जिसमें पत्रकार और पत्रकारिता का जमकर मजाक उड़ाया गया।

अब हालात बदल चुके थे। दूर दराज के लोग अपने क्षेत्र की समस्या को न सिर्फ साझा कर सरकार तक आवाज बुलंद करने लगे, बल्कि जन सरोकार से दूर मीडिया को मजबूर करने लगे कि वह आम आदमी के सरोकार की खबर दिखाना शुरू करे।

सोशल मीडिया विशेषकर फेसबुक, यूट्यूब ने एक विचार के लोगों को एक मंच देना शुरू कर दिया। दरअसल, फेसबुक, यूट्यूब की खासियत है कि अपने वॉल पर आप उसी तरह के पोस्ट ज्यादा पाएंगे जैसा आप पसंद करते हैं। यदि आप राष्ट्रवादी विचारधारा के पोस्ट को ज्यादा लाइक करते हैं तो आपके वॉल पर वही दिखाई देंगे। यदि आप वामपंथी विचारधारा के हैं तो आपके वॉल पर भी वैसे ही पोस्ट ज्यादा दिखेंगे। आप यदि खाने-पीने से संबंधित या इंटीरियर से जुड़े पोस्ट ज्यादा पसंद करते हैं तो आपके वॉल पर उसी तरह के पोस्ट दिखेंगे। दूसरी ओर

ट्विटर पर जिसके फॉलोअर ज्यादा होने लगे समाज में उनका कद उतना बढ़ता चला गया। धीरे-धीरे मीडिया से जुड़े लोग बहुतायत में यहां आ गए और अपने फॉलोअर तलाशने लगे। सोशल मीडिया में आमजन के मिजाज को नेता और अभिनेता ही नहीं, पत्रकार भी समझने लगे। तभी, सभी चैनलों की खबरें सोशल मीडिया पर केंद्रित होने लगीं।

आखिर एक लोकतांत्रिक देश में जनता की ताकत के ही तो मायने हैं। सोशल मीडिया ने सही मायने में जनता के मिजाज को समझने का एक बेहतरीन पैमाना के रूप में खुद को पेश किया। बदलते दौर में जनता के इस मिजाज के मायने हर किसी को समझ में आने लगा। स्कल टोपी और इफ्तार पार्टी से मुस्लिम समुदाय का तुष्टिकरण करने के खिलाफ सोशल मीडिया में आवाज बुलंद होने लगी। यह बहस सोशल मीडिया पर उठने लगा कि धर्म किसी की निजता का मामला है। इसका प्रदर्शन नहीं होना चाहिए। फिर राजनीति से ये तुष्टिकरण कमोबेश गायब हो गया, क्योंकि हर राजनीतिक दल को यह समझ आने लगा कि देश की बहुतायत जनता को लगता है कि राजनेता या राजनीतिक दल को किसी समुदाय विशेष को तुष्ट करने की चपलता के बदले विकास और सर्व समाज के हित में सोचना चाहिए। सोशल मीडिया ने सही मायने में देश के मिजाज को समझने में बड़ी भूमिका निभाई।

बदलते दौर में जरूरत थी जनता के मिजाज को समझते हुए, खुद के वजूद को बनाए रखने की। लेकिन, यहां हालात अलग थे। धरना-प्रदर्शन से न तो फॉलोअर बढ़ाए जा सकते थे, न होर्डिंग पोस्टर से। यहां तो वही लोग आप से जुड़ सकते थे जो आपके विचार से प्रभावित होंगे। यहां कुछ भी छुपाया नहीं जा सकता था। मनगढ़ंत कहानी बनाई तो जा सकती थी, लेकिन उस बनावटी कहानी से लंबे समय तक अफवाह नहीं फैलाया जा सकता है, जैसे मेनस्ट्रीम मीडिया गलत खबर के माध्यम से खबरों को ट्विस्ट करती है।

हाल में सोशल मीडिया पर कई पोस्ट सामने आए, जिसमें दो प्रमुख थे। एक पोस्ट में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी को सऊदी अरब के शेख का पैर छूता फोटो वायरल हुआ। दो चार दिनों तक यह पोस्ट घूमता रहा, तभी असली तस्वीर सामने आई जिसमें प्रधानमंत्री मोदी, अपने वरिष्ठ सहयोगी लालकृष्ण आडवाणी का पैर छू रहे हैं। जगह वही, बस आडवाणी की जगह सऊदी के शेख की तस्वीर लगा कर

अफवाह फैलाने की कोशिश की गई कि जब मोदी सऊदी अरब गए तो शेख के पांव लग गए थे। दूसरी पोस्ट गृहमंत्री राजनाथ सिंह की थी जिसमें दिखाया गया कि कैसे किसी राज्य के डीजीपी उनके पांव पर नाक रगड़ रहे हैं, जबकि वह पोस्ट फोटोशॉप किया गया था। असली तस्वीर दक्षिण भारत के एक फिल्म की थी जिसमें खलनायक के सामने पुलिस अधिकारी नतमस्तक थे। ऐसे न जाने कितने पोस्ट सोशल मीडिया पर फोटोशॉप के माध्यम से आए, जिसके जवाब में अगले ही दिन सही तस्वीर पेश कर झूठ फैलाने की साजिश पर नकेल कस दी गई। यही सोशल मीडिया की असली ताकत है। गुजरात दंगा को जिस झूठ के सहारे मेन स्ट्रीम मीडिया ने पोषित किया, सोशल मीडिया ने ऐसे झूठ को लंबे समय पांव नहीं जमाने दिया।

सोशल मीडिया ने आम आदमी को जो मंच दिया उसकी ताकत खासम खास लोगों को महसूस होने लगी। दिल्ली में अन्ना आंदोलन से बनी नई नवेली पार्टी को विधानसभा की लगभग 96 प्रतिशत सीट के सहारे दिल खोलकर सत्ता सौंप देने में सोशल मीडिया की जो भूमिका रही है, उसे कतई नकारा नहीं जा सकता। यह आंदोलन भ्रष्टाचार के खिलाफ राष्ट्रवाद की बुनियाद पर ही खड़ा हुआ। भारत के अतीत में ऐसा कोई दूसरा उदाहरण नहीं कि किसी राजनीतिक पार्टी को जनता ने इतना प्रचंड बहुमत दिया हो। इस आंदोलन ने राष्ट्र को उसके मूल संविधान की आत्मा से अवगत करा दिया "जहां हम भारत के लोग" की बात की गई है। इसमें सोशल इंजीनियरिंग की भूमिका सही मायने में सोशल मीडिया की थी। सत्ता में आते ही जब सरकार ने आंदोलन के चरित्र को खो दिया तो उसे एहसास हो गया कि अब वह जनता के उस प्यार की हिस्सेदार नहीं रह गई। इसका जो संकेत सोशल मीडिया के मार्फत ही हासिल होता है, वह बेहद पारदर्शी है। इसके लिए बस उस दौर के सोशल मीडिया के पोस्ट और आज के पोस्ट की तुलना से स्पष्ट हो जाता है। उस दौर में दिल्ली के जंतर मंतर पर अनशन कर देश में भ्रष्टाचार के खिलाफ आंदोलन खड़ा कर देने वाला एक नौजवान सोशल मीडिया पर इस कदर छा गया कि नई नवेली राजनीतिक दल के मार्फत सत्ता हासिल कर ली। आज वही व्यक्ति सोशल मीडिया से गायब है।

उसी दौर में जब देश में भ्रष्टाचार के खिलाफ आंदोलन चरम पर था, एक व्यक्ति प्रधानमंत्री पद के उम्मीदवार के रूप में सोशल मीडिया पर छा गया। गूगल

सर्च इंजन के मुताबिक 13 सितंबर, 2013 को जिस दिन नरेंद्र मोदी को प्रधानमंत्री पद का उम्मीदवार भाजपा के द्वारा घोषित किया गया, उस दिन दुनिया में सबसे ज्यादा एक अरब 77 करोड़ से अधिक लोगों ने नरेंद्र मोदी को सर्च किया। एक दिन में किसी व्यक्ति को उस तक गूगल पर इतना अधिक सर्च नहीं किया गया। यह सिलसिला आगे भी जारी रहा। दिसंबर 2017 में गूगल के बाद याहू पर भी मोदी सबसे ज्यादा सर्च किए जाने वाले भारतीय थे।[7] लगभग एक दशक से ज्यादा वक्त तक मेनस्ट्रीम मीडिया में सबसे बदनाम किए गए नेता, भारतीय प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी से बड़ा हीरो आज भी सोशल मीडिया पर कोई नहीं दिखता। सोशल मीडिया पर उनके फॉलोअर्स की संख्या इस बात की गवाही है। दरअसल, वह जनता के मिजाज को जानते हैं, इसीलिए अक्सर अपने मंत्री और नेता की हैसियत सोशल मीडिया पर उनके फॉलोअर से तोलते हैं। सही मायने में वह सोशल मीडिया ही है जिसने थर्मामीटर की भूमिका निभाते हुए देश की आम जनता के मिजाज से भारत के लोकतंत्र के चारों खंभों को अवगत कराया है। आखिर लोकतंत्र जनता के मिजाज से ही तो अपनी दिशा तय करता है।

छठा अध्याय

मेन स्ट्रीम मीडिया और पूर्वाग्रह से भरी रिपोर्टिंग

सालों तक मीडिया की रिपोर्टिंग ऐसी रही, मानो वह किसी खास के लिए एजेंडे के तहत काम कर रही हो। 2020 के आखिर में संसद द्वारा पास तीनों कृषि बिल के खिलाफ दिल्ली की सीमा पर जुटे किसानों के आंदोलन को भी एक एजेंडे के तहत खबर का रूप देती रही मीडिया, लेकिन बदले दौर में वाट्सएप युग में उसकी पोल खुलने लगी। 26 जनवरी, 2021 को गणतंत्र दिवस की परेड में शामिल होने की जिद्द पर आतुर किसान नेताओं को जब सरकार दिल्ली में प्रवेश करने से रोकने की बात कर ही थी तो मोदी विरोधी मीडिया ने माहौल बनाया कि किसी को गणतंत्र दिवस परेड में शामिल होने से कैसे रोका जा सकता है! फिर सरकार और किसान नेताओं के बीच एक रूट तय हुआ। तय हुआ कि किसान किसी भी तरह के हथियार संग नहीं आएंगे। तय हुआ ट्रैक्टर में ट्रॉली नहीं होगी, लेकिन किसानों ने कोई शर्त नहीं मानी। वे भारी संख्या में हथियार संग दिल्ली की सीमा में अंदर तक घुस गए। खूब उत्पात मचाया। लालकिले पर चढ़ गए। वहां धार्मिक ध्वज फहरा दिया। पांच सौ से ज्यादा पुलिस वालों को चोटिल किया।

आस्ट्रेलिया से आंदोलन में शामिल होने आया एक युवक भीड़ संग आईटीओ पर ट्रैक्टर संग करतब दिखा रहा था। ट्रैक्टर पलट जाने से मौके पर

उसकी मौत हो गई। किसानों के दिल्ली में उत्पात करने पर यही एक हादसा था। सब कुछ कैमरे पर हुआ। सब दिखा। लेकिन, इंडिया टुडे पर वरिष्ठ संपादक सालों से मोदी विरोध के लिए पत्रकारिता किए जाने के लिए चर्चित राजदीप सरदेसाई ने उस युवक को पुलिस की गोली से मौत साबित कर दिया। राजदीप ने बाकायदा फील्ड में आकर अपने ही चैनल के लिए इंटरव्यू दिया और कहा कि युवक की मौत ट्रैक्टर पलटने से नहीं, पुलिस की गोली से हुई। मामला यहीं नहीं रुका, जब इस पर बवाल मचा तो न्यूज बेब द वायर के संपादक सिद्धार्थ वरदराजन से पोस्टमार्टम करने वाले एक डॉक्टर का नाम लिए बिना बता दिया कि पोस्टमार्टम में गोली लगने के सबूत मिले। पोस्टमार्टम करने वाले डॉक्टरों की टीम ने एक प्रेस रिलीज जारी कर कह दिया कि हमारी टीम ने ऐसी कोई बात किसी से नहीं की। इस मामले में कांग्रेस नेता शशि थरूर, इंडिया टुडे के राजदीप सरदेसाई, द वायर के सिद्धार्थ वरदराजन, वरिष्ठ पत्रकार मृणाल पांडे समेत 13 के खिलाफ गंभीर धाराओं मुकदमा दर्ज हुआ योगी पुलिस द्वारा। दरअसल, यह एक तरह का सर्कुलेट जर्नलिज्म है जो सालों से चलता आ रहा है। बदले दौर में पहली बार ऐसे पत्रकारों पर अफवाह फैला कर सामाजिक सौहार्द बिगाड़ने समेत कई गंभीर धाराएं लगा कर मुकदमा दर्ज हुआ। सालों से खबरों को तोड़ने-मरोड़ने के बाद एक की खबर को दूसरे-तीसरे द्वारा सत्यापित करने का खेल जारी रहा। अपराधियों को विक्टिम बना कर पेश करने का खेल। सामान्य दुर्घटना को मॉब लिंचिंग और मॉब लिंचिंग पर चुप्पी लगाने के सर्कुलेट जर्नलिज्म का खेल। यह खेल कई दशकों से भारतीय मीडिया में चलता आ रहा है। पीड़ित को अपराधी और सजायाफ़्ता अपराधी तक का महिमामंडन का खेल! यह सब यूं ही नहीं होता होगा।

सजायाफ़्ता लालू के प्रति मीडिया की हमदर्दी के मायने

जुलाई 2013 के सुप्रीम कोर्ट के ऐतिहासिक फैसले की पहली बड़ी गाज लालू यादव पर ही गिरी। भ्रष्टाचार से चौतरफा घिरी यूपीए सरकार, लालू यादव जैसे विचाराधीन और सजायाफ़्ता आपराधिक पृष्ठभूमि वाले नेताओं को बचाने के लिए ही वह अध्यादेश लाना चाहती थी जिससे सुप्रीम कोर्ट का आदेश बदल दिया जाए। दरअसल, सुप्रीम कोर्ट की एक बड़ी बैंच ने 10 जुलाई, 2013 को जनप्रतिनिधित्व कानून की धारा 8(4) को असंवैधानिक करार देते हुए, दो साल से

ज्यादा की सजा पाए अपराधी को न सिर्फ किसी तरह के संवैधानिक चुनाव लड़ने पर रोक लगा दी, बल्कि ऐसे सजायाफ़्ता नेता की संसद या राज्य विधानसभा की सदस्यता भी छीन लेने का आदेश जारी कर दिया। इससे पहले सजायाफ़्ता अपराधी को भी चुनाव लड़ने की सुविधा बस इस आधार पर थी कि वह सजा मिलने के तीन महीने के भीतर ऊपरी अदालत में मामले को चुनौती दे दे। फिर अपनी राजनीतिक पहुंच की बदौलत लंबी तारीख लेते रहे। सुप्रीम कोर्ट के इस आदेश के कारण भारत की राजनीति में प्रभुत्व रखने वाले लालू यादव सरीखे नेता का राजनीतिक भविष्य खत्म होता दिख रहा था, क्योंकि सुप्रीम कोर्ट के आदेश के मुताबिक सजायाफ़्ता अपराधी सजा खत्म होने के छह साल बाद तक चुनाव नहीं लड़ सकते। यूपीए की सरकार, लालू यादव और ओमप्रकाश चौटाला जैसे सजायाफ़्ता नेताओं की क्षेत्रीय पार्टियों के भरोसे चल रही थी, इसीलिए यूपीए सरकार कानून में बदलाव लाकर सुप्रीम कोर्ट के आदेश को बदल देना चाहती थी। ताकि लोक सभा चुनाव के दौरान बिहार में लालू प्रसाद यादव के मजबूत कंधे पर चुनावी सवारी कर सके।

यूपीए सरकार यह अध्यादेश लाने की हिम्मत तब दिखा रही थी, जब देश में भ्रष्टाचार के खिलाफ आंदोलन चल रहा था। आप पीछे पढ़ चुके हैं, कैसे कैबिनेट के फैसले को बस संसद में कानून बनाया जाना था, उससे पहले ही राहुल गांधी ने खुद को भारत के प्रधानमंत्री और उनके कैबिनेट से बड़ा साबित करते हुए उस अध्यादेश को कूड़े में डाल दिया। लेकिन, वह अध्यादेश साबित कर रहा था कि भारतीय राजनीति में लालू यादव होने का क्या मतलब था, जिसे बचाने के लिए केंद्र सरकार, सुप्रीम कोर्ट का आदेश, बदल देना चाहती थी, तब जब सुप्रीम कोर्ट ने इस मामले में सरकार की पुनर्विचार याचिका तक खारिज कर दिया था।

भ्रष्टाचार के आरोप से रंगे लालू का कद इतना बड़ा था, उनकी अहमियत इतनी थी कि यूपीए सरकार सुप्रीम कोर्ट का वह आदेश बदल देना चाहती थी, जिसके पक्ष में जनता सड़क पर थी। अन्ना आंदोलन की नजर से देश भ्रष्टाचार के खिलाफ जनता का मिज़ाज जान चुका था। तब भी भ्रष्टाचारियों को बचाने के लिए सरकार की पहल काबिले गौर थी। खैर! यह संभव नहीं हो पाया और 3 अक्टूबर, 2013 को रांची की एक विशेष अदालत ने जब लालू को पांच साल की सजा

सुना दी तो उसी वक्त सुप्रीम कोर्ट का वह आदेश उन पर लागू हो गया जिसमें सज़ायाफ़्ता अपराधी को सजा पूरे होने के छह साल बाद तक किसी भी तरह के लोकतांत्रिक चुनाव लड़ने की मनाही हो गई थी। ऐसे में पहली सजा के बाद ही लालू अगले 11 साल तक चुनाव नहीं लड़ सकते थे।

उम्र के आखिरी पड़ाव पर इस लड़ाई को यदि वे सुप्रीम कोर्ट तक ले भी जाते और वहां से उन्हें राहत भी मिल जाती तो भी लालू का राजनीतिक भविष्य कहीं दिखाई नहीं दे रहा था। लालू जानते थे कि भारत में अदालती प्रक्रिया किस रफ्तार में चलती है। जिस मामले में 17 साल पहले आरोप पत्र दाखिल हुआ था उसमें अब जाकर निचली अदालत से सजा हुई थी। हालांकि, तब वे समझ रहे थे कि अदालती सुनवाई में इतना वक्त लगना सिर्फ उनके हित में था, यह फैसला यदि 10 साल पहले आ जाता तो वे कभी अपने बच्चों का राजनीतिक भविष्य नहीं बना सकते थे। लिहाजा, सजा काटने के बदले उन्होंने जमानत पर बाहर आकर, बच्चों का राजनीतिक भविष्य बनाने का फैसला कर लिया।

ये लालू के लिए हताशा का दौर था। देश में भ्रष्टाचार के खिलाफ माहौल था लिहाजा, लालू ने उस दौरान चुप्पी साध कर जमानत ले ली। देश में मोदी लहर चल रही थी और चुनाव न लड़ पाने के कानूनी शिकंजे से लालू जैसे जननेता घिरे थे। हालत यह हो गई कि 2014 के लोकसभा चुनाव में लालू के परिवार के सभी सदस्य चुनाव हार गए। महज दो ही सांसद जीतकर लोकसभा पहुंच पाए। यह राजनीति में लालू यादव का सबसे बुरा दौर था। वक्त ने एक बार फिर करवट लिया। लालू की पार्टी आरजेडी और नीतीश कुमार की पार्टी जेडीयू ने मिलकर चुनाव लड़ा और बिहार में सत्ता पर काबिज हो गए। लंबे समय बाद सत्ता मिलने से लालू और उनकी पार्टी के लोग बहुत जल्दबाजी में थे। राजनीतिक परिवेक्षकों का मानना था कि बिहार फिर जंगलराज की ओर लौट रहा था, जैसा लालू-राबड़ी राज्य में था। यह चर्चा आम होने लगी। इसी दौरान लालू परिवार के सदस्य, उनकी बेटी मीसा, दोनों बेटे तेज और तेजस्वी यादव समेत पत्नी राबड़ी देवी भी भ्रष्टाचार के आरोप में जांच के दायरे में आ गए। बिहार के मुख्यमंत्री नीतीश कुमार ने भ्रष्टाचार के आरोप में घिरे लालू के दोनों मंत्री पुत्रों को इस्तीफ़ा देने को कहा, लेकिन दोनों ने मना कर दिया। फिर नीतीश ने खुद इस्तीफ़ा दे दिया, जिससे बिहार में महागठबंधन

की सरकार गिर गई। हफ्ते भर के अंदर नाटकीय तरीके से नीतीश कुमार ने भाजपा के नेतृत्व में सरकार बना ली।

दुबारा सत्ता में आने के बाद लालू और उनके दोनों मंत्री पुत्रों के दबाव से नितीश सरकार मुक्त हो चुकी थी, लेकिन परेशानी लालू की फिर बढ़ने लगी थी। सत्ता हासिल करते ही लालू अपने पुराने अंदाज में आ गए। बिहार में अपहरण और हत्या का दौर फिर शुरू हो गया था। जेल में बंद अपराधी और लालू की पार्टी के बाहुबली सांसद शहाबुद्दीन से टेलीफोन पर हुई लालू की बातचीत सार्वजनिक हो गई, जिसमें पता चला कि कैसे एक बाहुबली, बिहार सरकार को चलाने वाले दबंग नेता को निर्देश दे रहा है।

लालू पर भ्रष्टाचार के इतने मामले चले, वे सज़ायाफ़्ता भी हो गए, लेकिन कभी मीडिया ने किसी मामले में उनसे सख्ती से सवाल किया हो, ऐसा देखने को नहीं मिला। जब कभी लालू से सख्त सवाल किए गए लालू ने उसे अपने अंदाज से हंसी-मजाक में बदल दिया। फिर इंटरव्यू का अंदाज भी बदल जाता था। लालू किसी को भी हड़का सकते थे, कोई लालू के साथ ऐसा करने की हिम्मत नहीं जुटा पाता था। तब भी नहीं, जब लालू टीवी स्टूडियो में संपादक तक को इंटरव्यू में डांट दिया करते थे। ऐसे कई वाक्ये सामने हैं जब वे चैनल के तय किए गए पत्रकार को इंटरव्यू नहीं देते थे। यह सब तब भी जारी रहा, जब वे सज़ायाफ़्ता अपराधी थे। बिहार विधानसभा चुनाव से पहले इंडिया टीवी के एक वरिष्ठ पत्रकार को इंटरव्यू देते समय साफ कहा, मैंने मना कर दिया था तुम्हें इंटरव्यू नहीं दूंगा। वे सामान्यतः संपादक तक से भी तू करके ही बात करते थे। वे विचाराधीन कैदी या अपराधी नेता किसी भी रूप में पत्रकार के सामने आए अपने अंदाज में रहे। लड़ने-झगड़ने के अंदाज में इंटरव्यू लेने वाले बड़े-बड़े पत्रकारों की घिग्धी क्यों उनके सामने बंधी रहती थी, यह आज भी रहस्य है! 'आज तक' लाने वाले सुरेंद्र प्रताप सिंह ने जो सिलसिला शुरू किया उनके शागिर्दों ने उसे बरकरार रखा। वे अक्सर कहते थे लालू का अंदाज बिकाऊ है। यह अक्सर सच साबित हुआ। लेकिन, एसपी ने कभी नहीं कहा कि भ्रष्टाचारी नेता का महिमामंडन इसलिए किया जाए, क्योंकि उसमें टीआरपी है। यह सिलसिला तब भी जारी रखा जाए जब वह पत्रकार को खुलेआम स्क्रीन पर अपमानित करें, भले ऑफ कैमरा उसे पुचकारते रहें।

ऐसे निराले अंदाज वाले लालू यादव के सामने संपादकों की घिग्धी तब बंधी दिखी, जब 2017 के शुरुआती महीने में एक टेलीफोन टेप सामने आया। उसमें लालू यादव हत्या के आरोप में जेल में बंद बिहार के कुख्यात बाहुबली और आरजेडी नेता शहाबुद्दीन से बात करते पाए गए थे। उस टेलीफोनिक बातचीत में साफ था कि जेल से शहाबुद्दीन, लालू को लगभग डपटने के अंदाज में एक पुलिस अधिकारी पर कार्रवाई का निर्देश दे रहे थे। उस वक्त नितीश सरकार में लालू सहयोगी थे। यूं कहिए कि अप्रत्यक्ष रूप से सरकार वही चला रहे थे। पैरोल पर बाहर आकर सरकार चला रहे लालू यादव और हत्या व अपहरण के कई बेहद गंभीर आरोप में जेल में बंद आरजेडी के बाहुबली नेता शहाबुद्दीन के बीच बातचीत का पूरा टेप अंग्रेजी न्यूज चैनल रिपब्लिक ने चलाया। अगले ही दिन चैनल के रिपोर्टर ने लालू से, जेल में बंद शहाबुद्दीन से बात किए जाने पर सवाल किया तो लालू ने कई बार उन्हें डपटा और माइक हटाने को कहा। जब सवाल बार-बार आया तो उन्होंने कहा, ''यहीं उठाकर पटक देंगे कि नाच जाओगे।'' पत्रकारों से ऐसी बात किसी सड़क छाप नेता के अलावा सिर्फ लालू कर सकते थे। लालू, अपनी पसंद के सवाल न किए जाने पर अक्सर पत्रकारों को अपमानित करते थे और पत्रकार बस मुस्कुरा कर उसे झेंप लेते थे। अबकि बार सवाल करने वाला रिपोर्टर झेंपने को राजी नहीं था, बहस आगे बढ़ी। लालू के समर्थकों ने रिपोर्टर को वहां से हटा दिया, बाकी चैनल के रिपोर्टर अपनी आंखों से पूरी रिपोर्ट कैद करते रहे।

किसी और चैनल ने लालू से सवाल नहीं किया कि जेल में बंद एक अपराधी से सरकार के सबसे बड़े सहयोगी दल के नेता गैरकानूनी तरीके से टेलीफोन पर बात कैसे कर सकता है? लालू के सामने मीडिया की यह स्थिति तब थी, जब वे अपने राजनीतिक करियर के उतार पर थे।

बिहार में सत्ता गंवाने के बाद चारा-घोटाला के एक मामले में सज़ायाफ़्ता लालू पैरोल पर बाहर थे और अपने दोनों बेटों का राजनीतिक करियर संवार रहे थे। उसी दौरान उनपर गाज गिरी। दिसंबर 2017 के एक ही महीने में लालू यादव को चारा घोटाला के दो अन्य मामले में सजा हो गई। नब्बे के दशक तक,देश का सबसे बड़ा घोटाला, चारा घोटाला के एक के बाद एक मामले में दोषी ठहराए

जाने के बाद, लालू की बाकी जिंदगी काल कोठरी में कटने के आसार दिखने लगे। तभी लालू ने सालों से अलमारी में रखा पिछड़ा कार्ड खेला। केंद्र की मोदी सरकार को मनुवादी बताते हुए मीडिया के सामने हल्ला बोलना शुरू कर दिया। दुबारा जेल जाने से पहले लालू ने प्रेस के सामने कहा ''ये मोदी सरकार हमें तबाह करना चाहती है। मरते दम तक सामाजिक न्याय के लिए लड़ता रहूंगा। मनुवादियों को हरा कर ही दम लूंगा''।

लालू जब मोदी सरकार पर प्रताड़ित करने का आरोप लगा रहे थे, टीवी चैनलों पर लालू का बयान हू-बहू दिखाया जा रहा था। लालू को पता था कि वे जेल जाने वाले हैं और अबकि बार लंबे समय के लिए, क्योंकि एक के बाद एक तीन मामले में जब उन्हें सजा होगी तो वे मीडिया में बयान देने के लिए जमानत नहीं ले पाएंगे। इसीलिए लालू पूरा राजनीतिक दांव आज के राजनीतिक हालात के हिसाब से खेल लेना चाहते थे। लालू अपनी राजनीतिक बाजी खेल रहे थे। खुद को पिछड़ों का नेता बताकर वे साबित कर रहे थे कि मोदी सरकार उन्हें फंसा रही है, ताकि वे एनडीए के खिलाफ कोई मजबूत विपक्ष की अगुआई न कर सकें। लालू जानते थे, अपने इस बयान का मतलब। उन्हें पता था कि वे अब कभी चुनाव नहीं लड़ सकते, लेकिन राजनीतिक दांव खेलकर वे अपने बच्चों के लिए राह आसान कर सकते थे। लालू यह भी जानते थे कि वे मोदी के सामने पिछड़ा कार्ड नहीं खेल सकते हैं, लिहाजा वे खुद को मोदी विरोधियों की अगुआई करने वाले मसीहा के रूप में पेश करना चाह रहे थे। वे जान रहे थे कि आज की तारीख में देश की राजनीति दो ध्रुवों में बंटी है- मोदी समर्थक और मोदी विरोधी। राजनीति के माहिर खिलाड़ी लालू खुद के अपराध को मोदी विरोध में शहीद होने के रूप में पेश करना चाहते थे। दिलचस्प यह है कि किसी भी मीडिया संस्थान ने लालू से यह सवाल नहीं किया कि 'वे चारा घोटाले के ढाई दशक पुराने, एक के बाद एक मामले में जेल जा रहे हैं इसमें मोदी सरकार की क्या भूमिका है?' लालू से मीडिया के द्वारा सवाल न करने और तथ्यों की सच्चाई पेश न करने के कारण आमजन में यह भ्रम बनाया जा सका कि मोदी सरकार लालू यादव जैसे कद्दावर नेता को जेल भेजकर अपने विरोध की धार को कमजोर कर रही है।

कमाल देखिए, लालू को चारा घोटाले में हुई तीसरी सजा के बाद जब लगभग साफ हो गया कि उनका राजनीतिक करियर अब खत्म हो गया तो 'द

प्रिंट' वेबसाइट के मुख्य संपादक और चेयरमैन शेखर गुप्ता ने 26 जून, 2017 को लालू यादव को मिली सजा को जाति से जोड़ते हुए लिखा.. क्या निचली जातियों के समूह के नेता ज्यादा भ्रष्ट होते हैं? शेखर गुप्ता जैसे नामचीन संपादक ने भ्रष्टाचार जैसे गंभीर मामले को जाति से जोड़ दिया। इसके लिए उन्होंने, ए. राजा, कनीमोली, मायावती, सुखराम, सुरेश कलमाड़ी तक की चर्चा की। फिर अपनी खबर में ट्विस्ट लाने के लिए संदर्भ दिया कि सुखराम तो ब्राह्मण थे। हो सकता है कि उनके पग डगमगा गए होंगे। [1] शेखर गुप्ता ने जो उदारहण दिए उसमें राजा बरी हो चुके थे, मायावती और कनीमोली पर कोई कार्रवाई नहीं हुई। कलमाड़ी जमानत पर हैं। इन सब पर गंभीर आरोप हैं, लेकिन बेहद गंभीर आरोपों को जाति से जोड़ने का काम एक नामचीन संपादक ने खबर को रोचक बनाने के लिए कर दिया। लालू जैसे ताकतवर नेता पर भ्रष्टाचार जैसे गंभीर अपराध को जाति से जोड़ने का पत्रकारिता का यह अनोखा प्रयोग था, जिसमें अदालत द्वारा सज़ायाफ़्ता अपराधी को राजनीतिक शरण देने की पत्रकारीय साजिश रची गई। यह दरअसल लालू जैसे नेता के प्रति निष्ठा थी जिसने सालों तक पत्रकारों का विशेष ख्याल रखा।

वास्तविकता यह है कि सच को जाने-अनजाने छुपाने का जो प्रयास किया गया, वह वरिष्ठ पत्रकार और बिहार की राजनीति के खासा अनुभवी संकर्षण ठाकुर की चर्चित किताब ''बंधु बिहारी'' बया करती है। अपनी किताब 'बंधु बिहारी' में वे लिखते, 'हैं 30 जुलाई, 1997 को लालू यादव ने सीबीआई कोर्ट में सरेंडर कर दिया। कोर्ट ने लालू यादव को न्यायिक हिरासत में जेल भेज दिया। लालू यादव हफ्ता भर पहले 25 जुलाई को जारी अदालत के वारंट के बाद सीएम पद से हट तो गए थे, लेकिन राज्य में उनका ही परोक्ष रूप से शासन था। वे लिखते हैं, उस समय राबड़ी देवी सीएम थीं। लालू यादव के लिए पटना स्थित बीएमपी के एक एयरकंडिशन गेस्ट हाउस को ही जेल का रूप दे दिया। राबड़ी सरकार ने इसके लिए विशेष आदेश जारी किया था। कोर्ट ने लालू यादव को जेल तो भेज दिया था, लेकिन असल में उनके लिए बहुत आराम से रहने की सहूलियत जुटा ली गयी थी। बीएमपी का यह गेस्ट हाउस कहने के लिए जेल था, लेकिन यहां तमाम सुख–सुविधाएं मौजूद थीं।

संकर्षण ठाकुर के मुताबिक एक पत्रकार उस समय लालू यादव से मिलने उस विशेष जेल में जाया करते थे। उन्होंने संकर्षण ठाकुर को बताया था कि वह कहने के लिए तो जेल था, लेकिन सच में वह एक पिकनिक स्पॉट था। जिसका खर्च राज्य सरकार उठा रही थी। वे पूरे दिन दरबार सजा कर बैठते थे। अधिकारियों से मिलते थे और उन्हें निर्देश देते थे। लालू यादव के लिए सीएम आवास से हॉटकेस में खाना आता था। जब कभी लालू यादव का मूड होता तो वे चूल्हा मंगा लेते और अपने दोस्तों के लिए मटन और चिकन बनाते।

कुछ दिन के बाद जब सुप्रीम कोर्ट के संज्ञान में ये मामला आया तो उसने इस व्यवस्था पर कठोर टिप्पणियां कीं। कोर्ट ने राबड़ी सरकार को आदेश दिया कि लालू यादव को असल जेल में भेजा जाए। इसके बाद लालू यादव को बेऊर जेल भेजा गया। असल जेल में भी लालू के लिए बहुत कुछ नहीं बदला था। तब तक सेल फोन का दौर आ चुका था लालू जेल से ही सरकार चलाने लगे। फिर भी, गेस्ट हाउस और जेल में अंतर तो था।

बिहार में गरीब गुर्बे की राजनीति करने वाले पूर्व मुख्यमंत्री कर्पूरी ठाकुर के नक्श-ए-कदम पर चलते हुए 90 के शुरुआती दौर में लालू रोज अखबार के पहले पेज पर सुर्खियों में रहने लगे। उस दौर के अखबारों में बिहार के अति दलित मुसहर समाज के गांव में जाकर बच्चों को नहला-धुलाकर बाल कटवाने से लेकर उनका चरवाहा विद्यालय रोज की खबर होती थी। लोग चटकारे लगाकर उसे पढ़ते थे। धीरे-धीरे लालू समाजिक न्याय के मसीहा के रूप में पेश किए जाने लगे। मायावती के अंदाज में ऊंची जाति के खिलाफ नफरत को हथियार बनाते हुए 'लालू ने भूरा बाल साफ करो' का नारा देना शुरू कर दिया। भूरा बाल से लालू का मतलब, बिहार की चार समृद्ध मानी जाने वाली जातियां (भूमिहार, राजपूत, ब्राह्मण और लाला (कायस्थ) को साफ करने से था। लालू के इस नारे से जहां ऊंची जाति के अंदर भय का महौल बनता था, पिछड़ी जाति को लालू के इस अंदाज में आनंद और शक्ति का एहसास होता था। दिलचस्प यह था कि उस दौर में लालू के निजी सचिव से लेकर उनके नजदीकी सलाहकार उसी भूरा बाल टीम के रहे। आज भी उनकी पार्टी के मुख्य प्रवक्ता मनोज झा उसी बिरादरी से हैं जिन्हें उस वक्त राज्य सभा का टिकट दिया गया जब राबड़ी देवी समेत कई कद्दावर नेता इसके दावेदार थे। मीडिया में भूरा बाल वालों का ही वर्चस्व रहा जिनके साथ लालू का बहुत

याराना रहा। यही कारण है कि मीडिया ने उनके भदेसपन को चटकारे लेकर बेचा तो जरूर, लेकिन उनसे सख्त सवाल कभी नहीं किया। तब भी नहीं, जब लालू नवंबर 2013 में रांची की विशेष अदालत से चारा घोटाले के पहले मामले में अपराधी साबित हो गए। सज़ायाफ़्ता लालू के अंदाज में भी बहुत बदलाव नहीं आया था। अब भी वे स्टूडियो के अंदर संपादक तक को अपमानित कर देते थे।

1990 के दशक के अंतिम दौर, खासकर 1995-97 के बीच लालू यादव भारतीय राजनीति में 'किंग मेकर' की भूमिका में आ गए थे। बिहार में भी वह गरीबों के मसीहा और सामाजिक न्याय के प्रतीक बनकर उभरे थे, लेकिन चारा घोटाले का दाग उन्हें अंदर-ही-अंदर विचलित कर रहा था। लालू ने इससे बचने के लिए तंत्र-मंत्र से लेकर कई राजनीतिक तोड़-फोड़ किए, लेकिन वह बच नहीं सके। एक तरफ लालू यादव और उनका परिवार पटना में गंगा नदी पार कर दियारा इलाके में काशी से आए एक नागा बाबा के साथ तंत्र-मंत्र कर रहा था और इधर सीबीआई उनके खिलाफ चार्जशीट दाखिल करने की तैयारी कर रही थी।[2]

तंत्र-मंत्र कर जब सीएम लालू यादव सरकारी आवास 1 अणे मार्ग पहुंचे और टीवी ऑन किया तो देखा कि खबर आ रही है कि सीबीआई उन्हें आरोपी बनाने जा रही है। सीबीआई के तत्कालीन डायरेक्टर जोगिंदर सिंह सभी चैनलों पर छाए हुए थे। सिंह कह रहे थे कि उनके पास इस बात के पर्याप्त सबूत हैं कि बिहार के सीएम लालू यादव को आरोपी बनाया जा सके। टीवी पर यह खबर देख लालू आगबबूला हो उठे थे। उन्होंने तुरंत प्रधानमंत्री इंदर कुमार गुजराल को फोन किया। लालू ने उस वक्त पीएम गुजराल को हड़काते हुए पूछा था, **"क्या हो रहा है ये सब? ये सब क्या बकवास करवा रहे हैं आप? एक पीएम को हटा के आपको बनाया और आप भी वही काम करवा रहे हैं।"** शायद पीएम गुजराल ने उधर से धीमी आवाज में कुछ कहा होगा, लेकिन जब तक कि वह अपनी बात कहते, लालू यादव ने फोन रख दिया था। वह देश के प्रधानमंत्री थे जिसके लिए किसी सदन का सदस्य होना जरूरी होता है। पाकिस्तान के पंजाब से विस्थापित होकर जालंधर में रहे गुजराल को लालू यादव ने ही बिहार की राजधानी पटना से लोकसभा चुनाव लड़वाया। आरोप है कि उन्हें जितवाने के लिए इतनी धांधली हुई कि चुनाव आयोग ने चुनाव रद्द कर दिया। तब लालू ने फिर गुजराल को पटना से

ही राज्यसभा के माध्यम से सदन में भेज दिया। फिर प्रधानमंत्री की महात्वाकांक्षा पाले लालू यादव को जब लगा कि उनके बदले मुलायम रेस में आगे हैं तो उन्होंने गुजराल के नाम की पेशकश कर दी। गुजराल का जब नाम तय हुआ तो वह सो रहे थे। लालू ने ही फोन कर उन्हें जगाया। उठो गाड़ी भेज रहा हूं ! तुम्हें प्रधानमंत्री बनना है। [3]

गुजराल को यह एहसास था कि वे आज जो कुछ भी हैं, लालू की वजह से हैं। इसीलिए वह प्रधानमंत्री होते हुए भी लालू की डांट सुनकर चुप रह गए। लालू के एहसान की कीमत चुकाने के लिए वे बेबस थे। सीबीआई घोषणा कर चुकी थी कि उसने लालू के खिलाफ चार्जशीट तैयार कर लिया है। यही देश के प्रधानमंत्री के भाग्यविधाता की परेशानी थी। इसीलिए गुजराल ने प्रधानमंत्री पद की गरिमा के खिलाफ जाकर एक दागी नेता के खिलाफ कार्रवाई करने वाली सीबीआई के तत्कालीन डायरेक्टर जोगिंदर सिंह को पद से हटा दिया। उनकी जगह अपने पसंदीदा आरसी शर्मा को सीबीआई का डायरेक्टर बना दिया, लेकिन तब तक तीर कमान से निकल चुका था। [4]

गुजराल को प्रधानमंत्री बने अभी एक महीने भी नहीं हुए थे, लेकिन किंग मेकर रहे लालू यादव की समस्या उभरकर आ चुकी थी। इसके बाद लालू यादव ने पूर्व प्रधानमंत्री चंद्रशेखर से भी बात की। 27 अप्रैल, 1997 की रात लालू यादव ने केंद्र की संयुक्त मोर्चा सरकार के घटक दलों के नेताओं से बात की। इनमें चंद्रबाबू नायडू, ज्योति बसु, इंद्रजीत गुप्ता, शरद यादव भी शामिल थे। सभी लोगों की एक ही राय थी कि अगर लालू यादव के खिलाफ चार्जशीट दायर होती है तो उन्हें इस्तीफा देना होगा। इसके अगले ही दिन लालू यादव ने प्रेस कांफ्रेंस कर कहा था कि अगर सीबीआई उन्हें आरोपी बनाती है तो वो सीएम पद से इस्तीफा नहीं देंगे, क्योंकि उन्हें बिहार की जनता ने जनादेश दिया है।[5]

इसके बाद 17 जून, 1997 को बिहार के राज्यपाल एआर किदवई ने मुख्यमंत्री लालू यादव के खिलाफ चार्जशीट दाखिल करने की अनुमति दे दी। इसके एक हफ्ते बाद 23 जून, 1997 को लालू समेत 25 लोगों के खिलाफ सीबीआई ने विशेष अदालत में चार्जशीट दायर कर दिया। बिहार के तथाकथित मसीहा अब दागी हो चुके थे। उनकी पार्टी जनता दल के अधिकांश लोगों का मानना था कि लालू को इस्तीफा दे देना चाहिए, लेकिन लालू इस्तीफा नहीं देने पर अड़े थे।

4 जुलाई, 1997 को पीएम आई के गुजराल ने डिनर पर सत्ताधारी पार्टियों के सभी बड़े नेताओं को बुलाया था। उस पार्टी में लालू भी शामिल हुए थे। वहां भी लालू मोलभाव कर रहे थे। तब उन्होंने कहा था कि उन्हें अगर पार्टी के अध्यक्ष पद पर रहने दिया जाता है तो वह सीएम की कुर्सी छोड़ देंगे। उन्होंने अध्यक्ष पद के लिए होने वाले चुनाव से शरद यादव को हट जाने को कहा था, मगर ऐसा नहीं हुआ। इसके बाद 5 जुलाई, 1997 को लालू यादव ने पार्टी (जनता दल) को तोड़ते हुए अपनी नई पार्टी राष्ट्रीय जनता दल का गठन कर लिया। इसमें जनता दल के 22 में से 18 लोकसभा सांसद शामिल हो गए थे। राज्यसभा के भी 6 सांसद लालू की पार्टी में शामिल हो गए थे। इसके बाद लालू यादव ने सबको अचंभे में डालते हुए अपने पद से इस्तीफा दे दिया था और पत्नी राबड़ी देवी को सीएम बनवाया था। 25 जुलाई, 1997 को राबड़ी देवी ने किचेन से निकलकर सीधे बिहार के मुख्यमंत्री पद की शपथ ली थी। इसके बाद लालू ने रांची की अदालत में समर्पण कर दिया था। 30 जुलाई, 1997 को उन्हें कोर्ट ने जेल भेज दिया था।[6]

यह वह दौर था जब कांग्रेस बाहर से संयुक्त मोर्चा सरकार को समर्थन दे रही थी और लालू खुद को किंगमेकर मानते थे। यह वही दौर था जब लालू कहा करते थे कि एक दिन वे भारत का प्रधानमंत्री जरूर बनेंगे, उन्हें कोई नहीं रोक पाएगा। संकर्षण ठाकुर की किताब 'बंधु बिहारी' एक दस्तावेज के रूप में है जो याद दिलाता है कि कैसे जननायक होने के अहंकार में लालू जैसे नेता ईश्वर को चुनौती देते थे। खुद को किंगमेकर कहते थे। विधि का विधान देखिए, जब उन पर चारा घोटाला का आरोप पत्र दाखिल किया गया और वे उस आरोप में जेल गए तो देश की सत्ता उनके हाथ में थी जिसे किंग बनाने का अहंकार लालू पाल रहे थे। यह सब कुछ कोई सैकड़ों साल पुरानी बात नहीं थी जिसे इतिहास में छेड़छाड़ कर इसे झुठलाया जा सके, लेकिन भारतीय मीडिया ने यह बताना मुनासिब नहीं समझा कि लालू को किसी मामले में फंसाने या उस पर आरोप होने में मोदी सरकार की कोई भूमिका नहीं है। लालू अपने समर्थकों में सहानुभूति हासिल करने के लिए जो झूठ परोस रहे थे मीडिया उसका हिस्सा बन रही थी। बीतते वक्त में विस्मृत होतीं यादें, मानवीय प्रकृति है। लेकिन, अपराध की सजा में जेल जा रहे नेता द्वारा इतिहास की गलत व्याख्या पर मीडिया की चुप्पी संदेह पैदा करता है।

दिलचस्प यह है कि लालू यादव को चारा घोटाले में जो पहली सजा मिली उसमें आरोप पत्र दाखिल किए जाने के बाद 16 साल से ज्यादा का वक्त लग गया। लालू को हुई उस सजा के कुछ ही माह पहले सुप्रीम कोर्ट का ऐतिहासिक फैसला आया था जिसमें दोषियों को चुनाव लड़ने पर रोक लगा दी गई थी। लेकिन सुप्रीम कोर्ट के इस आदेश के बाद एक जनहित याचिका दाखिल कर आरोप लगाया गया कि प्रभावशाली विचाराधीन कैदी का मामला अदालत में लंबे समय तक लंबित रहता है, जिससे सुप्रीम कोर्ट द्वारा नेताओं के ऊपर सख्ती वाले आदेश का कोई खास असर नहीं होता। इस अर्जी पर सुनवाई करते हुए सुप्रीम कोर्ट ने केंद्र सरकार को निर्देश दिया कि वह 2014 के लोक सभा चुनाव के बाद जारी आंकड़े जिसमें बताया गया था कि देश भर में 1581 सांसद और विधायक हैं जिन पर आपराधिक मामले हैं, उन सभी के खिलाफ फास्ट ट्रैक कोर्ट में मामला चलाया जाए। सुप्रीम कोर्ट अपने उस आदेश के एक साल बाद दिसंबर 2017 में सरकार से पूछा था कि वह बताए कि आपराधिक छवि वाले राजनेताओं के खिलाफ आपराधिक मामले की सुनवाई किस स्थिति में है। लालू यादव को उन मामलों में सजा हो रही है जिन मामलों में लगभग ढाई दशक पूर्व उन्हें नामजद किया गया था। लालू के साथ इस मामले में राज्य के एक और पूर्व मुख्यमंत्री जगन्नाथ मिश्र को भी सजा हुई। जिनकी चर्चा अक्सर नहीं होती, क्योंकि मीडिया को उनमें कोई रुचि नहीं थी। उस जगन्नाथ मिश्र (अब दिवंगत) में जो लालू से पहले बिहार के सबसे प्रभावशाली मुख्यमंत्री थे। सुप्रीम कोर्ट के आदेश के बाद एक साल के अंदर नेताओं के खिलाफ जो सख्ती हुई उसमें देश की सबसे बड़ी अदालत की भूमिका है, उसे भी नजरअंदाज किया गया। लालू जैसे नेता अपने खिलाफ जाते सुप्रीम कोर्ट के आदेश को भी अपने पक्ष में राजनीतिक लाभ हासिल करने में माहिर रहे हैं।

गुजरात दंगा और लुटियन मीडिया

27 फरवरी, 2002 को गोधरा में साबरमती एक्सप्रेस की एक बॉगी में आग लगा कर 59 लोगों को जिंदा जला दिया गया था। तब गुजरात सरकार को पूरे गुजरात में दंगा भड़कने की आशंका हो चुकी थी। इसे रोकने के लिए मोदी सरकार ने तत्काल कदम उठाते हुए 217 लोगों को हिरासत में लिया था जिसमें 137 हिंदू और 80 मुसलमान थे। दंगे को दौरान गुजरात पुलिस ने अश्रुगैस के 5,369 गोले दागे।

इसके अलावा 1,03,559 राउंड गोलियां चलाई गईं। पूरे दंगे के दौरान 66,268 हिंदू और10,861 मुसलमानों को प्रिवेंटिव डिटेंशन लॉ के तहत हिरासत में लिया गया। दंगे के दौरान और उसके बाद 28 अप्रैल, 2002 तक हिंसा और आपराधिक मामले में 35,552 लोगों की गिरफ्तारी हो चुकी थी जिसमें 27,901 हिंदू थे। 2002 के बाद पूरे गुजरात में न तो एक भी दंगा हुआ, न ही कभी कर्फ्यू लगा।[7] वर्ष 2005 में राज्यसभा में पूछे गए एक सवाल के जवाब में देश के तत्कालीन गृह राज्यमंत्री श्रीप्रकाश जायसवाल ने गुजरात दंगा से जुड़े आंकड़े पेश किए थे। इन आंकड़ों के मुताबिक गोधरा के बाद गुजरात में भड़के दंगे में कुल 1,044 लोगों की मौत हुई,जिसमें 790 मुसलमान और 254 हिंदू शामिल थे। गुजरात दंगे के बाद आए अदालती फैसले ने साबित किया दंगे में हिंदू और मुसलमान दोनों शामिल थे और दोनों ने एक-दूसरे को नुकसान पहुंचाया। अदालत से जो 19 मामले में सजा दी गई उसमें 184 हिंदू और 65 मुसलमान थे। ये अलग बात है कि गोधरा में साबरमती ट्रेन में आग लगाने के बाद 59 लोगों को जिंदा जलाने के मामले में सज़ायाफ़्ता सभी लोग सिर्फ मुसलमान थे। मीडिया ने इस खबर को कभी नहीं दिखाया। [8]

गोधरा में ट्रेन की बॉगी में जिंदा जलाए गए सभी 59 लोग कारसेवक थे और उनकी हत्या करने वालों के मजहब की जानकारी मीडिया ने *प्रेस काउंसिल ऑफ इंडिया* के नियम के तहत बंधे होने के कारण नहीं दी। लेकिन, 1 मार्च को जब गुजरात के बड़े हिस्से में गोधरा नरसंहार की प्रतिक्रिया में दंगा शुरू हुआ तो मीडिया न सिर्फ गोधरा में जिंदा जलाए गए कारसेवकों के परिजनों के दर्द को हमेशा के लिए भुला दिया, बल्कि खुलेआम यह बताना शुरू कर दिया कि गुजरात के किस शहर में मुसलमान की हत्या की जा रही है। उस वक्त *स्टार न्यूज* के बैनर तले रिपोर्टिंग कर रहे राजदीप और बरखा दत्त ने पत्रकारिता के मूलभूत मानक को तोड़ते हुए दंगाइयों को हिंदू और पीड़ित को मुसलमान बताना शुरू कर दिया।

आप पीछे पढ़ चुके हैं.. यूट्यूब पर चर्चित 'न्यूज लॉन्ड्री' शो में वरिष्ठ पत्रकार मधु त्रेहान ने जब राजदीप से यह सवाल किया कि आप लोगों ने गुजरात दंगे के दौरान दंगाइयों के मजहब बताए, ऐसा कभी हुआ नहीं था। आप ने यह परंपरा शुरू की। राजदीप ने बिना संकोच के जवाब दिया कि हमें लगा कि सिर्फ यह कहना

कि मरने वाले खास मजहब के थे, मारने वाले खास मजहब के यह ठीक नहीं था। जबकि, दो दिन पहले ही गोधरा नरसंहार में इन पत्रकारों ने न तो हत्यारों के मजहब नहीं बताए, न ही पीड़ित के। कमाल यह है कि गोधरा के बाद भड़के दंगे में दोनों मजहब के लोग पीड़ित थे। लेकिन, मेन स्ट्रीम मीडिया ने इसे ऐसे पेश किया, मानो गुजरात दंगे में सिर्फ मुसलमान ही पीड़ित थे। आंकड़े इसकी गवाही दे रहे हैं कि मीडिया ने गुजरात दंगे की एकतरफा रिपोर्टिंग की।

2002 के बाद मीडिया ने ऐसा माहौल बनाया, मानो इस देश में एक ही दंगा हुआ हो, वह भी 2002 में, न उससे पहले, न उसके बाद। जबकि, सच तो यह है कि आजाद भारत में करीब-करीब पच्चीस हजार दंगे हुए हैं। केवल गुजरात में ही 1947 से 2002 तक ग्यारह हजार दंगे हो चुके हैं। लेकिन, ऐसा कोई रिकार्ड नहीं कि 2002 से पहले के किसी दंगे में हिंसा के शिकार हुए मुसलमान या किसी अन्य धर्म के लोगों को स्थानीय प्रशासन या अदालत से न्याय मिला हो। उदाहरण के लिए 1984 दंगा को ही ले लीजिए! आज तक इसके आरोपी कांग्रेसी नेता, सज्जन कुमार, जगदीश टाइटलर, कमलनाथ या अब स्वर्गीय हो चुके एचकेएल भगत बस पुलिस की फाइलों में ही नामजद रहे। मामले के साढ़े तीन दशक बाद भी दंगाइयों के खिलाफ मामले की फाइलें अदालत में धूल फांक रही हैं। जानकार, इंदिरा गांधी की मौत के बाद भड़के हिंसा को दंगा नहीं मानते, क्योंकि इसमें एकतरफा नरसंहार हुआ था। सरकारी आकड़ों के मुताबिक 84 के सिख-विरोधी दंगे में तीन हजार सिख मारे गए थे। इस मामले को मीडिया ने कभी गंभीरता से नहीं लिया, तब भी जब वारदात के समय दर्ज 650 केस में से ज्यादातर को बंद कर दिए गया। हाल में केंद्र मोदी सरकार ने सुप्रीम कोर्ट में अर्जी लगा कर 186 गंभीर मामले जिसे एसआईटी ने बंद कर दिया था, पुनः जांच की अनुमति मांगी, जिसे स्वीकार कर लिया गया। 1984 के सिख दंगा के अलावा जितने भी चर्चित दंगे देश में याद किए जाते हैं उनमें 1969 के गुजरात दंगे, जिसमें करीब पांच हजार मुसलमानों का कत्लेआम हुआ, 1987 के मेरठ मलियाना, हाशिमपुरा दंगा, जिसे वरिष्ठ पत्रकार कुलदीप नैयर ने हिटलर द्वारा यहूदियों के कत्लेआम की संज्ञा दी थी। इसमें 51 हिंदू और 295 मुसलमान मारे गए थे। दंगे की शुरुआत 10 हिंदुओं की हत्या से हुई थी। अयोध्या में मंदिर का ताला खुलवाने के राजीव गांधी सरकार के फैसले से नाराज मुसलमानों ने जो शुरुआत की, उसकी परिणति नरसंहार से हुई।

1983 के असम दंगे, सरकारी आंकड़ों के हिसाब से इस दंगे में 2,200 मुसलमान मारे गए थे। 1989 में बिहार में चर्चित भागलपुर दंगा ने प्रदेश से हमेशा के लिए कांग्रेस के प्रभुत्व को खत्म कर दिया। शिलापूजन के दौरान भड़के हिंसा के बाद दंगा में बड़ी संख्या में दोनों मजहब को लोग मारे गए जिसमें मुसलमानों की संख्या ज्यादा थी। इस दंगे के बाद इंसाफ दिलाने के वादे के बाद लालू यादव मुसलमानों के मसीहा के रूप में उभरे थे। लेकिन, लालू राबड़ी के 16 साल के कार्यकाल के बाद भी पीड़ितों को इंसाफ नहीं मिला। सुप्रीम कोर्ट की सख्ती के बाद 2017 में इस मामले के दोषियों को सजा मिली। दिलचस्प यह कि सजा पाए दोषी कामेश्वर यादव, महादेव यादव और सल्लन मियां का जुड़ाव हमेशा से लालू के पार्टी से रहा। मीडिया ने कभी इसे मुद्दा नहीं बनाया। इन सभी दंगे के दौरान केंद्र और राज्य दोनों जगह कांग्रेस का शासन रहा।

हाल के वर्षों में सबसे चर्चित दंगा 27 अगस्त, 2013 को मुजफ्फरनगर में तिहरा हत्याकांड के बाद भड़का। इस सांप्रदायिक दंगे में 62 लोगों की जान गई थी और 50 हजार से ज्यादा लोग शरणार्थी शिविरों में रहने को विवश हुए थे। मरने वालों में 42 मुस्लिम और 20 हिंदू थे। मुजफ्फरनगर दंगा प्रशासन की एक लापरवाही का ही परिणाम था, जिसे मीडिया ने बहुत तवज्जो नहीं दी।

इतिहास गवाह है कि देश भर में 2002 से ज्यादा भयावह दंगे को मीडिया ने 2002 से पहले और बाद में भी तवज्जो नहीं दी। सिने जगत के सुपर स्टार सलमान खान के पिता और मशहूर पटकथा लेखक 'सलीम जावेद' के सलीम ने एक साक्षात्कार के दौरान कहा था, "मुंबई दंगे के समय महाराष्ट्र का मुख्यमंत्री कौन था? क्या वो दंगा 2002 के गुजरात दंगे से कम भीषण था? मेरठ मलियाना दंगे, भागलपुर दंगे और जमशेदपुर दंगे के समय उत्तर प्रदेश और बिहार के मुख्यमंत्री कौन थे? क्या किसी को याद है?" उनका सवाल वाजिब था, लेकिन मेन स्ट्रीम मीडिया के लिए इसका जवाब मुश्किल।

27 फरवरी, 2002 को गोधरा नरसंहार के बाद अगले ही दिन गुजरात के कई शहरों में दंगा भड़क गया। मोदी सरकार ने 24 घंटे के अंदर गुजरात के तीन पड़ोसी राज्यों महाराष्ट्र, राजस्थान और मध्य प्रदेश से पुलिस सहायता मांगी, लेकिन तीन राज्यों की कांग्रेस सरकार ने फोर्स देने से मना कर दिया। अगले ही दिन एक मार्च को मोदी सरकार ने सेना की मदद ली और दंगाइयों को देखते ही गोली मारने का

आदेश जारी किया। उसी दिन मोदी सरकार ने प्रेस रिलीज जारी कर मीडिया से अपील की कि किसी भी सूचना को बिना सत्यापित किए खबर न बनाए। सरकारी प्रेस रिलीज में पत्रकारिता के नैतिक सिद्धांत को याद दिलाते हुए आग्रह किया गया कि मीडिया अपनी नैतिकता का पालन करते हुए किसी भी समुदाय का नाम न ले। यह भी कहा गया कि मृत व्यक्तियों के नाम न लिए जाएं। आपने पीछे पढ़ा कि कैसे गुजरात दंगा में सक्रिय राजदीप और बरखा दत्त जैसे पत्रकारों ने गुजरात सरकार की अपील और *प्रेस काउंसिल ऑफ इंडिया* द्वारा तय सभी मानकों को ध्वस्त करते रिपोर्टिंग में लगातार दंगाइयों व पीड़ितों की धार्मिक पहचान उजागर करते रहे जिससे दंगा और भड़का। राजदीप सरदेसाई ने मधु त्रेहान को दिए इंटरव्यू में यह स्वीकार किया जिसे आप पीछे पढ चुके हैं। कमाल हैः गुजरात दंगे की रिपोर्टिंग के लिए राजदीप और बरखा दत्त को पद्म पुरस्कार मिल चुका है। उस दौर के अंग्रेजी अखबारों के संपादकीय को पढ़कर प्रतीत होता था, मानो उन्होंने गुजरात सरकार के खिलाफ जेहाद छेड़ रखा हो। वे गोधरा और गुजरात दंगे में फर्क करते हुए लगातार लिख रहे थे। गोधरा और उसके बाद भड़के दंगे का अध्ययन कर एक रिपोर्ट तैयार करने के लिए 'कॉउंसिल फॉर इंटरनेशनल एन्ड ह्यूमेन राइट्स' ने जस्टिस डीएस तेवतिया के नेतृत्व में एक शोध दल का गठन किया था। पहली अप्रैल से सात अप्रैल तक गुजरात के दंगा पीड़ित क्षेत्रों का दौरा और पीड़ितों से बात करने के बाद तैयार रिपोर्ट में कहा गया कि दिल्ली की मीडिया ने दंगों की वस्तुनिष्ठ रिपोर्टिंग नहीं की और पूरे गुजरात के प्रति एक साजिश के तहत काम किया। वहीं ज्यादातर स्थानीय मीडिया ने दंगों की रिपोर्टिंग में सांप्रदायिकता को भड़कने से रोकने और सौहार्दपूर्ण वातावरण के निर्माण का काम किया।[9]

तेवतिया रिपोर्ट के मुताबिक अधिकांश राष्ट्रीय अखबार और टीवी चैनलों ने गोधरा की घटना के लिए साबरमती एक्सप्रेस से लौट रहे तीर्थयात्रियों पर ही सारा दोषारोपण कर रहे थे। दंगे के दौरान किसी समुदाय या इलाके का नाम न लेने की सरकारी घोषणा और चेतावनी का भी दिल्ली की मीडिया पर कोई असर नहीं हो रहा था। अपनी व्यक्तिपरक रिपोर्टिंग को दिखाकर मीडिया उन क्षेत्रों में भी दंगे की आग भड़का रही थी जो दंगे से अछूता था। तेवतिया कमेटी ने साफ किया कि दिल्ली की मीडिया खुलेआम गुजरात दंगे को राज्य प्रायोजित आतंकवाद करार दे रही थी।

इशरत जहां व सोहराबुद्दीन एनकाउंटर

18 अप्रैल, 2014 को गुजरात में एक रैली को संबोधित करते हुए कांग्रेस के वरिष्ठ नेता एवं पूर्व कानून मंत्री कपिल सिब्बल, एनडीए के प्रधानमंत्री पद के उम्मीदवार नरेंद्र मोदी और भाजपा नेता अमित शाह को जेल न भेज पाने का रोना रो रहे थे। एक जनसभा को संबोधित करते हुए कपिल सिब्बल ने 'कहा मेरे जैसे वकील का मानना है कि इशरत जहां और उसके साथ तीन लोगों के फर्जी मुठभेड़ में मारे जाने के पुख्ता सबूत हैं। मैं पूछना चाहता हूं कि कौन है जो उन्हें बचा रहा है? मोदी और शाह के खिलाफ सबूत के बावजूद उन्हें बचाया गया। मोदी के जानकारी के बगैर यह संभव नहीं था'। सिब्बल यहीं नहीं रुके, उन्होंने कहा 'आईपीसी की धारा 164 के तहत मोदी और शाह के खिलाफ पुलिस अधिकारियों के बयान हैं। गिरफ्तार अधिकारी डीजी बंजारा ने कहा कि फील्ड अधिकारी होने के नाते मैंने बस सरकार की नीतियों को कार्यान्वित किया।' [10]

लगातार दस साल तक केंद्र की सत्ता में काबिज रहने के बाद भी यूपीए सरकार द्वारा, 2014 के लोकसभा चुनाव प्रचार के दौरान जनसभा में नरेंद्र मोदी को जेल न भेज पाने को सिस्टम की लाचारी बताना हैरान करने वाला था। पूरे दस साल तक गुजरात दंगा के लिए नरेंद्र मोदी को घेरने की हर कोशिश नाकाम हो चुकी थी। सुप्रीम कोर्ट द्वारा बनाई गई एसआईटी ने लोक सभा चुनाव से लगभग एक साल पहले ही नरेंद्र मोदी को क्लीनचिट दे दी थी। लिहाजा, यूपीए सरकार ने हालात को समझते हुए गुजरात दंगे की बात तो नहीं की, लेकिन जिस इशरत जहां को खुद केंद्र सरकार लश्कर-ए-तोयबा का बता चुकी थी उसे ही संत साबित करने को आतुर थी। एनकाउंटर में मारे गए जिस हिस्ट्रीशीटर सोहराबुद्दीन को पांच राज्यों की पुलिस तलाश कर रही थी, उसे शहीद बनाने को आतुर थी केंद्र की यूपीए सरकार। दिलचस्प यह कि देश की मीडिया का एक बड़ा तबका, सोहराबुद्दीन और इशरत को इंसाफ दिलाने के लिए इस कदर बेचैन था कि शायद ही कोई दिन हो जिसमें टीवी चैनल ने इशरत जहां या सोहराबुद्दीन के पुलिस मुठभेड़ में मारे जाने की शहादत पूर्ण स्टोरी न की हो। सालों तक एनडीटीवी ने तो मानो इसे एक मुहिम की तरह चलाया, जिसमें सोहराबुद्दीन और इशरत के लिए हमदर्दी साफ देखी जा रही थी।

एनएचआरसी के रिकार्ड बताते हैं कि 2004 से 2014 तक उत्तर प्रदेश में 716 एनकाउटंर हुए जिसमें 131 फर्जी थे, महाराष्ट्र में 61 में 17, दिल्ली में 22 में आठ, वहीं गुजरात में 20 में 12 फर्जी साबित हुए। जम्मू कश्मीर में दस और असम में 11 में एक भी फर्जी नहीं थे। आकंड़े हर राज्यों के हैं। यह एक आम धारणा है कि हिस्ट्रीशीटर और संदिग्ध आतंकियों के सफाया के लिए दुनिया भर की पुलिस एनकाउंटर का सहारा लेती है। लेकिन, जब कभी ऐसे एनकाउंटर में निर्दोष के मारे जाने का संदेह होता है पुलिस की परेशानी बढ़ जाती है। पुलिस पर ऐसे आरोपों की भी कमी नहीं है जिसमें बारी से पहले प्रमोशन पाने के लिए एनकाउंटर करने का मामला सामने आया। कई मामले में तो पुलिस के अधिकारी को उम्र कैद तक की सजा हुई। एक वाक्या तो राजधानी दिल्ली का ही हैं, जिसमें दिल्ली के एसीपी एसएस राठी समेत दस पुलिसकर्मियों को निचली अदालत से लेकर सुप्रीम कोर्ट ने उम्रकैद की सजा दी। राठी की टीम पर आरोप था कि उन्होंने 31 मार्च, 1997 को हरियाणा के दो व्यापारियों की हत्या उन्हीं की कार में कर दी। दरअसल, पुलिस वालों को यूपी के दो गैंगस्टर की तलाश थी, उन्हें सूचना थी कि बदमाश दिल्ली के कनॉट प्लेस में हैं। संदेह के आधार पर ताबड़तोड़ गोलियां चलाकर पुलिस वालों ने निर्दोष व्यापारियों की हत्या कर दी। 20 साल तक वह अदालती लड़ाई लड़ते रहे। आखिरकार उन्हें सुप्रीम कोर्ट से भी कोई रियायत नहीं मिली। देश में ऐसे उदाहरण विरले हैं जिसमें सुप्रीम कोर्ट पुलिस वालों को एनकाउंटर में उम्रकैद की सजा मिली हो। एनकाउंटर के ज्यांदातर केस दशकों तक अदालत में तारीख की प्रक्रिया से गुजरती है और फिर सबूत न मिलने की कहानी के साथ बंद हो जाती रही है। कब तारीख लगी, कब केस बंद हो गया, किसी को पता ही नहीं चला। लेकिन, देश भर में इसकी दूसरी कोई मिसाल रिकार्ड में नजर नहीं आता जिसमें एनकाउंटर के केस में राज्य के आला अधिकारियों के साथ-साथ राज्य के गृहमंत्री से लेकर मुख्यमंत्री तक को सालों तक घसीटा गया। इसे चुनावी मुद्दा बनाया गया। तब भी जब पूरा मामला सुप्रीम कोर्ट की निगरानी में चला। मीडिया के एक धड़े के सहारे सरकार ने अपने विरोधियों के खिलाफ एनकाउंटर को ही चुनावी मुद्दा बनाया गया।

राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग के मुताबिक 21वीं सदी में मोदी काल से पहले 14 सालों में देश भर में देढ़ हजार से ज्यादा एनकाउंटर हुए। अकेले 2009

से 2014 के बीच यूपीए-2 के दौरान देश भर में लगभग छह सौ से ज्यादा एनकाउंटर हुए, जिसमें एक भी गुजरात में नहीं हुए। लेकिन, देश को इस दौरान के एक भी एनकाउंटर के बारे में कानों-कान खबर नहीं हुई। गुजरात में 2004 में इशरत जहां और 2005 में सोहराबुद्दीन एनकाउंटर के अलावा किसी भी मामले पर कभी कोई हंगामा नहीं हुआ। किसी भी एनकाउंटर पर कभी कोई राजनीति नहीं हुई। मीडिया ने इन दो एनकाउंटर के अलावा किसी एनकाउंटर के बारे में शायद की कभी रिपोर्टिंग की। लेकिन, कुछ चैनलों ने लगातार दस साल तक शायद ही कोई दिन ऐसा छोड़ा जिस दिन इशरत जहां या सोहराबुद्दीन पर रिपोर्ट तैयार नहीं की। बिहार के मुख्यमंत्री नीतीश कुमार ने तो राजनीति का स्तर यहां तक पहुंचा दिया कि इशरत जहां को बिहार की बेटी बता दिया। नजर साफ अल्पसंख्यक वोट में सेंध लगाने की थी।

इतिहास में ऐसा कोई उदाहरण नहीं कि देश की दो सर्वश्रेष्ठ खुफिया एजेंसियां आईबी और सीबीआई को आपस में लड़ाने का काम हुआ हो। हालात यहां तक पहुंचे कि इशरत जहां मामले में दोनों जांच एजेंसियों को केंद्र की सरकार ने विदेशी फंडों से चलने वाली एनजीओ और मीडिया के मार्फत बदनाम करने का खेल खेला। यह सब सिर्फ गुजरात के एक मुख्यमंत्री को बदनाम करने के लिए। यह बदनामी सिर्फ इसलिए, ताकि देश में एकमुश्त मुस्लिम वोट की ठेकेदारी हो सके।

इशरत जहां लश्कर-ए-तोयबा की आतंकी थी। उसके पति जावेद शेख उर्फ प्राणेश पिल्लेई और साथी जीशान जौहर को गुजरात पुलिस ने 15 जून, 2004 को अहमदावाद के बाहरी इलाके में मार गिराया था। इनके मारे जाने पर, पाकिस्तान के अखबार *गाजबा टाइम्स* ने भी समाचार छापा था। उसमें लिखा गया था कि लश्कर के तीन आतंकियों को गुजरात पुलिस ने शहीद कर दिया। 6 अगस्त, 2009 को केंद्र की मनमोहन सरकार की गृहमंत्रालय की ओर से गुजरात हाईकोर्ट में दाखिल अपने हलफनामा में इशरत और उसके साथियों को लश्कर के आतंकी बताते हुए मामले की सीबीआई जांच का विरोध किया था। लेकिन, दो महीने के अंदर ही 30 सितंबर, 2009 गृहमंत्री पी. चिदंबरम के दबाव में सरकार ने हलफनामा बदल लिया।[11] फिर चिदंबरम से नजदीकी संबंध वाले *एनडीटीवी* समेत मीडिया के बड़े धड़े ने इशरत को संत साबित करने का मानो

ठेका ले लिया। गुजरात पुलिस के बहाने नरेंद्र मोदी को घेरने का खेल शुरू हुआ जिसमें गुजरात दंगे मामले में पीड़ितों की तरफ से एक के बाद एक याचिका दाखिल कर लाखों की कमाई करने का आरोप झेल रही समाजसेवी तिस्ता सीतलवाड़ समेत बॉलीवुड के नामचीन हस्ती जावेद अख्तर व मशहूर वकील प्रशांत भूषण ने हिस्सा लेना शुरू कर दिया।

केंद्र सरकार की खुफिया एजेंसी आईबी के इनपुट के मुताबिक इशरत जहां, लश्कर के आत्मघाती दस्ते की महिला सदस्य थी, जो गुजरात के तत्कालीन मुख्यमंत्री नरेंद्र मोदी पर आत्मघाती हमला करने आई थी। आईबी के संयुक्त निदेशक राजेंद्र सिंह की टीम इस इनपुट पर काम कर रही थी। हद तो यह कि संत बनाई जा रही लश्कर की आतंकी इशरत की मां की चाह पर राजेंद्र सिंह के प्रतिद्वंद्वी रहे सीबीआई के अधिकारी सतीश वर्मा को इशरत का केस दिया गया, ताकि राजेंद्र सिंह पर नकेल कसा जा सके। देश के इतिहास में सीबीआई के अधिकारी चयन करने के लिए अपराधी के परिजन की चाह का ख्याल रखने का यह अनोखा मामला था। इसी घटना के बाद पहली बार आईबी का निदेशक एक मुस्लिम अधिकारी को बनाया गया। मीडिया के सामने जिसकी मार्केटिंग खुद गृहमंत्री सुशील कुमार शिंदे ने की। शिंदे ने देश को जताया कि सोनिया जी के कारण ही एक मुसलमान देश का आईबी निदेशक बना। कमाल यह है कि जिस आईबी निदेशक का नाम देश सामान्यतः नहीं जानता था गृहमंत्री ने उसके नाम का खुलासा पहले ही कर दिया। यह सब पूरा खेल सिर्फ इशरत जहां को संत साबित कर, मोदी पर नकेल कसने के लिए, ताकि पूरे देश की मुस्लिम आबादी कांग्रेस के अहसान को मान सके। यह सब तब जब इशरत जहां पर भारत की सबसे बड़ी खुफिया एजेंसी की रिपोर्ट साफ थी। जिसके बारे में पाकिस्तान मूल के, अमेरिकी जेल में बंद 9/11 के आतंकी, डेविड कॉलमेन हेडली ने पहले अमेरिकी जांच एजेंसी एफबीआई को बताया, फिर मुंबई की विशेष अदालत में पेशी के दौरान, 26/11 मामले के इस मास्टर माइंड ने अपने बयान में कहा था कि उसने एनआईए को बताया था कि इशरत जहां लश्कर-ए-तौयबा की आतंकी थी। हेडली ने जांच एजेंसी को बताया था कि यह जानकारी उसे लश्कर के मुजम्मिल भट्ट ने दी। भट्ट ने ही उसे बताया कि इशरत के मारे जाने के बाद लश्कर के सरगना जकी उर रहमान लखवी ने कहा था कि भारत में अपनी लड़की मारी

गई। हेडली ने यह भी कहा कि उसे नहीं पता कि एनआईए ने इसे अपने रिकार्ड में क्यों नहीं रखा।

इशरत के खिलाफ इतने सारे सबूत होने के बावजूद केंद्र सरकार और मीडिया का एक बड़ा वर्ग उसके प्रति इतनी हमदर्दी क्यों रखा था, समझ से परे था! देश में इसकी कोई मिसाल नहीं कि एनकाउंटर में मारे गए किसी संदिग्ध के पक्ष में केंद्र की सरकार अपनी ही दो प्रमुख खुफिया जांच एजेंसियों को आपस में टकराने को मजबूर कर दिया हो। हद तो यह कि आईबी के विशेष निदेशक राजेंद्र कुमार के खिलाफ हत्या की आपराधिक साजिश रचने का मुकदमा चलाया गया। यह सब एक संदिग्ध आतंकी के लिए, जिसके खिलाफ खुद सरकार हलफनामा दे चुकी थी, जिस पर देश के एक प्रांत गुजरात के तत्कालीन मुख्यमंत्री नरेंद्र मोदी की हत्या के लिए मानव बम के रूप में इस्तेमाल किए जाने का आरोप था। अमेरिकी जांच एजेंसी एफबीआई ने भारत सरकार के साथ जो सूचना साझा की थी, उसमें यह भी बताया गया था कि लश्कर के आतंकियों के इस दस्ते की साजिश गुजरात के सोमनाथ मंदिर अक्षरधाम मंदिर के साथ मुंबई के सिद्धिविनायक मंदिर पर आतंकी हमला का भी था। यह सचमुच संदेह से परे है कि केंद्र की सरकार ने किसी राज्य के मुखिया की हत्या की साजिश रचने के आरोप में मारी गई एक संदिग्ध आतंकी के खिलाफ अपनी ही सरकार के द्वारा दाखिल हलफनामा सुप्रीम कोर्ट से क्यों वापस ले लिया? केंद्र में अपनी सरकार होते हुए भी इस मामले में पहला आरोप पत्र दाखिल करने में 9 साल का वक्त क्यों लगाया? देश की निचली अदालत में आज भी इशरत जहां के साथ तीन अन्य एनकाउंटर की फाइल और इस पर सालों से हो रही राजनीति सवाल करते है कि एक आतंकी के एनकाउंटर पर इतनी राजनीति क्यों हुई? यह सवाल इसलिए, क्योंकि गुजरात के दो एनकाउंटर के अलावा किसी एनकाउंटर के लिए मीडिया ने इतना वक्त जाया नहीं किया।

सोहराबुद्दीन एक हिस्ट्रीशीटर था। महाराष्ट्र, एमपी व गुजरात समेत पांच राज्यों की पुलिस उसे तलाश रही थी। मध्य प्रदेश के उज्जैन जिले का हिस्ट्रीशीटर सोहराबुद्दीन 26 नवंबर, 2005 को अहमदाबाद में गुजरात पुलिस के हाथों एनकाउंटर में मारा गया। सोहराबुद्दीन पर 90 के दशक में हथियारों की तस्करी के कई आरोप थे। पुलिस ने 1995 में उसके घर से एकाध नहीं, 40 एके 47 बरामद किया था। 1992 में बाबरी मस्जिद गिराए जाने के बाद वह दाउद इब्राहिम के गुर्गे

शरीफ खां पठान के लिए काम करने लगा था। मस्जिद गिरने का बदला लेने के लिए बरामद एके 47 पाकिस्तान के कराची से गुजरात के रास्ते अपने गांव ले गया जिसे उसके गांव में कुआं से बरामद किया गया। गुजरात पुलिस के मुताबिक सोहराबुद्दीन राज्य के मार्बल और हीरा व्यापारियों से फिरौती के लिए कुख्यात था। यह सब काम वह कराची में बैठे अपने आका शरीफ खां के लिए करता था। इस मामले में महाराष्ट्र पुलिस को भी सोहराबुद्दीन की तलाश थी। पांच राज्यों की पुलिस द्वारा घोषित भगोड़ा जब गुजरात पुलिस के एनकाउंटर में मारा गया तो उसे शहीद साबित करने का खेल शुरू हुआ। हद तो तब हुई जब इस मामले को सीबीआई को सौंपने लिए एक एनजीओ समूह और खुद केंद्र की सरकार ने पूरी ताकत लगा दी और इसके लिए सुप्रीम कोर्ट का सहारा लिया गया।

सीबीआई द्वारा पीएफ घोटाले में आरोपों के घेरे में रहे सुप्रीम कोर्ट के न्यायाधीश जस्टिस तरुण चटर्जी ने अपने रिटायरमेंट से एक दिन पहले इस मामले की जांच सीबीआई को सौंप दिया। यह भी भारतीय न्यायिक इतिहास का अनोखा मामला था। हद तो यह है कि एनकाउंटर के किसी मामले में देश में पहली बार किसी राज्य के गृह मंत्री को आरोपी बनाकर न सिर्फ गिरफ्तार किया गया, बल्कि अपने ही राज्य में उसकी एंट्री पर रोक लगा दी गई। चूंकि, सोहराबुद्दीन एनकाउंटर गुजरात और राजस्थान पुलिस का संयुक्त अभियान था, इसलिए राजस्थान के तत्कालीन गृहमंत्री गुलाबचंद कटारिया से भी लंबी पूछताछ हुई। पूर्व डीआईजी डीजी बंजारा समेत कई पुलिस अधिकारियों को 2007 में ही सीबीआई ने गिरफ्तार कर लिया था। सभी अधिकारी लगातार हिरासत में चल रहे थे। भाजपा लगातार आरोप लगा रही थी कि गुजरात के मुख्यमंत्री नरेंद्र मोदी को परेशान करने के लिए सीबीआई का इस्तेमाल किया जा रहा है।

यह सब तब, जबकि सोहराबुद्दीन का पिछला तमाम अपराधिक रिकार्ड केंद्र सरकार और मीडिया दोनों के पास था, लेकिन उसे 'शहीद' की तरह पेश किया जाता रहा था। अतीत में किसी भी एनकाउंटर के लिए मीडिया के कभी इतनी दिलचस्पी नहीं ली, लेकिन पांच राज्यों में वांटेड हिस्ट्रीशीटर और आतंकी संगठन लश्कर की एक महिला आत्मघाती दस्ते की सदस्य के प्रति मीडिया की दिलचस्पी उसे संदेह के घेरे में आज डालती है।

मोदी को प्रधानमंत्री की कुर्सी तक पहुंचने से रोकने के लिए मीडिया ने कैसे की साजिश !

गुजरात दंगा को सरकार प्रायोजित दंगा साबित करने के लिए मीडिया का एक वर्ग कोई कसर नहीं छोड़ना चाह रहा था। अदालती आदेश के बाद भी मीडिया के रुख से यह साफ हो रहा था। मीडिया के इस रवैये के बावजूद गुजरात के मुख्यमंत्री का कद बढ़ता जा रहा था। गुजरात दंगे के लगभग 11 साल बाद वह हुआ जिसकी कल्पना भारतीय मीडिया नहीं कर पा रही थी। अपने ही देश के एक प्रांत के मुखिया जिसे लगातार, बार-बार प्रदेश की जनता चुन रही थी, उसके बारे में मीडिया यह खबर बनाती रही कि देश का चरित्र गुजरात-सा नहीं है जो मोदी जैसे नेता को चुने। इसके लिए मीडिया में यहां तक खबर बनाई गई कि नरेंद्र मोदी के वीजा पर अमेरिका ने रोक लगा दी है। ऐसे में उनका देश के प्रधानमंत्री की कुर्सी तक जाना संभव नहीं। मीडिया में यह चर्चा तब जोर पकड़ी, जब भाजपा की अंदरूनी राजनीति के बाद भी मोदी 2014 के लोकसभा चुनाव के लिए 2013 की शुरुआत में ही पार्टी के प्रचार प्रमुख चुन लिए गए। मोदी विरोधी मीडिया के रवैये के कारण उनका नाम प्रधानमंत्री पद के लिए घोषित करने की हिम्मत पार्टी को नहीं हो रही थी। लेकिन, सोशल मीडिया में जनता के मिजाज को समझते हुए 13 सितंबर, 2013 को भाजपा ने मोदी को प्रधानमंत्री पद का उम्मीदवार घोषित कर दिया। गूगल सर्च के रिकार्ड के मुताबिक उस दिन दुनिया में रिकार्ड 1 अरब 77 करोड़ लोगों ने नरेंद्र मोदी को गूगल में सर्च किया। यही उनकी लोकप्रियता का पैमाना था। किसी व्यक्ति को एक दिन में इतना गूगल सर्च करने का रिकार्ड तोड़ना आसान नहीं है।

लेकिन, दिलचस्प यह है कि भाजपा के प्रचार प्रमुख मोदी को पार्टी द्वारा प्रधानमंत्री का उम्मीदवार घोषित किए जाने के महज दस दिन पहले 3 सितंबर, 2013 को उनकी छवि धूमिल करने के लिए दोतरफा वार किया गया। जेल में बंद गुजरात के पूर्व आईजी, डीजी बंजारा की एक संदिग्ध चिट्ठी संदिग्ध रूप से देश की सभी मीडिया हाउस में एक साथ पहुंचा दी गई। बाकायदा कंप्यूटर में टाइप की गई चिट्ठी एक न्यूज चैनल द्वारा दिखा रहा था कि देखिए हमारे पास से गुजरात दंगे के आरोपी आईपीएस अधिकारी डीजी बंजारा के हाथों की लिखी दस पेज की चिट्ठी है।

सभी टीवी चैनलों पर इस खबर को देख कर मैं दंग था। मैंने खुद लगभग अठारह साल तक कई राष्ट्रीय दैनिक व टीवी चैनलों में कोर्ट, क्राइम और तिहाड़ जेल की भी रिपोर्टिंग करते-करते संसद की रिपोर्टिंग का सफर तय किया था। तिहाड़ जेल से कई बार आतंकवादियों व दुर्दांत अपराधियों की चिट्ठी लीक होती थी। ऐसी चिट्ठी अनेक बार ट्रायल कोर्ट में पहुंचती है। ट्रायल कोर्ट में अपने सोर्स के माध्यम से हमने न जाने कितनी चिट्ठी लीक की जो हमारे अखबार में सुर्खी रही। लेकिन, एक भी चिट्ठी कंप्यूटर से टाइप नहीं मिली। मुझे लगता है किसी भी संवाददाता को ऐसी चिट्ठी कभी नहीं मिली होगी। अपराधियों की जो भी चिट्ठी जेल से लीक हुई या की गई, वह हाथ से लिखी होती थी। सच बताऊं तो पत्रकारिता में लंबे समय तक क्राइम और कोर्ट की रिपोर्टिंग के अपने अनुभव के आधार पर कह सकता हूं कि इस तरह की खबरें अक्सर प्लांट की जाती हैं, जेल के अधिकारियों द्वारा अपने बड़े या छोटे अधिकारियों को परेशान करने या बदला लेने के लिए। इस तरह की चिट्ठी के न कोई कानूनी आधार होते हैं, न मायने। ऐसी चिट्ठियों को अदालत में अक्सर सरसरी तौर पर खारिज कर दिया जाता था। यहां तो चिट्ठी हाथ से लिखी भी नहीं गई थी। कोई भी गंभीर पत्रकार इसे बेहद आसानी से समझ सकता था। सवाल यह है कि बंजारा ने क्या जेल में कोई प्रेस कांफ्रेंस की। ऐसा कौन था, जो बंजारा समेत सारे मीडिया हाउस के संपर्क में था। यह कभी जानने की कोशिश नहीं की गई। डीजी बंजारा ने भी ऐसी कोई चिट्ठी लिखे जाने को मनगढ़ंत कहानी बताया।

दिलचस्प यह है कि 12 मार्च, 2018 को डीजी बंजारा ने अहमदाबाद के सीबीआई कोर्ट में हलफनामा पेश कर कहा कि इशरत जहां इनकाउंटर मामले में पूछताछ के लिए उन्हें गुप्त तरीके से उठा लिया था। यह चौंकाने वाली खबर 13 मार्च, 2018 को अंग्रेजी न्यूज *चैनल टाइम्स नाऊ* ने दिखाया। सवाल यह है कि बंजारा की उस चिट्ठी पर भरोसा किया जाए जो उन्होंने लिखने से इंकार कर दिया, जो उनके हाथों से लिखी ही नहीं गई थी या अदालत में उस डीजी बंजारा के हलफनामा पर भरोसा किया जाए जो उस समय गुजरात पुलिस के वरिष्ठ अधिकारी थे। यह खबर *टाइम्स नाऊ* के अलावा ज्यादातर चैनलों से गायब रही। डीजी बंजारा के मुताबिक तत्कालीन सीबीआई अधिकारी सतीश वर्मा ने उनसे एनकाउंटर किए गए एक आतंकी के मामले में पूछताछ की थी। ऐसे मामले का कोई दूसरा मिसाल नहीं।

3 मार्च, 2013 को ही एक दूसरी खबर भी सुर्खियों में रही। उस दिन मीडिया ने एक स्टिंग दिखाया, जिसमें एक तथाकथित पत्रकार के जरिये दिखाया गया कि पुलिस मुठभेड़ में वर्ष 2006 में मारे गए तुलसीराम प्रजापति की मां से तत्कालीन भाजपा प्रवक्ता प्रकाश जावड़ेकर, भूपेंद्र यादव व रामलाल एक सादे वकालतनामा पर अंगूठा लगावा लेते थे। उस कथित पत्रकार ने इसी आधार पर अदालत में एक हलफनामा दाखिल किया जिसमें जमानत पर चल रहे गुजरात के तत्कालीन गृहमंत्री अमित शाह की जमानत खारिज करने की मांग की गई। यह खबर लगभग दस दिनों तक सुर्खियों में रही। हर किसी को पता है कि अमित शाह पर कोई आपराधिक मुकदमा बनने का सीधा मतलब है, नरेंद्र मोदी की राह में रोड़े डालना। बदले दौर में अमित शाह सत्ताधारी पार्टी भाजपा के राष्ट्रीय अध्यक्ष बने और राज्यसभा सदस्य। फिर लालकृष्ण आडवाणी के पारंपरिक सीट गांधीनगर से लोकसभा सांसद और मोदी सरकार के सबसे प्रभावशाली मंत्री के रूप में गृहमंत्रालय सभाला। वही अमित शाह, जिसे फंसाने व तबाह करने की पूरी साजिश लुटियन मीडिया ने सालों तक रची, ताकि मोदी को रोका जा सके।

दिलचस्प देखिए, बंजारा की चिट्ठी के लगभग 15 दिन बाद एक चिट्ठी सीबीआई की अदालत पहुंची, जिसने भारतीय मीडिया का दोहरा चरित्र सामने लाकर रख दिया। वर्ष 2007 में अजमेर दरगाह में हुए बम धमाके के आरोपी भावेश पटेल की लिखी जो चिट्ठी सीबीआई की अदालत पहुंची थी उसके मुताबिक "तत्कालीन गृहमंत्री सुशील कुमार शिंदे, गृहराज्य मंत्री आरपीएन सिंह, कोयला राज्यमंत्री श्रीप्रकाश जायसवाल व कांग्रेस महासचिव दिग्विजय सिंह सहित नेशनल इंवेस्टिगेटिंग एजेंसी (एनआईए) के अधिकारियों ने उन पर दबाव डाला था कि वह अजमेर बम धमाके मुख्य साजिशकर्ता के रूप में आरएसएस के सरसंघचालक मोहन भागवत व राष्ट्रीय कार्यकारिणी सदस्य इंद्रेश कुमार का नाम ले लें, तो उसे छोड़ दिया जाएगा। यह सब खेल कांग्रेस के नेता से साधु बने आचार्य प्रमोद कृष्णन के संभल स्थित आश्रम में रचा गया। भावेश ने लिखा ..जब मुझे गिरफ्तार किए जाने का अंदेशा हुआ तो मैं अपने गुरु प्रमोद कृष्णन के आश्रम में चला गया। वहां मेरी मुलाकात केंद्र सरकार में मंत्री कांग्रेस के कद्दावर नेताओं से हुई। वे सभी लोग चाहते थे कि वे आरएसएस के नेताओं को फंसाने वाला बयान दे।'' भावेश पटेल को मार्च 2013 में गिरफ्तार किया गया था।

भावेश के अनुसार 'मुझसे कहा गया था कि अदालत में जज के सामने मोहन भागवत और इंद्रेश कुमार का नाम लेने पर तुम्हें छोड़ दिया जाएगा। साथ में पांच लाख रुपये भी दिए जाएंगे। 20 मार्च, 2013 को मुझे जयपुर जिला अदालत में पेश किया गया और वहां से जेल भेज दिया गया। जेल में ही आईजी संजीव सिन्हा ने आचार्य प्रमोद कृष्णन से मेरी बात कराई थी। आचार्य प्रमोद कृष्णन ने आईपीएस विशाल गर्ग के कहे अनुसार ही बयान देने को कहा था। मुझ पर दबाव बनाने के लिए विशाल गर्ग के डीएसपी जसवीर सिंह आईजी और एनआईए के अधिकारी 20 मार्च, 2013 को अदालत में मौजूद थे।

भावेश पटेल के मुताबिक बयान दर्ज करते वक्त मेरी आत्मा ने मुझे धिक्कारा इसीलिए मैंने मोहन भागवत और इंद्रेश कुमार का नाम नहीं लिया। उसी शाम जेल में विशाल गर्ग ने फिर मुझसे मुलाकात कर कहा कि मनमाफिक बयान न देने की वजह से उसकी कोई मदद नहीं की जाएगी। ज्ञात हो कि एनआईए ने अपनी चार्जशीट में पटेल पर अजमेर धमाके के लिए साजो-सामान उपलब्ध कराने और दरगाह के भीतर बम ले जाने का आरोप लगाया है।

देखा जाए तो तत्कालीन गृहमंत्री सुशील कुमार शिंदे और दिग्विजय सिंह ही वह शख्स थे जिन्होंने हिंदू आतंकवाद की अवधारणा गढ़ी थी। इस मामले में मीडिया को चाहिए था कि वह इस खबर की तह तक जाए। लेकिन, मीडिया ने उल्टी राह पकड़ते हुए, कामचलाऊ रिपोर्टिंग करते हुए इसे दबाने का भरपूर प्रयास किया। कानूनी रूप से देखें तो सच यह कि बंजारा की चिट्ठी उसके इस्तीफे को लेकर था, जबकि पटेल की चिट्ठी में देश के गृहमंत्री और सत्तासीन पार्टी को साजिशकर्ता बताया गया था। कानूनी रूप से मजबूर होते हुए भी कांग्रेस पार्टी और यूपीए सरकार को बचाने के लिए जहां बंजारा वाली चिट्ठी को मीडिया ने दस दिन तक सुर्खियों में रखा, वहीं पटेल की चिट्ठी बम को डिफ्यूज कर दिया।

यह प्रकिय़ा आगे जारी रखते हुए 'कारवां' नामक एक पत्रिका ने अजमेर और मक्का मस्जिद धमाके, मालेगांव व समझौता एक्सप्रेस धमाके के आरोपी असीमानंद का साक्षात्कार फरवरी 2014 में छापा, लोक सभा चुनाव से ठीक पहले। पत्रिका में दावा किया गया कि उसकी संवाददाता साल में चार बार जेल में गई और असीमानंद का साक्षात्कार लिया। इस साक्षात्कार में दर्शाया गया कि सरसंघचालक मोहन भागवत और इंद्रेश कुमार को बम धमाके की जानकारी थी।

पूरी मीडिया संघ पर हमलावर हो गई जबकि कोई भी पत्रकार यह समझ सकता था कि वह पूरा साक्षात्कार ही संदिग्ध था। एटीएस, सीबीआई और एनआईए जैसी बेहद काबिल जांच एजेंसियां भी असीमानंद के खिलाफ ठोस सबूत जुटा नहीं पाईं। इसलिए 'मीडिया कार्ड' का इस्तेमाल आरएसएस और नरेंद्र मोदी को सांप्रदायिक दर्शाने के लिए किया गया, ताकि कांग्रेस की चुनावी राह आसान हो सके। अंडर ट्रायल अभियुक्त की जेल के अंदर मीडिया ट्राइल! इस पर भरोसा किया जाए तो हिंदू आतंकवाद के नाम पर गिरफ्तार असीमानंद पर सारे आरोप साबित होते हैं लेकिन 16 अप्रैल, 2018 को एनआईए की विशेष अदालत ने असीमानंद समेत सभी पांच आरोपियों को मक्का मस्जिद ब्लास्ट मामले से बरी कर दिया। इससे पहले 8 मार्च, 2017 को उन्हें जयपुर की एनआईए अदालत ने बरी कर दिया था।[12]

2014 के लोक सभा चुनाव के आखिरी समय तक मीडिया का एक वर्ग पूरे दम-खम संग गुजरात के मुख्यमंत्री के दिल्ली दस्तक को रोकने की तैयारी में लगा था। इसी कड़ी में 15 नवंबर, 2013 को गुलेल और कोबरापोस्ट नामक वेबसाइट ने एक स्टिंग के सहारे लोकसभा चुनाव में भाजपा के प्रधानमंत्री पद के उम्मीदवार नरेंद्र मोदी और उनके सिपहसालार अमित शाह को घेरने का एक और प्रयास किया। इस बेबसाइट ने सीबीआई के पास मौजूद एक संदिग्ध वीडियो क्लिप को जारी किया। गुजरात के निलंबित आईपीएस अधिकारी और इशरत जहां एनकाउंटर मामले में आरोपी जीएल सिंघल ने यह ऑडियो टेप सीबीआई को मुहैया कराए थे। इस ऑडियो टेप के मुताबिक गुजरात के तत्कालीन गृहमंत्री अमित शाह ने किसी 'साहेब' के कहने पर राज्य के शीर्ष पुलिस अधिकारी को प्रदीप शर्मा और एक युवती की जासूसी करने का आदेश दिया गया। सीबीआई का कहना था कि वह उस ऑडियो रिकार्डिंग की सत्यता की पुष्टि नहीं कर सकती। इसके बावजूद उस ऑडियो को मीडिया में प्लांट किया गया।

प्रेस क्लब ऑफ इंडिया में दर्जनों कैमरों के बीच ऑडियो शो के बाद एक प्रेस कांफ्रेंस का आयोजन था। 'कोबरा पोस्ट' और 'गुलेल' की उस प्रेस वार्ता में मंच से नरेंद्र मोदी और अमित शाह पर हमला करते हुए उस ऑडियो की व्याख्या की जा रही थी। उसमें ज्यादातर नामचीन पत्रकार व समाजिक कार्यकर्ता थे, जिसमें प्रमुख थे *टाइम्स ऑफ इंडिया* के वरिष्ठ संपादक, मनोज मिट्टा, द हिंदू के पूर्व

संपादक सिद्धार्थ वरदराजन, प्रशांत भूषण और यूपीए सरकार की सुप्रीमो सोनिया गांधी की "नेशनल एडवाजरी कमेटी" की सदस्य अरुणा राय। इस प्रेस वार्ता का आयोजन पूर्व में तहलका डॉटकॉम, 'गुलेल' व "कोबरापोस्ट' के पत्रकार रहे आशीष खेतान व अनुरुद्ध बहल के द्वारा किया गया था। ऑडियो टेप जारी किए जाने के कुछ ही दिनों बाद आशीष खेतान दिल्ली की आम आदमी पार्टी में प्रवक्ता हो गए। बहल को छोड़कर बाकियों का भी अतीत में आम आदमी पार्टी से किसी न किसी प्रकार से संबंध था। 22 अगस्त, 2018 को *आईबीएन 7* के पूर्व संपादक आशुतोष के बाद आशीष खेतान ने भी आम आदमी पार्टी छोड़ने की घोषणा कर दी। वे फिर से वकालत और पत्रकारिता की बात कर रहे हैं। खेतान वही पत्रकार हैं जिन्होंने बेस्ट बेकरी कांड की मुख्य गवाह जाहिरा शेख का स्टिंग किया था, जिसमें जाहिरा द्वारा गुजरात दंगा मामले में मोदी सरकार के पक्ष में झूठ बोलने के लिए 18 लाख रुपये दिए जाने का आरोप लगाया गया था। सुप्रीम कोर्ट ने इस स्टिंग ऑपरेशन को खारिज कर दिया था।

कोबरापोस्ट के अनिरुद्ध बहल वही पत्रकार हैं, जिन्होंने, पत्रकार तरुण तेजपाल के साथ मिलकर वर्ष 2001 में एनडीए सरकार के खिलाफ 'तहलका डॉटकॉम' के लिए कॉलगर्ल सप्लाई वाला स्टिंग ऑपरेशन, "ऑपरेशन वेस्ट एंड" को अंजाम दिया था।

भारतीय पत्रकारिता में स्टिंग ऑपरेशन के नामचीन पत्रकार तरुण तेजपाल अपने ही सहकर्मी और अपनी बेटी की दोस्त संग, अपने कब्जे में रखकर लगातार बलात्कार के प्रयास करने और बलात्कार के आरोप में 30 नवंबर, 2013 को गोआ में गिरफ्तार कर जेल भेज दिए गए। क्रांतिकारी पत्रकार तेजपाल अपनी ही बेटी की दोस्त और सहकर्मी संग जो कर रहे थे उसने तेजपाल के पूरे चरित्र को सामने लाकर रख दिया। इस घटना के बाद तेजपाल की पत्रकारिता के उच्च आदर्शों के खोल के नीचे के काले साम्राज्य की कलई खुलती चली गई। यह भी पता चला कि उनकी निर्भीक पत्रकारिता में सत्ता की कैसी भागीदारी थी। जाहिर हुआ कि उनकी पत्रिका के संस्थापक सदस्यों में से यूपीए सरकार के सबसे कद्दावर मंत्री में से एक कपिल सिब्बल हैं, जिन्होंने तहलका में पांच लाख रुपये का शुरुआती निवेश किया था। रकम जो दिखी वह तो बहुत छोटी थी, लेकिन सिब्बल के पास तहलका को संचालित करने वाली कंपनी अनंत मीडिया प्राइवेट

लिमिटेड में शेयर बड़ा था। शुरू में कपिल सिब्बल ने इस बात से इंकार किया, लेकिन रजिस्ट्रार ऑफ कंपनीज के दस्तावेज से पता चल गया कि अनंत मीडिया में कपिल सिब्बल का बड़ा शेयर है। इस खुलासे के बाद 28 अक्टूबर, 2013 को सिब्बल ने पत्रकार तेजपाल के तहलका में अपना शेयर होने का आरोप स्वीकर कर लिया। यह भी माना कि उन्होंने तहलका पत्रिका शुरू करने में तेजपाल को आर्थिक मदद की जो चंदे के तौर पर था और वह तहलका के संस्थापक सदस्यों में से एक हैं। दिलचस्प यह है कि वही कपिल सिब्बल बलात्कार के मामले में प्रथम दृष्टया दोषी साबित हो चुके तेजपाल के वकील हैं। निचली अदालत द्वारा आरोप तय किए जाने के बाद सिब्बल तेजपाल के लिए तारणहार बनते हुए अप्रैल 2018 में सुप्रीम कोर्ट में याचिका दाखिल कर अदालत के उस फैसले को निरस्त कर मामले को बंद करने का निवेदन किया था। हाईकोर्ट के बाद सुप्रीम कोर्ट ने भी तेजपाल की उस अर्जी को खारिज कर दिया था। वर्ष 2011 तक तहलका में काम कर चुके पत्रकार रमण कृपाल ने फर्स्ट पोस्ट वेब पोर्टल में लिखा था कि तहलका के लिए गोआ में खनन घोटाले पर उन्होंने रिपोर्ट तैयार की थी। उस रिपोर्ट को दबाने के लिए गोवा के तत्कालीन मुख्यमंत्री दिगंबर कामत के साथ डील की गई थी। पत्रकार रमण की रिपोर्ट के मुताबिक साल 2011 में गोवा में 800 करोड़ के अवैध खनन का पर्दाफाश किया था जिसे प्रकाशित करने के बदले तरुण तेजपाल ने उसे दबा दिया और अपने कार्यक्रम थिंकफेस्ट – 2011 के लिए गोआ सरकार से मोटी रकम हासिल की थी।

समाचार पत्र ‘द डेक्कन हेराल्ड’ की एक रिपोर्ट के मुताबिक सोनिया गांधी के राजनीतिक सलाहकार अहमद पटेल के एक फोन कॉल पर तरुण तेजपाल की बहन और तहलका की प्रकाशक व चीफ ऑपरेटिंग ऑफिसर नीना तेजपाल ने थिंक फेस्ट-2011 इवेंट से करीब एक हफ्ते पहले गोआ के तत्कालीन मुख्यमंत्री दिगंबर कामत से मिलकर इस डील को अमली जामा पहुंचाया था। दो साल बाद इसी थिंक फेस्ट कार्यक्रम में अपने सहकर्मी और बेटी की दोस्त से बलात्कार के आरोप में तेजपाल को जेल जाना पड़ा। हालांकि अब वह इस आरोप से बरी हो चुके हैं।

इस जांच के बाद ही यह स्पष्ट हो गया कि तेजपाल पत्रकार से अधिक एक व्यवसायी हैं जिन्होंने थिंक फेस्ट 2013 में ही एक करोड़ 99 लाख रुपये की शुद्ध कमाई की। अनंत मीडिया प्राइवेट लिमिटेड कंपनी ही तहलका का प्रकाशन

करती है। कभी *इंडिया टुडे* और *आउटलुक* पत्रिका में मामूली नौकरी करने वाले तेजपाल की गोआ और नैनिताल में आलीशान होटल है। 27 नवंबर, 2013 को इंडिया टुडे में संदीप उन्नीथन की एक रिपोर्ट के मुताबिक तेजपाल का छह बेडरूम का शानदार विला है। उत्तराखंड के नैनिताल जिले में तेजपाल का 7 कमरों वाला टू *चिमनी* नामक व्यावसायिक रिसॉर्ट है। मीडिया में आई रिपोर्ट के मुताबिक इस रिसॉर्ट के लिए किसी भी तरह का लाइसेंस नहीं लिया गया। दिल्ली के ग्रेटर कैलाश पार्ट 2 में तेजपाल की कंपनी में शराब माफिया पोंटी चड्ढा के साथ व्यावसायिक संबंध थे। तेजपाल, पोंटी चड्ढा के साथ मिलकर चुनिंदा शहरी भारतीयों के लिए क्लब बना रहे थे। इसके लिए एक बिजनेस प्रजेंटेशन भी रखा गया था, जिसमें बेहतरीन ड्रिंक्स और शानदार भोजन के लिए शेफ तैयार किया जाना था। क्लब का नाम 'फूफ्राक' दिया गया था। तेजपाल द्वारा लिखे मेल से इस बात का खुलासा हुआ। मेल पोंटी के फ्लैगशिप कंपनी के अलावा उन लोगों को भी भेजे गए थे जो क्लब के सदस्य बन सकते थे। *इंडियन एक्सप्रेस* को दिए बयान में चड्ढा समूह के प्रवक्ता ने बताया कि बिजनेस मॉडल में हमने फायदा देखा और निवेश किया। [13] ज्ञात हो कि पोंटी चड्ढा की हत्या उसके ही फार्म हाउस में नवंबर 2012 में कर दी गई था। पोंटी की हत्या के बाद उसके परिवार ने तेजपाल से व्यावसायिक संबंधों का खुलासा किया। करोड़ों की प्रापर्टी बनाने वाले पत्रकार तेजपाल, साधारण कुर्ता पायजामे में क्रांतिकारी पत्रकार दिखते थे, जो नवोदित पत्रकारों के आदर्श हुआ करते थे।

समझा जा सकता है कि तेजपाल जैसे क्रांतिकारी पत्रकारों ने पत्रकारिता के नाम पर क्या क्या किया और उनकी पूरी क्रांति के सूत्रधार कौन थे? पर नरेंद्र मोदी को घेरने के लिए गुजरात दंगे के बाद, वर्ष 2004 से वे लगातार स्टिंग ऑपरेशन के सूत्रधार बनते रहे। मोदी को आरोपों के घेरे में लेने वाले ये स्टिंग अदालत में पैर नहीं जमा पाए। बीते वर्षों में मेनस्ट्रीम मीडिया इन्हीं स्टिंग ऑपरेशन के सहारे अपना एजेंडा चलाता रहा। अब उसी एजेंडा जर्नलिज्म की साजिश के कारण मेन स्ट्रीम मीडिया को सोशल मीडिया से लगातार चुनौती मिल रही है।

आईए अब "जासूसी कांड" वाले उस ऑडियो टेप की बात करते हैं। 15 नवंबर, 2013 की शाम संसद की कार्यवाही खत्म होने से पहले हम सब के पास एक खबर आई कि प्रेस क्लब ऑफ इंडिया में आज शाम पांच बजे एक धमाकेदार

स्टिंग ऑपरेशन का खुलासा होना है। नरेंद्र मोदी प्रधानमंत्री पद के उम्मीदवार घोषित हो चुके थे। खबर इतनी भर थी कि ये धमाका मोदी के खिलाफ अब तक का सबसे बड़ा धमाका था। संसद भवन से कुछ कदम दूर प्रेस क्लब ऑफ इंडिया की ऊपरी मंजिल पर प्रोजेक्टर तैयार था। बाहर देश के सभी न्यूज चैनल के ओवी वैन पूरे स्टिंग ऑपरेशन का लाइव करने के लिए तैयार थी। ओवी वैन के जेनरेटरों की आवाज के सामने देश भर के लगभग सभी संपादकों की उपस्थिति की गहमागहमी संकेत दे रहा था कि यहां कुछ बड़ा होना है।

पांच बजते ही अंधेरे कमरे में प्रोजेक्टर पर एक ऑडियो चलाया गया जिसे अमित शाह की आवाज बताई गई, जिसकी पीछे चर्चा हम कर चुके हैं। फिर संपादकों की फौज ने प्रशांत भूषण और स्टिंग का ऑडियो हासिल करने वाले अगस्त 2018 तक आम आदमी पार्टी के प्रवक्ता रहे आशीष खेतान व उनके बॉस अनिरुद्ध बहल ने उस बातचीत की व्याख्या कर बताया कि गुजरात के तत्कालीन मुख्यमंत्री नरेंद्र मोदी के निर्देश पर, गुजरात के तत्कालीन गृहमंत्री अमित शाह, आईपीएस प्रदीप शर्मा और जिस युवती की जासूसी करने का आदेश दिया जा रहा था, उसे संभवतः नरेंद्र मोदी पसंद करते थे। इसीलिए प्रदेश के गृहमंत्री किसी 'साहेब' की बात कर रहे हैं कि निगरानी रखने का आदेश 'साहेब' ने दिया है। उनकी दलील थी कि आखिर गृहमंत्री का साहेब कौन हो सकता है?

दिलचस्प यह है कि इस टेप के जारी होने के तुरंत बाद, गुजरात के निलंबित आईपीएस अधिकारी और कच्छ जिले के पूर्व कलेक्टर प्रदीप शर्मा, सुप्रीम कोर्ट गए और यह आरोप लगाया कि जिस युवती की जासूसी वर्ष 2009 में गुजरात पुलिस की तरफ से की गई, उस लड़की का संबंध राज्य के मुख्यमंत्री से है। शर्मा के मुताबिक वर्ष 2004 में उन्होंने ही उस लड़की की मुलाकात राज्य के मुख्यमंत्री से कराया था, जब मोदी उस लड़की की डिजाइन की गई पार्क के उद्घाटन के लिए भुज आए थे। शर्मा ने आरोप लगाया कि उस लड़की के मुख्यमंत्री से अच्छे संबंध थे, जिससे वह परिचित थे। यही कारण है कि मोदी ने उन पर भ्रष्टाचार का आरोप लगाकर निलंबित कर दिया।

इसमें कुछ भी नया नहीं था। प्रदीप शर्मा की यही दलील वर्ष 2011 में सुप्रीम कोर्ट खारिज कर चुका था। शर्मा ने अपनी दलील को मजबूती प्रदान करने के लिए उसे पुनः अपनी याचिका में शामिल करने के लिए 'कोबरा पोस्ट'

व 'गुलेल' के जरिये 'मीडिया ट्रिक्स' का इस्तेमाल किया। इस स्टिंग के चार दिन बाद ही प्रदीप शर्मा ने सुप्रीम कोर्ट से आग्रह किया कि 'कोबरा पोस्ट' और 'गुलेल' पर चलाए गए स्टिंग के ऑडियो टेप को संज्ञान में लिया जाए। शर्मा के वकील 'प्रशांत भूषण' थे। भूषण ने सुप्रीम कोर्ट में दलील दी कि ऑडियो टेपों को लेकर कुछ वेबसाइट ने अहम खुलासे किए हैं, इसलिए इस मामले को सुना जाए। इस बार भी सुप्रीम कोर्ट ने 18 जनवरी, 2014 को दिए अपने निर्णय में प्रदीप शर्मा और प्रशांत भूषण को फटकार लगाते हुए अपनी याचिका में कहा कि वे अपनी याचिका से नरेंद्र मोदी के खिलाफ अपमानजनक टिप्पणी हटाएं, अन्यथा उन्हें नहीं, सुना जाएगा।

जानकारी के लिए बता दूं कि गुजरात पुलिस के निलंबित आईपीएस अधिकारी प्रदीप शर्मा अपराध के कई मामले में आरोपित हैं और जेल की हवा खा चुके हैं। कच्छ जिले के एक निजी कंपनी को अवैध तरीके से सरकारी जमीन आवंटित करने से लेकर सबूत मिटाने समेत करीब छह मामले उन पर दर्ज हैं। प्रदीप शर्मा पर आरोप था कि उस लड़की की कंपनी को तत्कालीन यूपीए सरकार की एक 'सौर परियोजना' दिलाने में मदद की थी। अपने ऊपर कार्रवाई से शर्मा इस कदर हिले थे कि वर्ष 2011 में 3 जून को सुप्रीम कोर्ट की एसआईटी के सामने बयान में कहा था कि नरेंद्र मोदी ने उन्हें फोन कर कहा था कि मैं अपने बड़े भाई आईपीएस अधिकारी कुलदीप शर्मा से कहूं कि दंगे में वे मुसलमानों की मदद न करें। कुलदीप शर्मा वही अधिकारी थे, जिन्हें फर्जी एनकाउंटर में सीबीआई ने गिरफ्तार किया था। बाद में केंद्रीय गृहमंत्री पी. चिदंबरम ने कुलदीप शर्मा को उपकृत करते हुए प्रमुख सलाहकार नियुक्त किया था।[14]

सवाल यह है कि यदि उस तरह का निर्देश मुख्यमंत्री को देना ही होता तो, राज्य का मुख्यमंत्री कार्यालय सीधे अपने मातहत अधिकारियों को देगा या उसके भाई को कहेगा? यह सोचने वाली बात है ! वैसे सुप्रीम कोर्ट द्वारा गठित एसआईटी की जांच में ऐसे बयान आधारहीन और बेतुके साबित हो चुके हैं।

दरअसल, आज वह लड़की शादीशुदा है, उसकी शादी वर्ष 2009 में अहमदाबाद में एक व्यापारी से हुई थी। जानकारी के मुताबिक गुजरात सरकार के पास नरेंद्र मोदी की राह में बाधा डालने के लिए जासूसी कांड का सहारा लेने की साजिश को बेपर्दा करने के पूरे सबूत थे, लेकिन उस खुलासे से एक शादीशुदा

लड़की की जिंदगी में भूचाल आ सकता था, क्योंकि उस सीडी की परत खुलने से लड़की के पूर्व प्रेमी संग अवैध संबंध का खुलासा हो जाता। लड़की के पिता को संदेह था कि कोई पुलिस अधिकारी उनकी बेटी को ब्लैकमेल कर रहा है। वे अपनी बेटी की बदनामी की आशंका से चिंतित थे, जिसके कारण वे पूरे मामले की जांच कराना चाहते थे। 'गुलेल' की पीसी के बाद लड़की के पिता ने मीडिया को जारी एक बयान में अनुरोध करते हुए कहा 'मैंने जो मदद गुजरात सरकार से मांगी थी उसकी पूरी जानकारी मेरी बेटी को थी। उसकी निजता का कोई उल्लंघन नहीं हुआ और आगे जांच की जरूरत नहीं है।' एक पीड़ित पिता के अनुरोध पर ही गुजरात सरकार ने उस मामले की आगे जांच बंद कर दी थी।

दिलचस्प देखिए कि गुजरात सरकार ने तथाकथित जासूसी कांड की जांच करने के लिए हाईकोर्ट के पूर्व न्यायाधीश की अध्यक्षता में एक उच्च स्तरीय कमेटी का गठन कर दिया था, लेकिन सुप्रीम कोर्ट से फटकार मिलने पर, हर हाल में भाजपा के प्रधानमंत्री पद के उम्मीदवार नरेंद्र मोदी को नेस्तनाबूत करने के लिए तत्कालीन यूपीए सरकार के मंत्रिमंडल ने 26 दिसंबर, 2013 को एक नए जांच आयोग का गठन कर दिया। यह पूरी तरह से राजनीतिक साजिश की ओर इशारा कर रहा था। आश्चर्य देखिए यूपीए सरकार की उस राजनीति को समझते हुए, सुप्रीम कोर्ट और हाईकोर्ट के किसी भी पूर्व न्यायाधीश ने केंद्र सरकार द्वारा गठित जांच समिति में शामिल होने की खुद की स्वीकृति नहीं दी।

संयोग देखिए जिस दिन तत्कालीन यूपीए सरकार ने जासूसी कांड की जांच के लिए पूर्व न्यायाधीशों की एक जांच आयोग के गठन का फैसला किया था उसी दिन सुप्रीम कोर्ट द्वारा गठित एसआईटी द्वारा दाखिल क्लोजर रिपोर्ट को सही ठहराते हुए ट्रायल कोर्ट ने नरेंद्र मोदी को गुजरात दंगे के सभी मामले से आरोप मुक्त कर दिया था। तात्पर्य यह कि कानूनन नरेंद्र मोदी कभी गलत नहीं रहे, लेकिन केंद्र की सरकार, विदेशी फंडेड एनजीओ और मेनस्ट्रीम लुटियन मीडिया 2002 के बाद से लगातार उल्टे-सीधे आरोप लगा कर नरेंद्र मोदी पर हमलावर रही।

जाति और मजहब से खबरों को रंगती मीडिया !

हैदराबाद यूनिवर्सिटी प्रशासन ने नवंबर 2015 में पांच छात्रों को हॉस्टल से बाहर निकाल दिया था। हॉस्टल से निकाले गए उन छात्रों के कैंपस के सार्वजनिक जगहों

पर जाने की भी पाबंदी लगा दी गई थी। हालांकि, इन्हें लेक्चर अटेंड करने और रिसर्च का काम जारी रखने की इजाजत थी। देश के किसी भी यूनिवर्सिटी प्रशासन के लिए उपद्रव के दोषी छात्रों पर इस प्रकार की कार्रवाई एक सामान्य घटना मानी जाती है। हैदराबाद यूनिवर्सिटी प्रशासन ने जिन छात्रों पर सख्ती की थी उन पर यूनिवर्सिटी के ही *एबीवीपी* के स्टूडेंट लीडर की पिटाई का दोष साबित हुआ था। लगभग दो महीने बाद एक छात्र रोहित वेमुला ने 17 जनवरी, 2016 को अपने हॉस्टल के कमरे में खुदकुशी कर ली थी।

पांच छात्रों पर हुए अनुशासनात्मक कार्रवाई और बाद में उसमें से एक छात्र रोहित बेमुला की आत्महत्या मामले पर देश में राजनीतिक बवाल खड़ा हो गया था। उत्तर भारत के हिंदी भाषी मीडिया में हैदराबाद के एक यूनिवर्सिटी में आत्महत्या का मामला लगातार न्यूज चैनलों के हर बुलेटिन में हेडलाइन में बना रहा। उन हेडलाइनों में आत्महत्या करने वाले छात्र को दलित बनाकर पेश किए जाने के कारण खबर दिनों दिन सुर्खियों में रहने लगी। एक छात्र की आत्महत्या पर देश भर में आंदोलन इसलिए होने लगा, ताकि उसे दलितों के प्रति अत्याचार के रूप में पेश कर सरकार को घेरा जा सके। किसी पीड़ित छात्र को इंसाफ दिलाने के नाम पर राजनीति नहीं की जा सकती थी, इसलिए इसे दलित रंग में रंगा जाने लगा। यह पत्रकारिता के मूलभूत सिद्धांत का उल्लंघन था, लेकिन अर्से से जाति और मजहब के आधार पर खबर में आग लगाकर माहौल गर्माने के फायदे, पत्रकारिता के उस मूलभूत सिद्धांत की लक्ष्मण-रेखा कब का लांघ चुकी थी, जिसमें खबर में मजहब और जाति को दर्शाने की मनाही थी। कानून के मुताबिक आत्महत्या करना और उसके लिए प्रेरित करना दोनों अपराध है। रोहित ने आत्महत्या क्यों की या उसे इसके लिए किसने उकसाया? इसे जाने बिना, यूनिवर्सिटी प्रशासन द्वारा, अनुशासनात्मक कार्रवाई का सामना कर रहे रोहित को दलित बताकर राजनीतिक रोटी सेंकने का धंधा तेज हो गया। बिना इस पर तहकीकात किए कि इसके पीछे का सच क्या है? मीडिया पल भर में इस निष्कर्ष पर पहुंच गई कि रोहित दलित था, इसीलिए उस पर सख्ती हुई जिससे तंग आकर उसने आत्महत्या कर ली। मेनस्ट्रीम मीडिया की रोहित मामले पर बिना तथ्यों की पड़ताल से एक युवक के आत्महत्या मामले को केंद्र सरकार की दलित विरोधी नीति का परिणाम साबित कर देने से सरकार की परेशानी बढ़ने लगी। घटना की जांच के लिए मानव संसाधन मंत्रालय

ने एक जुडिशियल कमिटी बनाई, जिसने यह रिपोर्ट 16 अगस्त, 2016 में मानव संसाधन मंत्रालय को सौंपी थी।

इलाहाबाद हाईकोर्ट के पूर्व न्यायामूर्ति जस्टिस एके रूपनवाल की एक सदस्यीय जुडिशियल कमिटी ने अपनी रिपोर्ट में बताया कि वेमुला समस्याओं में घिरे हुए शख्स थे और कई कारणों से नाखुश थे। वेमुला ने अपनी मर्जी से आत्महत्या की। रिपोर्ट के मुताबिक, यूनिवर्सिटी की ओर से वेमुला और चार अन्य स्टूडेंट्स को हॉस्टल से निकाला जाना वेमुला को आत्महत्या के लिए उकसाने की वजह नहीं बना। रिपोर्ट में लिखा है, 'ऑन रेकॉर्ड मौजूद उनका सुसाइड नोट बताता है कि रोहित वेमुला की अपनी दिक्कतें थीं और वह दुनिया में चल रहे मामलों से खुश नहीं थे।' आगे लिखा है, 'वह उन कई कारणों से हताश थे, जिनके बारे में वही बेहतर जानते थे। उन्होंने यह भी लिखा कि वह बचपन से अकेले थे, जिनकी कभी तारीफ नहीं की गई। इससे भी उनकी निराशा जाहिर होती है। उन्होंने आत्महत्या के लिए किसी को दोष नहीं दिया। जस्टिस रूपनवाल ने इन आरोपों को भी खारिज किया कि पूर्व मानव संसाधन मंत्री स्मृति ईरानी या श्रम मंत्री बंडारू दत्तात्रेय ने विश्वविद्यालय प्रशासन की कार्रवाई को प्रभावित किया। सबसे अहम यह कि जिस रोहित के दलित होने के नाम पर उसकी आत्महत्या पर राजनीति की गई, रूपनवाल कमिशन ने अपनी जांच में पाया कि रोहित दलित समुदाय से था ही नहीं। [15] अदालत भी किसी मृतक के लिखे या बोले अंतिम वाक्य को ही सच मानता है, क्योंकि हमारा कानून मानता है कि इंसान मरते समय झूठ नहीं बोलता। अदालत की रिपोर्टिंग करते हुए हमने न जाने कितने जजमेंट में जजों को सिर्फ मृतक के आखिरी बयान को ही सबसे महत्वपूर्ण साक्ष्य मानने के आधार पर इंसाफ करते देखा है। रोहित ने अपनी सुसाइड नोट में साफ लिखा था.. 'यह मेरा फैसला है और मैं अकेला व्यक्ति हूं, जो इस सबके लिए जिम्मेदार है। कृपया मेरे जाने के बाद, इसके लिए मेरे मित्रों और शत्रुओं को परेशान न किया जाए।' रोहित के इस आखिरी खत के बावजूद मीडिया ने इस पूरे मामले को दलित रंग देते हुए यूनिवर्सिटी प्रशासन द्वारा उन्हें आत्महत्या के लिए मजबूर करने का ही मामला साबित कर दिया।

जबकि, जांच रिपोर्ट में लिखा है, 'अगर वह (वेमुला) यूनिवर्सिटी के फैसले से नाराज थे तो शर्तिया तौर पर वह इसके बारे में लिखते या इस ओर इशारा करते।

हालांकि, उन्होंने ऐसा कुछ नहीं किया। इससे पता चलता है कि यूनिवर्सिटी के तत्कालीन हालात उनकी आत्महत्या की वजह नहीं थे।'

दिलचस्प तो यह है कि जिस अपराध को महज जाति के रंग में रंगने के कारण ही बड़ा किया गया हो, उसमें इस सच का पर्दाफाश होना ही खबरों के पीछे की साजिश को खोलता है कि जाति का वह रंग ही बनावटी था। सिर्फ खबरों को सनसनी बनाने के लिए उसे जाति के रंग से रंगा गया था। जस्टिस रूपनवाल कमेटी ने जब पड़ताल की तो यह भी जानकारी मिली कि वेमुला जाति से दलित नहीं थे। वेमुला की जाति को लेकर रिपोर्ट में लिखा है, 'रेकॉर्ड में मौजूद सबूत बताते हैं कि वह (वेमुला की मां वी. राधिका) वढेरा समुदाय से ताल्लुक रखती हैं, इसलिए रोहित वेमुला को मिला अनुसूचित जाति का प्रमाण पत्र असली नहीं कहा जा सकता और वह अनुसूचित जाति से नहीं थे। जिस बेमुला का केस दलित मुद्दा बनकर उभरा था, उसका दलित न होना मीडिया और राजनीतिक दल का सामूहिक षड्यंत्र साबित करता है।

सितंबर 2015 को उत्तर प्रदेश के दादरी इलाके से गाय का एक बछड़ा चोरी का मामला समाने आया। गांव वालों के मुताबिक, गांव के ही एक मुस्लिम परिवार ने चोरी के बछड़े को हलाल कर खा लिया। लोगों का गुस्सा इस कदर फूटा कि गांव वालों की भीड़ ने 52 वर्षीय मोहम्मद अखलाक को उसके घर से बाहर घसीटा और पीट-पीटकर मार डाला। निश्चित रूप से यह घटना न सिर्फ सरकार के प्रशासकीय इकबाल खत्म होने का था, बल्कि अमानवीय भी था। अखलाक और उसके परिवार वालों ने भले ही बछड़े चुराने और उसे मारकर खाने का अपराध किया हो, लेकिन दादरी में अखलाक के साथ जो कुछ भी हुआ, वह सभ्य समाज के लिए कलंक था। यह साबित करता था कि प्रदेश में कानून का डर अपराधियों के भीतर नहीं था। कानून व्यवस्था और प्रशासन का मामला राज्य सरकार का होता है, लेकिन राज्य की सत्ताधारी अखिलेश सरकार को घेरे में लेने के बदले मीडिया ने इसके लिए भी सीधे केंद्र की मोदी सरकार को ही घेरना शुरू कर दिया। जबकि, इसके लिए राज्य सरकार को कठघरे में लिए जाने की जरूरत थी। लेकिन इस वारदात को देश में बढ़ती असहिष्णुता के प्रतीक के रूप में प्रचारित किया गया। मीडिया के साथ-साथ साहित्यकार व बुद्धिजीवी वर्ग ने वगावत शुरू कर दी। दर्जनों साहित्यकारों और कलाकारों ने सार्वजनिक रूप से भारत सरकार द्वारा अतीत में

दिए गए पद्म पुरस्कारों को लौटाने की घोषणा करनी शुरू कर दी। यह अलग बात है कि किसी ने सचमुच पुरस्कार की राशि या पुरस्कार लौटाया भी इसके प्रमाण नहीं हैं। लेकिन उस दौर में यह रोज की खबरों की सुर्खियां रहीं कि आज किस साहित्यकार या कलाकार ने साहित्य अकादमी व पद्म पुरस्कार लौटा दिए।

उत्तर प्रदेश में प्रशासनिक चूक के मामले को लेकर केंद्र की दिल्ली सरकार पर दबाव इस कदर था कि प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने 2015 के बिहार विधानसभा चुनाव के दौरान एक रैली में दिए भाषण में कड़ा संदेश देकर इस आलोचना का जवाब दिया था। उन्होंने कहा था, "लोकतंत्र में प्रत्येक व्यक्ति को अपने मन की बात कहने का अधिकार है... लेकिन हिंदुओं को तय करना होगा कि वे मुस्लिमों से लड़ना चाहते हैं या गरीबी से... मुस्लिमों को भी तय करना होगा कि वे हिंदुओं से लड़ना चाहते हैं या गरीबी से..."

अखलाक मामले में राजनीति इस कदर हुई कि दादरी हर राजनीतिक दल के लिए मानो टूरिस्ट प्लेस बन गया। मुआवजों की अखलाक परिवार पर वह बारिश शुरू हुई जैसी ऐसे मामले में पहले कभी नहीं हुए। तत्कालीन मुख्यमंत्री अखिलेश यादव ने अखलाक के परिवार को यूपी सरकार की ओर से 45 लाख रुपये की सहायता भी दे दी। उसके बाद समाजवादी पार्टी ने भी लाख रुपये की सहायता दी। मीडिया ने भी खूब शोर मचाया कि यह हिंदू आतंकवाद है।

यह सिलसिला तब भी जारी रहा जब अप्रैल 2016 में मथुरा फॉरेंसिक लैब की रिपोर्ट में कहा गया कि टेस्ट के लिए भेजा गया मांस दरअसल गोमांस ही था, जो उत्तर प्रदेश के कानून के मुताबिक अपराध माना गया।

अखलाक की हत्या के आरोप में 18 गिरफ्तारियां तो हुई, लेकिन गोवंश चोरी कर उसकी हत्या के मामले में कोई गिरफ्तारी नहीं हुई।

मामले का सच सामने आने के बाद भी देश में एक नए शब्द असहिष्णुता का बोलबाला रहा। नामचीन साहित्यकार और कलाकारों नें अतीत में दिए पुरस्कार लौटाने की घोषणा का सिलसिला जारी रखा, इस संदेश के साथ कि देश में बोलने की आजादी खत्म हो गई है। वे देश दुनिया के मंच पर कहने लगे कि देश में आधारभूत मूल्यों-अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और अपने इच्छानुसार जीवन जीने की उनकी आजादी हिंदूवादी ताकतों ने छीन ली है। हत्या के एक मामले के कारण

देश में इस तरह का माहौल बुद्धिजीवियों ने पैदा किया, ऐसा कोई दूसरा मिसाल इतिहास में नहीं दिखता।

सीट को लेकर हत्या में मजहब का रंग

ट्रेन या बसों में सीट को लेकर या रोडरेज में मारपीट के बाद हत्या तक हो जाने की खबर आए दिन अखबारों में पढ़ने को मिलती रही है। लेकिन, जब हादसे के बाद पता चले कि पीड़ित अल्पसंख्यक समुदाय से था तो मेन स्ट्रीम मीडिया खबरों से कैसे खेलती है और उसे राष्ट्रीय बहस का मुद्दा बना देती है, 22 जून, 2017 को दिल्ली से बल्लभगढ़ की तरफ जा रही ट्रेन में 16 साल के मुस्लिम युवक जुनैद की हत्या ने एक बार फिर साबित किया। इस मामले में हरियाणा पुलिस ने हत्या के जघन्य अपराध के आरोप में 4 लोगों को गिरफ्तार कर लिया। इन आरोपियों में से 2 दिल्ली सरकार के कर्मचारी थे। यह ट्रेन के अंदर कुछ लोगों के बीच आपसी मारपीट का मामला था जिसमें चाकूबाजी के कारण एक की मौत हो गई, लेकिन मेन स्ट्रीम मीडिया के लिए इसमें मसाला यह था कि मारे जाने वाले का नाम जुनैद था, जो अल्पसंख्यक समुदाय से था।

हैरानी की बात यह है कि झगड़ा शुरू होने से पहले जुनैद ने इन दोनों आरोपितों में से एक को अपनी सीट पर बिठाया था। गिरफ्तारी के बाद पता चला कि पहला आरोपी पचास वर्ष का अधेड़ था वह दिल्ली सरकार के हेल्थ डिपार्टमेंट में फूड इंस्पेक्टर है। दूसरा आरोपी दिल्ली जल बोर्ड में काम करता है।

पुलिस रिपोर्ट के मुताबिक हमेशा की तरह उस दिन भी ट्रेन में बहुत भीड़ थी। भीड़ होने की वजह से 31 वर्षीय फूड इंस्पेक्टर और दिल्ली जल बोर्ड कर्मचारी जुनैद और उनके भाइयों के पास गए और उनसे सीट पर बैठने देने को कहा। जुनैद ने 50 वर्षीय दिल्ली जल बोर्ड अधिकारी को अपनी सीट पर बैठने को कहा, लेकिन इससे इंस्पेक्टर को गुस्सा आ गया। इसके बाद इंस्पेक्टर और दिल्ली जल बोर्ड अधिकारी ने मिलकर जुनैद और उसके भाइयों को अपशब्द कहने शुरू कर दिए। जब सभी भाइयों ने इसका विरोध किया तो दोनों गुटों के बीच झड़प शुरू हो गई। आरोपियों में से एक ने बताया कि झगड़ा शुरू होते ही उसके पीछे खड़ा एक युवक अचानक बीच में आया और जुनैद को पीटना शुरू कर दिया। पुलिस के मुताबिक उसके बाद जुनैद और उसके भाई मोहसिन ने फोन कर अपने परिजनों

को बल्लभगढ़ बुलाया। बल्लभगढ़ स्टेशन पर जुनैद के जानने वाले 3 लोग चढ़े जिसमें उसका एक रिश्तेदार शाकिर भी था, दूसरी तरफ आरोपियों के पक्ष के 4 लोग भी ट्रेन में चढ़े। मोहसिन बल्लभगढ़ स्टेशन पर ही उतर गया, ताकि अपने पिता को घटना की जानकारी दे सके। इसी बीच, दूसरी बार दोनों गुटों के बीच झगड़ा शुरू हो गया। शाकिर ने आरोपियों में से एक युवक पर अपनी बेल्ट से वार किया। हालांकि, आरोपियों में से एक ने जुनैद पर चाकू से हमला कर दिया। पुलिस के मुताबिक इसी संदिग्ध की तस्वीर बाद में सीसीटीवी में देखी गई। फुटेज में वह मोटरसाइकिल पर जाता दिख रहा है और उसके पीछे 2 और लोग बैठे दिख रहे हैं। अटॉप्सी रिपोर्ट के मुताबिक जुनैद पर 8 बार चाकू से वार किया गया था और उसकी मौत हो गई।

पुलिस की जांच रिपोर्ट से साफ था कि यह पूरा मामला ट्रेन में बैठने के लिए सीट को लेकर विवाद का एक सामान्य मामला था जिसमें दो गुटों के लोग उलझ गए जिसमें एक की मौत हो गई। दोनों आरोपी को पुलिस ने अगले ही दिन हिरासत में ले लिया। मामला ट्रायल कोर्ट में जाने से पहले ही मेनस्ट्रीम मीडिया ने अपना फैसला दे दिया। इस पूरे मामले को मीडिया ने हिंदू-मुस्लिम रंग देते हुए खबर इस स्तर तक चलाया कि जुनैद की दाढ़ी पकड़ कर उसे मजहब के नाम पर अपमानित किया गया। इस बार टीवी पर अवार्ड वापसी की रिपोर्ट तो सामने नहीं आई, लेकिन इसे असहिष्णुता के रंग में रंग कर लगातार पेश किया गया। कानून और पुलिस के रिकार्ड को धता बता कर मीडिया लगातार यह साबित करती रही कि जुनैद चूंकि मुसलमान था, इसलिए ट्रेन में लोगों ने उसे अपमानित किया और विरोध करने पर उसकी हत्या कर दी। माहौल ऐसा बनाया गया मानो देश में हिंदू मुस्लिम उन्माद में सरकार का मौन सहयोग हिंदू अतिवादियों के प्रति है। मीडिया के दबाव में निचली अदालत, पुलिस रिपोर्ट पर हत्या की वजह को जानते हुए भी अपनी कोई टिप्पणी नहीं की, लेकिन अप्रैल 2012 में पंजाब हरियाणा हाईकोर्ट ने आरोपितों को जमानत देते हुए कहा "यह मामला जाति या मजहब से जुड़ा नहीं है। अदालत ने साफ कहा, इस मामले में कोई तथ्य सामने नहीं आया जो साबित कर सके कि जुनैद की हत्या सुनियोजित तरीके से की गई हो और जानबूझ कर समाज में सद्भाव खराब करने की कोशिश की गई हो। हाईकोर्ट ने साफ कहा कि यह ट्रेन के अंदर महज सीट के लिए कुछ लोगों के बीच झगड़ा का मामला था जो

गाली-गलौज के बाद हिंसा के स्तर तक पहुंच गया, जिसके कारण एक युवक को जान गंवानी पड़ी"। [16] हाईकोर्ट की इस टिप्पणी को सीट के लिए हुई लड़ाई में एक युवक की जान जाने की घटना को हिंदू-मुस्लिम रंग देने वाली मीडिया ने नजरअंदाज कर दिया। जो विमर्श उसने समाज में एक बार बना दिया वह बना ही रहा कि ट्रेन में जुनैद की हत्या सिर्फ इसलिए हो गई, क्योंकि वह मुसलमान था। मीडिया का यह संदेश दुनिया में इस रूप में गया कि भारत में सार्वजनिक जगह पर समुदाय की पहचान हो जाने पर लोग एक-दूसरे की हत्या को अमादा हैं। हाईकोर्ट के फैसले के बाद भी मीडिया ने उस विमर्श को नहीं बदला जिसे हिंदू- मुसलमान का रूप दिया गया।

गणतंत्र दिवस के अवसर पर 26 जनवरी, 2018 को उत्तर प्रदेश के कासगंज में तिरंगा यात्रा के दौरान 20 वर्षीय अभिषेक उर्फ़ चंदन गुप्ता की हत्या के मामले देश भर में हंगामा मचा दिया। कई वीडियो की पड़ताल और प्राथमिक जांच के बाद पुलिस इस निष्कर्ष पर पहुंची कि एक गुट के लोग उस दिन की सुबह तिरंगा यात्रा लेकर लोग कासगंज के मुस्लिम इलाके में गए। वहां आपसी नोकझोंक के बाद अपनी मोटरसाइकिल छोड़कर लोग भाग गए। बाद में तैयारी संग वे फिर तिरंगा लेकर उसी इलाके में गए जहां हुई गोली चलने से चंदन की मौत हो गई। वारदात के बाद चंदन के गमगीन पिता सुशील गुप्ता ने बेटे को याद करते हुए बस यही सवाल करते रहे, "क्या तिरंगे के सम्मान का इनाम गोली और मौत है। यदि ऐसा है तो मुझे भी गोली मार दो।"

स्थानीय लोगों के मुताबिक चंदन सामाजिक कामों में बढ़-चढ़कर हिस्सा लेता था। चंदन की उम्र भले ही कम थी, लेकिन उसकी रुचि समाजिक सरोकार में थी। दिलचस्प ये कि 26 जनवरी को दो गुटों के बीच आपसी झड़प हिंदू-मुस्लिम में बदल चुका था। दिलचस्प यह कि दो गुटों में बटे उत्तर प्रदेश के एक कस्बे की तरह ही भारतीय मीडिया भी इस मामले में दो वर्गों में बंट कर इसकी रिपोर्टिंग करने लगी। एक गुट जहां 20 साल के चंदन को बेरोजगार बताकर यह साबित करने का प्रयास किया कि ऐसे लोगों ने मुसलमानों को उकसाया जिसके कारण गोलीबारी में चंदन की मौत हो गई। मीडिया के इस गुट ने अपना फैसला भी दे दिया कि गोली हिंदूवादी गुटों ने आपस में ही चलाई। मीडिया का दुसरा गुट यह साबित करने में लग गया कि चंदन और उसके साथी वंदे मातरम का नारा लगा रहे थे जो इलाके

के मुसलमानों को पसंद नहीं था। चंदन मामले में हिंदू और मुस्लिम में बंटी मीडिया सच के तलाश से दूर अपने तय निष्कर्ष पर पहुंचने को आतुर थी। दिलचस्प यह कि जुनैद और अखलाक की हत्या को अभिव्यक्ति की आजादी पर हमला बताने वाली मीडिया गिरोह चंदन की हत्या के मामले में संवेदना खो चुकी थी।

31 जनवरी, 2018 की शाम दिल्ली के ख्याला इलाके में अंकित नामक युवक की हत्या ने समाज के हर उस व्यक्ति को झकझोर कर रख दिया है जो मानवता में यकीन रखता है। 23 साल के उस फोटोग्राफर युवक की सरेराह उसकी मां के सामने बकरे की तरह गला रेत कर हत्या कर दी गई। यह सब बस इसलिए, क्योंकि अंकित मुस्लिम धर्म की एक युवती सलीमा से प्रेम करता था। सलीमा के परिवार वालों को यह पसंद नहीं था। इसीलिए सलीमा के भाई और पिता ने सलीमा के मामा संग मिलकर बीच बाजार में अंकित को पकड़ कर उसका गला रेत दिया। मजहब की यह दीवार आधुनिकता का दंभ भरने वाले हमारे समाज पर बहुत जोर का तमाचा है।

जिस दिन अंकित की हत्या हुई थी, उस दिन सलीमा के पिता ने पुलिस को कॉल की और कहा कि उन्होंने उस लड़के को पकड़ लिया है जो उनकी लड़की को छेड़ रहा था। जब पुलिस वहां पहुंची तो देखा कि लड़की की मां के हाथ में खून से सना हुआ चाकू है। लड़की की मां पुलिस के सामने खुद को पीड़ित बताने की कोशिश करती है और यह बताती रही कि अंकित ने उनकी बेटी को अगवा कर लिया था और जब हमने उसे छुड़ाने की कोशिश की तो अंकित ने हम पर हमला किया। इसके बाद एक दूसरी कॉल पुलिस के पास आती है जिसमें यह बताया गया कि अंकित की मौत हो चुकी है।

पुलिस ने बताया कि सारी घटना लगभग 35 मिनट में घटी जब लड़की के माता-पिता ने उसे खोजना शुरू किया। हालांकि, लड़की ने पुलिस को बताया कि अपनी मां और भाई से नोकझोंक के बाद उसने 7.45 पर अपना घर छोड़ दिया था और उसने घर का दरवाजा बाहर से बंद कर दिया था, ताकि उसका भाई पीछा न कर सके। शाम में आठ बजकर बारह मिनट पुलिस को पहली कॉल आती है जिसमें सलीमा के पिता ये आरोप लगाते हैं कि अंकित उनकी बेटी को छेड़ रहा था और उन्होंने उसे रंगे-हाथ पकड़ लिया है। आठ बजकर सत्रह मिनट पर पुलिस मौके पर पहुंचती है और सलीमा की मां से पूछताछ करने लगती है। सलीमा की

मां को स्थानीय लोगों ने पकड़ रखा था। पुलिस ने बताया कि शुरू में महिला ने अंकित पर ही आरोप लगाना चाहा, लेकिन बाद में स्वीकार किया उसके पति और भाई ने ही अंकित की हत्या की है। देर रात तक पुलिस ने सभी आरोपियों को पकड़ लिया जिसने पुलिस के सामने अपना गुनाह कबूल कर लिया।

सोशल मीडिया के दौर में राष्ट्रीय राजधानी में हुई इस जघन्य और अमानवीय वारदात ने पूरे देश को हिला कर रख दिया। मजहब के नाम पर नफरत का यह पैमाना सोशल मीडिया की सुर्खियों में था। लेकिन जुनैद, अखलाक की हत्या को मजहब के नाम पर सनसनी बनाकर बेचने वाली मेन स्ट्रीम मीडिया अबकि बार इस मामले को हिंदू-मुस्लिम रंग में रंगे जाने का विरोध कर रही थी।

सोशल मीडिया पर सवाल किया जाने लगा कि मजहब के नाम पर राष्ट्रीय राजधानी में हुए इस वारदात के बाद कोई अवार्ड वापसी गैंग सामने क्यों नहीं आया? मेन स्ट्रीम मीडिया ने उन अवार्ड वापसी गैंग से कभी सवाल क्यों नहीं किया? कथित बुद्धिजीवी और मीडिया के इस दोहरे व्यवहार के खिलाफ आम आदमी का आक्रोश सोशल मीडिया पर साफ दिख रहा था। सोशल मीडिया पर मेन स्ट्रीम मीडिया और अवार्ड वापसी वाले बुद्धिजीवियों से लगातार सवाल किया जा रहा था जिसका किसी के पास कोई जवाब नहीं था।

अखलाक व जुनैद की हत्या पर की गई रिपोर्टिंग के स्क्रीन शॉट्स लेकर अंकित की हत्या के मामले में उसकी रिपोर्टिंग से तुलना कर साबित किया जा रहा था कि साख के इस पेशे में बैठे लोगों ने कैसे समाज को बांटने का काम किया। बदलते दौर में मीडिया राजनीतिक दलों की तरह समाज को आपस में बांटकर एक समूह विशेष का प्रतिनिधि बनने की होड़ में शामिल होने लगी, ताकि टीआरपी की रेस में उसका वजूद कायम रह सके। उसने पत्रकारिता के उस मूलभूत सिद्धांत की अवहेलना की जिसमें जाति या मजहब के नाम पर फैले उन्माद के समय पीड़ित या अपराधी पक्ष की जाति या मजहब के नाम के खुलासे की मनाही रही है। मेनस्ट्रीम मीडिया ने समाज का वॉच डॉग होने की अपनी जिम्मेदारी, ईमानदारी और नैतिक होने के अपने चरित्र से समझौता करने का सिलसिला जारी रखा। तब तक, जब तक जनता उससे सवाल नहीं कर रही थी। अब मेनस्ट्रीम मीडिया से लगातार सवाल किया जाने लगा है। मीडिया को *वॉच डॉग* कहा जाता था। अपने प्रहसन काल में मीडिया खुद पर कालिख पोतते हुए जिम्मेदारी से भागने लगी तो

सोशल मीडिया मेन स्ट्रीम मीडिया के लिए *व़ॉच डॉग* की भूमिका में आ गई। यह सब इसलिए, क्योंकि आम आदमी के हाथ में मोबाइल ने सूचना क्रांति के इस युग में उसे असीम ताकत दे दी। पल-पल की खबर तो उसके पास होती ही है, खबरों को अपनी सूझबूझ से दुनिया के सामने रखने की हैसियत भी उसके पास है, ऐसे में सवाल करने की मेनस्ट्रीम मीडिया की हैसियत आम आदमी ने हासिल कर ली। यह बदलते दौर में एकतरफा संवाद के बदले दोतरफा संवाद का जरिया बन गया। इस बदलाव को मेनस्ट्रीम मीडिया आज तक नहीं समझ पाया कि अब यह बीते जमाने की बात है कि वह जो दिखाएगा, वही अंतिम सत्य होगा। खेमेबाजी में बंटे होने के कारण वह खुद भी सवालों के घेरे में है। लेकिन, सिर्फ सवाल किए जा रहा है। बदलते वक्त में अपने व्यवहार के कारण कब मीडिया मजाक का पात्र बन गई, उसे एहसास ही नहीं हुआ।

संदर्भ सूची

अध्याय 1

क्रोनी कैप्टलिज्म और लुटियन मीडिया

1 दूरदर्शन पर रू-ब-रू कार्यक्रम में राजीव शुक्ला को दिया सोनिया गांधी का इंटरव्यू..''यू ट्यूब''

वॉच द एक्सक्लूसिव इंटरव्यू सोनिया गांधी विद राजीव शुक्ला

https://www.youtube.com/watch?v=PsJdrSVG004

2. 'जन गण मन की बात' 176वां एपिसोड, प्रधानमंत्री प्रेस कांफ्रेंस से क्यों भागते हैं https://www.youtube.com/watch?v=MUJifsg-PVE

2. [1] 'पीएम नरेंद्र मोदी के इंटरव्यू पर पत्रकार आरफा खानम का नजरिया।

https://www.youtube.com/watch?v=XtsJ4m8e0Vw

3. न्यूज लॉन्ड्री पर मधु त्रेहान शो में राजदीप सरदेसाई का इंटरव्यू पार्ट (कौन सा पार्ट?) 1

https://www.youtube.com/watch?v=UuxV_TCgCto

3. [1] ..वही

3. [2] ..वही

4. 2014 में इलाहाबाद के स्वराज भवन में हेडलाइंस टुडे के लिए राजदीप को दिया सोनिया गांधी का एक्सक्लूसिव इंटरव्यू

4. (1). न्यूज लॉन्ड्री पर मधु त्रेहान शो में राजदीप सरदेसाई का इंटरव्यू पार्ट 1

https://www.youtube.com/watch?v=UuxV_TCgCto

4. (2). 2014 हेडलाइंस टुडे पर सोनिया गाधी का राजदीप को दिया इंटरव्यू

'सोनिया गांधी फुल इंटरव्यू विद राजदीप सरदेसाई' यू ट्यूब।

5. शेखर गुप्ता को एनडीटीवी के बैनर तले 2004 में स्वराज भवन में सोनिया गांधी का दिया इंटरव्यू
   वॉक द टॉक: सोनिया गांधी, फरवरी 2004, यू ट्यूब
6. ..वही
7. अरुण पुरी द्वारा इंडिया टूडे कॉनक्लेव, 9 मार्च, 2018 में सोनिया का इंटरव्यू... '2019 में भाजपा दुबारा सत्ता में नहीं आना चाहिए'। 'यू ट्यूब'
   Won't Let BJP Come Back To Power In 2019, Says Sonia Gandhi At India Today Conclave 2018
8. न्यूज लॉन्ड्री पर मधु त्रेहान शो में राजदीप सरदेसाई का इंटरव्यू पार्ट-1
   https://www.youtube.com/watch?v=UuxV_TCgCto
9. नरेंद्र मोदी: साजिश की कहानी तथ्यों की जुबानी, 'संदीप देव', कपोत मीडिया
9. [1] ... वही
10. न्यूज लॉन्ड्री पर मधु त्रेहान शो में राजदीप का इंटरव्यू पार्ट 1
    https://www.youtube.com/watch?v=UuxV_TCgCto
11. नरेंद्र मोदी: साजिश की कहानी तथ्यों की जुबानी, 'संदीप देव', कपोत मीडिया
12. 'नरेंद्र मोदी वॉकिंग आउट करण थापर इंटरव्यू' सीएनएन आईबीएन, यूट्यूब।

अध्याय 2

कोयला खाती और हवा निगलती मीडिया

1. अन्ना क्रांति, आशुतोष, प्रभात प्रकाशन।
2. बीबीसी हिंदी डाट कॉम 11 दिसंबर, 2010 'नीरा राडिया के आठ सौ टेप और'
2. [1] 'आउट लुक' हिंदी पत्रिका, दिसंबर 2010
3. द हिंदू, 28 जून, 2016, अजय मेहदुदिया की रिपोर्ट
3. [1] बीबीसी हिंदी डॉट कॉम 11 मार्च, 2015
3. [2] फस्ट पोस्ट, 20 दिसंबर, 2014
3. [3] रोजनामा.कॉम, 28 अक्टूबर, 2012,
3. [4] वही
4. दैनिक जागरण, दिल्ली, 10 नवंबर, 2016
5. रोजनामा.कॉम, 28 अक्टूबर, 2012,

6. न्यूज लॉन्ड्री में मधु त्रेहान का राजदीप संग इंटरव्यू पार्ट-2.
https://www.youtube.com/watch?v=UuxV_TCgCto

अध्याय 3

एनडीटीवी और हवाला कारोबार

1. 'एनडीटीवी फ्रॉड,' श्री अय्यर, चैप्टर, RARE PUBLICATION,CHANNAI
2. 'एनडीटीवी फ्रॉड' (लेखक श्री अय्यर) RARE PUBLICATION, CHENNAI
3. वही..
4. एनडीटीवी फ्रॉड (लेखक श्री अय्यर) RARE PUBLICATION, CHENNAI
5. वही
5. [1] वही
5. [2] भड़ास 4मीडिया डॉटकॉम 24 अक्टूबर, 2017, बरखा दत्त ने उठाए सवाल.....
6. एनडीटीवी फ्रॉड (लेखक श्री अय्यर) RARE PUBLICATION, CHENNAI
7. वही
8. नरेंद्र मोदी: साजिश की कहानी तथ्यों की जुबानी, संदीप देव, कपोत मीडिया
9. 'एनडीटीवी फ्रॉड' श्री अय्यर, RARE PUBLICATION
10. वही..
11. वही
11. [1] वही
12. भड़ास4 मीडिया वेबसाइट को दिया आयकर आयुक्त एसके श्रीवास्तव का इंटरव्यू
https://www.youtube.com/watch?v=c9qG6xDTnes
12. [1] भड़ास4 मीडिया वेबसाइट को दिया आयकर आयुक्त एसके श्रीवास्तव का इंटरव्यू..
https://www.youtube.com/watch?v=AmmbpgiB53I
13. 'एनडीटीवी फ्रॉड' श्री अय्यर, RARE PUBLICATION
14. वही.
15. वही
17. पीएम को लिखी सुब्रमण्यम स्वामी की चिट्ठी..
18. एअर सेल मैक्सिस मामले में पी. चिदंबरम और उनके बेटे कार्ति चिदंबरम के खिलाफ सीबीआई का पूरक आरोप पत्र.एनडीटीवी डॉटकॉम, 19 जुलाई 2018

19. 'एनडीटीवी फ्रॉड' श्री अय्यर, RARE PUBLICATION
20. वही..
21. जनसत्ता डॉट कॉम, 22 जुलाई, 2017, मुंबई, 'एनडीटीवी को आयकर अदालत ने दिया झटका'
22. भड़ास4 मीडिया वेबसाइट को दिया आयकर आयुक्त एसके श्रीवास्तव का इंटरव्यू.. 'एनडीटीवी को खोखला किए जाने की कहानी बता रहे हैं आयकर आयुक्त एसके श्रीवास्तव'
https://www.youtube.com/watch?v=b9Oy-6XIR1Y

अध्याय 4

वेब लड़ाके

1. 21 मार्च, 2018 हिंदी पत्रिका आउट लुक
2. मार्क जुकरबर्ग की फेसबुक पर सफाई 22 मार्च, 2018
3. सूचना प्रौद्योगिकी मंत्री, रविशंकर प्रसाद की प्रेस वार्ता 20 मार्च, 2018
4. मार्क जुकरबर्ग की फेसबुक पर सफाई 22 मार्च, 2018
5. इंडिया स्पीक्स डेली वेबसाइट अप्रैल, 2018

अध्याय 5

सोशल मीडिया से बदलती भारतीय राजनीति

1. 'अन्ना क्रांति' आशुतोष, प्रभात प्रकाशन
2. बीबीसी डॉट कॉम 20 अगस्त, 2012
3. फेसबुक की कहानी, यू ट्यूब
4. बीबीसी डॉटकॉम, बीबीसी विशेष रिपोर्ट 21 जनवरी, 2012
5. आज तक डॉट कॉम, 26 जून, 2017, हरिभूमि डिजिटल, 20 जुलाई, 2017, सोशल मीडिया पर हिट हैं प्रधानमंत्री मोदी
6. न्यूज़ लॉन्ड्री के लिए मधु त्रेहान को दिया राजदीप का इंटरव्यू, यू ट्यूब .
https://www.youtube.com/watch?v=UuxV_TCgCto
7. खबर एनडीटीवी डॉट कॉम 25 जुलाई, 2015, सलमान खां ने याकूब की फांसी पर ट्वीट के लिए माफी मांगी
8. याहू सर्च इंजन पर भी सबसे ज्यादा सर्च किए गए मोदी, आईएएनएस, 2 दिसंबर, 2017

अध्याय 6

मेनस्ट्रीम मीडिया और पूर्वाग्रह से भरी रिपोर्टिंग

1. द प्रिंट के मुख्य संपादक और चेयरमैन शेखर गुप्ता का चारा घोटाला मामलों में लालू को मिली सजा पर संपादकीय. 27 दिसंबर, 2017....क्या निचली जाति के नेता ज्यादा भ्रष्ट होते हैं?
2. 'बंधु बिहारी' शंकर्षण ठाकुर, प्रभात प्रकाशन
3. 'बंधु बिहारी' शंकर्षण ठाकुर, प्रभात प्रकाशन
4. 'बंधु बिहारी' शंकर्षण ठाकुर, प्रभात प्रकाशन
5. 'द इनसाइड स्टोरी', जोगिंदर सिंह
6. 'बंधु बिहारी' शंकर्षण ठाकुर, प्रभात प्रकाशन
7. नरेंद्र मोदी साजिश की कहानी तथ्यों की जुबानी, संदीप देव, कपोत मीडिया
8. वही..
9. वही..
10. कपिल सिब्बल का मोदी पर आरोप, पीटीआई, भाषा,जनसत्ता 18 अप्रैल
11. हलफनामा बदला गया, भाषा, जनसत्ता 1 जून, 2016
12. नवभारत टाइम्स.कॉम 16 अप्रैल, 2018. मक्का मस्जिद केस: असीमानंद समेत सभी आरोपी बरी
13. 27 नवंबर, 2013, अमर उजाला, दिल्ली. 'सामने आया तेजपाल और पोंटी चड्डा कनेक्शन'।
14. नरेंद्र मोदी: साजिश की कहानी, तथ्यों की जुबानी, संदीप देव, कपोत मीडिया
15. द वायर, 16 अगस्त, 2017, 'रोहित बेमुला दलित नहीं थे और निजी कारणों से की आत्म हत्या : रिपोर्ट'
16. नवभारत टाइम्स, 18 अप्रैल, 2018, चंडीगढ़, जुनैद हत्याकांड, हाईकोर्ट ने कहा यह मजहब का मामला नहीं

□□□

यह पुस्तक सन् 2001 के दौर में चौबीस घंटे के चैनलों की शुरूआत के बाद भारतीय पत्रकारिता के बदलते स्वरुप को समझने का एक प्रयास है। लोकतंत्र में चौथे स्तंभ की जिम्मेदारी क्या रही है और एजेंडा के तहत पत्रकारिता के जुनून में क्या जिम्मेदारी निभाई गई है, यह किताब उसी पर एक तथ्यात्मक रिपोर्ट है। सोशल मीडिया के दौर में मेनस्ट्रीम मीडिया कहां है और उसके लिए चुनौती क्या है? इन चुनौतियों के सामने उसने संघर्ष किया या समर्पण, इस पर चर्चा जरुरी है। पत्रकारिता के छात्र के लिए भी यह समझना जरुरी है कि पत्रकारिता के इतिहास को जानकर उसके वर्तमान हालात से आंखें नहीं मूंदी जा सकती हैं।



मनीष ठाकुर 20 साल से पत्रकारिता में सक्रिय हैं। सन् 2000 में दिल्ली के जामिया मिल्लिया से मास कम्यूनिकेशन करने के बाद देश के प्रतिष्ठित हिंदी दैनिक राष्ट्रीय सहारा, अमर उजाला एवं दैनिक जागरण में अपराध और अदालत की रिपोर्टिंग। 2005 से 2019 तक टीवी पत्रकारिता में अहम भूमिका निभाई। इस दौरान बीएजी मीडिया हाउस द्वारा स्टार न्यूज के लिए बनाए जाने वाले चर्चित क्राइम शो 'सनसनी' टीम की अगुवाई की। न्यूज चैनल 'पी 7' के लिए सुप्रीम कोर्ट, सीबीआई, गृहमंत्रालय से लेकर संसद की कार्यवाही की रिपोर्टिंग करते हुए सरकार के घपले घोटालों को लेकर निर्भीकतापूर्वक पत्रकारिता की। टीवी पत्रकारिता के बदलते स्वरुप को भांपते हुए इन्होंने तय किया कि आगे नौकरी नहीं करेंगे। नवंबर 2019 से लाइव बुलेटिन के जरिये जनता से सीधे संवाद की पत्रकारिता आरंभ की। इनका THE MANISH THAKUR SHOW के नाम से YOU TUBE चैनल है। मौलिक पुस्तक लेखन के क्षेत्र में यह इनका प्रथम प्रयास है।

KAPOT

COVER DESIGN BY : MAHENDER SINGH

www.kapot.in
ISBN 978-81-929016-5-7
9 788192 901657
K A P O T
MRP: ₹199/- in India
US $20 out of India